राजस्थान मे स्वतंत्रता संघर्ष

सम्पादक
जहूरखा मेहर

जगदीशसिंह गहलोत शोध संस्थान
जगदीशसिंह गहलोत मार्ग, मेडती दरवाजा, जोधपुर

प्रमुख वितरक
हिन्दी साहित्य मंदिर
जगदीशसिंह गहलोत मार्ग,
मेड़ती दरवाजा, जोधपुर–342 002

प्रकाशन वर्ष 1991
मूल्य 60 00 रुपये (साठ रुपये)

मुद्रक
भारत प्रिण्टर्स (प्रेस)
जालोरी गेट बारी, जोधपुर



(1896 ई०—1958 ई०)

राजस्थान के इतिहास, साहित्य
एव सस्कृति को उजागर करने के
लिए आजीवन सघर्षशील रहने वाले
श्री जगदीशसिंह गहलोत
की पावन स्मृति मे सादर समर्पित—

जहूरखां मेहर
रीडर, इतिहास विभाग,
जोधपुर विश्वविद्यालय, जोधपुर

सम्पादकीय

कर्नल जेम्स टाड तथा अन्य पाश्चात्य विद्वानो ने राजस्थान के इतिहास से सम्बन्धित शौर्य और बलिदान की प्रशंसा कर आगे आने वाले लेखको को एक विशेष मार्ग की ओर अग्रसर कर दिया। यह दुर्भाग्य की बात है कि टाड जैसे पाश्चात्य विद्वानो के पदचिह्नो का अनुसरण कर हमने राजस्थान के इतिहास को केवल मध्य युगीय वीरता और युद्धो के घेरे की उहापोह तक ही सीमित कर दिया है।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात इतिहास लेखन की दिशा म पर्याप्त प्रगति हुई है किन्तु स्वतन्त्र्योत्तर तीन दशको तक अग्रेज विरोधी भावनाओ का केन्द्र बिन्दु मान कर स्वतन्त्रता आन्दोलन का इतिहास लिखन के उल्लेखनीय प्रयास नगण्य ही हुए। हाँ, जोधपुर, जयपुर व मेवाड जसे बडे राज्यो म घटित घटनाओ को उजागर करन के प्रयास यदा कदा होते रहे, किन्तु समूचे वतमान राजस्थान को एक इकाई मान कर इस क्षेत्र मे हुए स्वतन्त्रता सघर्ष की ओर विशेष ध्यान नही दिया गया। इस दृष्टि से दो प्रयत्नो को अपवाद माना जा सकता है—एक नाथूराम खडगावत की पुस्तक 'राजस्थान्स रोल इन दी स्ट्रगल आफ 1857 तथा दूसरा सुमनेश जोशी लिखित 'राजस्थान के स्वतन्त्रता सग्राम के सेनानी। गत कुछ वर्षों से, विशेषत 1985 म कॉग्रेस शताब्दी समारोह की आयोजना तथा सरकारी गर सरकारी सस्थानो की ओर से विशेष आग्रह के पश्चात विद्वानो ने इस दिशा म कदम उठाने आरम्भ किये हैं।

पाश्चात्य विद्वानो द्वारा डाले गये भुलावे के साथ साथ राजस्थान मे स्वतन्त्रता सग्राम के इतिहास के सम्बन्ध म अनेक अन्य कठिनाइया भी रही। विषम भौगोलिक दशाओ के कारण तुर्क, मुगल तथा अग्रेज भारत के अन्य भू भागो की तुलना म कई वर्षों पश्चात राजस्थान मे पहुँच सके तो साथ ही स्वतन्त्रता सग्राम जसी महती घटनाओं का सूत्रपात भी अपेक्षाकृत देरी से हुआ। अनेक कारणो म यह क्षेत्र अंग्रेज विरोधी आन्दोलनकारियो के लिये उपयुक्त क्षेत्र था भी नही।

के प्रथम स्वाधीनता संग्राम में राजस्थान ने भी अन्य भारतीय प्रदेशों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर ठोस तथा कारगर कदम अवश्य ही उठाये।

स्वतन्त्रता आन्दोलन के दौर में देश के प्रभावशाली जन नेताओं का राजस्थान में आगमन भी यदा कदा ही होता जिससे उनके व्यक्तित्व तथा विचार राजस्थान के जन मानस को झकझोर कर वांछनीय प्रेरणा और बल प्रदान नहीं कर सके। नेताजी सुभाषचन्द्र बोस वायुयान से जाते हुए एक बार जोधपुर हवाई अड्डे पर केवल कुछ समय के लिये रुके किन्तु उनके इस आगमन के सम्बन्ध में अनेक किंवदंतियां इस क्षेत्र में आज तक प्रचलित हैं। राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी सिंध जाते हुए लूणी रेल्वे स्टेशन से गुजरे तब ग्रामीण अंचलों तक के लोग हजारों की संख्या में 'गांधी बाबा' के दर्शनार्थ लूणी की ओर उमड़ पड़े। जनता में असीम उत्साह विद्यमान था किन्तु राष्ट्रीय आंदोलन में उसका समुचित उपयोग नहीं किया जा सका।

पश्चिम में पसरे हुए मरुस्थल तथा दक्षिण पूर्व के पहाड़ी क्षेत्रों में बिखरे हुए ग्रामीण अंचलों में निवास के कारण राजस्थान की अधिकांश जनता रूढ़िवादी, अशिक्षित और अनेक सामाजिक कुप्रथाओं से जकड़ी हुई थी। इस प्रकार के परम्परावादी लोगों में स्वायत्त शासन की इच्छा जागृत करना अथवा उसे विदेशी दासता की जंजीरें तोड़ने हेतु प्रेरित प्रोत्साहित करना निःसन्देह अत्यन्त ही दुष्कर कार्य था। रेल, डाक तार व्यवस्था का समुचित विकास न होना, गांवों का सड़कों द्वारा नगरों से जुड़ा न होना समाचार पत्रों का अधिक प्रभावी न होना आदि कारणों ने जोधपुर जयपुर व उदयपुर जैसे नगरों में यदा-कदा स्वायत्तता व स्वतन्त्रता प्राप्ति के उद्देश्य से घटित होने वाली घटनाओं को व्यापक जन आधार न बनने दिया। सामन्ती यातनाओं अथवा जागीरी जुल्मों ने भी अन्य प्रान्तों की तुलना में यहाँ के स्वतन्त्रता सेनानियों के लिये कई गुना अधिक कठिनाइयां उत्पन्न की

उपरोक्त परिस्थितियों के परिणामस्वरूप बहुधा यह प्रश्न उठाया जाता है कि अजमेर मेरवाड़ा को छोड़ कर शेष राजस्थान ब्रिटिश शासन के आधीन था ही नहीं तब यहाँ कैसा स्वतन्त्रता आन्दोलन? ब्रिटिश साम्राज्य के साथ सम्पन्न संधियों के पश्चात कहने मात्र के लिये देशी राजा अंग्रेजों के मित्र थे। वास्तव में अंग्रेज न केवल राज्यों के प्रशासन में हस्तक्षेप करते थे बल्कि देशी राजाओं की स्थिति अधीनस्थ से अधिक नहीं थी। रियासतों पर पूर्ण ब्रिटिश नियन्त्रण स्थापित था। इस प्रकार राजस्थान के स्वतन्त्रता सेनानियों की कठिनाइयां अन्य क्षेत्रों में अपने समकालीनों की तुलना में अधिक थीं। राजाओं की संरक्षक ब्रिटिश हुकूमत निरंकुश राजाओं तथा दमनकारी सामन्तों को एक साथ ललकारने की सामर्थ्य रखने वाले ही यहां स्वतन्त्रता हेतु जहांगहद का शंखनाद कर सकते थे। लाग बाग, बेठ बेगार आदि के कारण हुए संघर्षों, सामन्ती अन्याय के विरुद्ध आवाज उठाने वालों के प्रयत्नों, निरंकुश एवं स्वेच्छाचारी शासन के स्थान पर स्वायत्त शासन की मांग और अंग्रेज विरोधी प्रयासों को ही व्यापक दृष्टि रख कर स्वतन्त्रता हेतु संघर्ष स्वीकार करना अनुपयुक्त नहीं होगा।

राजस्थान के स्वतन्त्रता सेनानियों की भांति इस आंदोलन के इतिहास लेखकों का कार्य भी अपेक्षाकृत अधिक उलझा हुआ है। देशी रियासतों में आजादी के मतवालों के क्रिया कलापों को सुरक्षित रखने के उद्देश्य से लिपिबद्ध करने की इच्छा का नितान्त

ग्रभाव था। ग्रत स्वतत्रता सग्राम का इतिहास लिखने के लिये विश्वसनीय साधना का ग्रभाव स्वभाविक ही है। इस सघष के ग्र तिम छोर के ग्रनेक सेनानी ग्रब तक विद्यमान है किन्तु उनके द्वारा बताये गये सस्मरणो मे यदा कदा भिन्नता नई जटिलताएँ उत्पन्न कर देती है।

प्रस्तुत पुस्तक के चार ग्रध्यायो म 1857 से 1947 तक राजस्थान म स्वतत्रता प्राप्ति हेतु की गई जद्दाजहद का प्रमाणिक विवरण प्रस्तुत करन का प्रयत्न किया गया है। प्रथम ग्रध्याय राजस्थान म 1857 की क्राति से सम्बन्धित है। श्री नाथूराम खडगावत तथा डॉ० प्रकाश व्यास ने इस दिशा मे उल्लेखनीय काय किया है। मैंने राजस्थान मे 1857 क स्वतत्रता सग्राम के कारणो को नई तरह से बताने का यत्न किया है ग्रौर मुझे पूण विश्वास है कि इस क्राति मे डिंगल कवियो न ग्रत्यन्त ही महत्वपूण भूमिका ग्रदा की थी।

द्वितीय ग्रध्याय म मजे हुए इतिहास लेखक श्री सुखवीरसिंह गहलोत न 'राजस्थान म स्वतत्रता ग्रान्दोलन' म ग्रपने वणन का केवल प्रजा मण्डल तथा राजस्थान सेवा सघ की गतिविधियो तक ही सीमित नही रखा। कॉंग्रेस की स्थापना, गोलमेज सम्मेलन, बटलर कमीशन, साइमन कमीशन, नरेन्द्र मण्डल के निर्माण राजपूताना मध्य भारत सभा जसे राष्ट्रीय घटनाक्रम के साथ राजस्थान की घटनाग्रो का तारतम्य स्थापित करन का प्रयास किया है। ग्रपने विवरण के समथन मे श्री गहलोत ने जगह जगह प्रमाणिक साक्ष्यो के हवाले भी दिये है।

तीसरा ग्रध्याय किसान ग्रान्दोलन से सम्बन्धित है। ग्रारम्भ स ही राजस्थान ग्रामीण ग्रचलो मे बिखरा हुग्रा है इसलिये प्रदेश की ग्रधिकाश जनसख्या भी गाँवो मे निवास करती है। केवल छोटे छोटे धन्धो म व्यस्त कुछ लोगो को छोड कर शेष सभी की ग्राजीविका कृषि पर निभर है। डॉ० रामसिंह सोलकी ने गहरी सूझ स किसानो की वास्तविक दशा का चित्रण किया है। ग्राजादी पूव के किसानो की समस्याग्रो मे ही बिजोलिया, शेखावाटी, ग्रलवर, बीकानेर तथा मारवाड मे हुए किसान ग्रान्दोलनो के बीज निहित थे। विद्वान लेखक ने विश्वसनीय साधनो के बल पर कृषक ग्रान्दोलनो का प्रमाणिक वणन प्रस्तुत किया है।

दक्षिण पूर्वी राजस्थान के पहाडी क्षेत्रो के भीलो की कठिनाइयो, उनके जीवन से जुडी कुरीतियो तथा इन समस्याग्रो के निराकरण के प्रयत्नो का लेखा जोखा श्रीमती मजु जन ने ग्रत्यन्त ही प्रभावशाली ढग से किया है। गोविंदगुरु तथा मोतीलाल तेजावत के नेतृत्व मे हुए भील ग्रान्दोलनो के सम्बन्ध में ग्रभी तक ग्रधिक नही लिखा गया है ग्रत मजु जन द्वारा किया गया भील ग्रान्दोलनो का यह विश्वसनीय विवरण निश्चय ही महत्वपूण है।

वास्तविक मूल्य तो पाठक ही निर्धारित करेंगे किन्तु मैं ग्राशा रखता हूँ कि इस पुस्तक की सामग्री जिज्ञासु पाठको तथा गम्भीर शोधकर्ताग्रो के लिये एक समान रुचिकर सारगर्भित तथा उपयोगी सिद्ध होगी।

सिवाची गेट के भीतर
सिंधियो का बास, जोधपुर

जहूरखाँ मेहर

अनुक्रमणिका

प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम 1857

मध्यकाल मे राजस्थान आन-बान वाला क्षेत्र रहा। यहा के सूरमाओ ने शौय और बलिदान के नये नये कीर्तिमान स्थापित किए। आक्रमणकारी राजस्थान की ओर आने से कतराते थे। इसलिये यह तथ्य महत्वपूण हो जाता है कि इस बलिदानी प्रकृति वाले राजस्थान ने पेरामाउण्ट पावर का आश्रय क्यो लिया ? इस प्रश्न का हल ढूढने के लिये तत्कालीन परिस्थितियो का विश्लेषण करने पर कई तथ्य उजागर होते ह। अठारवी शताब्दी के अन्तिम छोर तथा उन्नीसवी के प्रारम्भिक वर्षो मे राजस्थान मे ऐसी उठक-पटक मची कि यहा के राजा-राणा हडबडा कर अंग्रेजो की गोद मे जा बैठे। औरगजेब के पश्चात मुगल शासक निरन्तर निर्बल होते गये। राजस्थान पर भी मुगलो की निर्बलता का प्रभाव पडा। सर यदुनाथ सरकार ने लिखा "समस्त राजस्थान एक ऐसा अजायबघर बन गया जिसके पिंजरो के न तो कही दरवाजे ही थे और न ही पहरेदार।[1] मराठो के निरन्तर आक्रमण और जुल्म बढने लगे। उस समय यहाँ उत्तराधिकार के युद्ध भी बहुत अधिक हुए।[2] कभी एक पक्ष मराठो को अपने समर्थन मे बुला लाया[3] तो कभी दूसरे पक्ष ने पिण्डारियो का आश्रय लिया।[4] मराठो की लगातार लूट से अधिकाश रजवाडो के कोष रिक्त हो गए। राज्य कोष की रिक्तता ने सैनिक निबलता को जन्म दिया। इस अव्यवस्था का लाभ उठाकर सामन्त भी स्वेच्छाचारी होने लगे। इस प्रकार की विपदाओ से घिरे राजाओ ने अंग्रेजो के आश्रय को धन्य भाग्य माना। 1818 ई० तक अधिकाश रजवाडो के अंग्रेजो के साथ करारनामे हो गये।

अंग्रेजो से सधियो होने पर विश्रृंखलित राजस्थान मे एक बार तो व्यवस्था स्थापित हो गई। अगले चालीस वर्षो मे लगभग सभी विपत्तिया दूर हो गई। कुछ तो 1761 के पानीपत युद्ध मे अहमदशाह अब्दाली ने मराठा

शक्ति को कुचल दिया और कुछ रही सही कसर अंग्रेजो न निकाल दी। इस प्रकार कुचले जाने पर मराठे राजस्थान पर आक्रमण करने योग्य नही रह गये। उत्तराधिकार के लिये युद्ध भी समाप्त हो गए। अंग्रेज जिसके पक्षधर बनते उसका शासन निश्चित। अंग्रेजो से सन्धियो से पूव रजवाडो के बीच छोटी छोटी बातो को लेकर होने वाले युद्ध भी रुक गये। सधिया के अनुसार अंग्रेजो के मित्रो के बीच सौहार्द बना रहना आवश्यक था। सामन्ता का प्रभाव भी धीमा पड गया। इस प्रकार सधियो से पूव की लगभग सभी समस्याओं का समाधान हो गया।

प्रारम्भ मे दिल्ली के रेजिडेंट को राजस्थान के रजवाडो की देख-रेख का काय सौपा गया। 1832 ई० मे राजस्थान म राजपूताना रेजिडेन्सी की स्थापना कर एजेन्ट टू गवनर जनरल (ए० जी० जी०) को काय भार सभलाया गया।[5] 1857 मे राजस्थान मे 18 देशी रजवाडे, अजमेर का ब्रिटिश जिला तथा नीमच की छावनी सम्मिलित थे। उदयपुर, जयपुर, जोधपुर, भरतपुर और कोटा पाच स्थानो पर पालिटिकल एजेन्ट नियुक्त थे। नसीराबाद, नीमच, देवली और ऐरनपुरा मे फौजी मुकाम थे। इन फौजी मुकामा मे देशी सिपाही नियुक्त थे। ब्रिटिस अफसरो के आधीन छोटी छोटी फौजी टुकडिया ब्यावर तथा खेरवाडा मे नियुक्त थी जिनमे भील और मेर सैनिक थे। राजपूताना मे कुल पाच हजार के लगभग फौजी थे किन्तु केवल कुछ गिने चुने गोरो के अतिरिक्त सभी देशी सिपाही थे।[6]

1857 की क्रान्ति के समय मारवाड मे मेकमेसन, मेवाड मे मेजर सावस और जयपुर मे कनल ईडन पालिटिकल एजेन्ट थे तथा अजमेर मे जाज पेट्रिक लारेंस कार्यवाहक ए० जी० जी० के रूप मे काय कर रहे थे।[7]

भारत मे 1857 की क्रान्ति का तात्कालिक कारण एनफील्ड राइफल थी जो सब प्रथम क्रीमिया युद्ध मे परखी गई थी।[8] इस राइफल मे एक विशेष प्रकार का कारतूस प्रयोग मे लिया जाता, जिस पर एक कागज चिपका रहता। कारतूस को राइफल मे डालने से पूव सिपाही को अपने दातो से यह कागज हटाना पडता। कहा जाता है कि इस कागज को चिकना रखने के उद्देश्य से इस पर गाय और सूअर की चर्बी लगाई जाती। भारतीय सनिको के मन मे यह बात घर कर गई कि जान बूझ कर उनका धम भ्रष्ट करने के लिये अंग्रेज यह राइफल लाए है। 26 फरवरी 1857 को बहरामपुर मे 19 वी रेजिमेन्ट

ने बखेडा कर दिया। 29 मार्च को 34 वी रेजिमेन्ट के मगल पाण्डे नामक एक ब्राह्मण सिपाही ने बारकपुर छावनी मे कुछ अग्रेज अफसरो पर हमला कर उन्ह जान से मार दिया। 10 मई को क्रान्ति की ज्वालाएँ मेरठ मे भी पहुँच गई। मेरठ के क्रान्तिकारी सैनिक छावनी लूटने के पश्चात् दिल्ली की तरफ रवाना हो गए। देखते देखते समस्त उत्तरी भारत क्रान्ति की चपेट मे आ गया।[9]

19 मई 1857 को राजस्थान के ए० जी० जी० पेट्रिक लारेंस के पास मेरठ की क्रान्ति के समाचार पहुँचे। उस समय वह राजपूताना के सभी पालिटिक्ल एजेन्टो से आबू में विचार विमर्श कर रहा था।[10] शिघ्रातिशीघ्र बचाव के उपाय में उसने राजपूताना के राजाओ के पास फरमान भेजे।[11] अब प्रश्न यह सामने आता है कि अग्रेजो से करारनामे होने के कारण राजस्थान मे शान्ति स्थापित हुई, मराठो व पिण्डारियो की लूट और अत्याचारो से छुटकारा मिला तथा आपसी युद्ध भी समाप्त हो गए। बेचारे लारेंस साहब ने समय रहते आवश्यक कदम भी उठा लिये। तब भी राजस्थान मे क्रान्ति की अग्नि क्यो प्रज्जवलित हो गई। सभी तथ्यो का विवेचन विश्लेपण करने पर राजस्थान मे क्रान्ति के निम्न कारण दिखलाई पडते है—

(1) भूगोल के विद्वानो ने राजस्थान को भिन्न भिन्न भौगोलिक क्षेत्रो मे विभाजित किया है।[12] कुल 63 प्रतिशत भूमि रेतीली।[13] अरावली से पूर्वी क्षेत्र मे स्वय अरावली श्रृखलाएँ दिल्ली से गुजरात तक फैली हुई।[14] विषम भौगोलिक परिस्थितियो के कारण ही राजस्थान आक्रमणकारियो से सुरक्षित रह सका।[15] दिल्ली सल्तनत के सुल्तान, मुगल और अग्रेज पहले भारत के अधिकांश क्षेत्रो को जीतने के पश्चात ही राजस्थान की ओर मुँह करने का साहस बटोर सके। अनेक वर्षो तक आक्रमणो से बचे रहने व जीवन यापन की कठिन परिस्थितियो के कारण यहा के नागरिको मे स्वतन्त्रता प्रेम और स्वाभिमान का विकास हुआ। इसलिये जब कभी आक्रमण होता यहा के लोग अधिक उत्साह से उसका सामना करते। अग्रेजी सत्ता को किसी ने भी हृदय से स्वीकार नही किया था। स्वतत्रता के लिये सहर्ष सब कुछ न्यौछावर करने वाले राजस्थानी वीर अग्रेजी अकुश कब तक सहन करते। विरोध तो होना ही था। यह तो अन्य स्थानो की क्रान्ति ने तुरन्त कार्यवाही के लिये परिस्थितिया उत्पन्न करदी अन्यथा भी राजस्थान तो अपनी स्वतन्त्र प्रकृति के अनुरूप अग्रेजो का विरोध करता ही। इस प्रकार यहा के भूगोल ने लोगो मे

जिस स्वछन्द स्वतन्त्र प्रकृति का विकास किया उसके कारण अंग्रेजो का विरोध तो निश्चित रूप से होना ही था।

(2) प्रारम्भ से ही राजस्थान मे कवियो का यह दायित्व था कि वे राजाओ को युद्ध करने व आक्रमणो का सामना करने के लिये प्रेरित करे। दिल्ली सल्तनत और मुगलो के समय राजस्थान के साहित्यकारो ने सदैव राजाओ को मरने-मारने के लिये प्रेरणा और प्रोत्साहन दिया। वीर रस सदैव ही यहा के कवियो का प्रिय विषय रहा। इस प्रकार प्रेरित प्रोत्साहित करते करते यहा के साहित्य का एक विशिष्ट स्वरूप बन गया। पुरानी राजस्थानी कविताओ का गहराई से अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि कवि और उसकी कविता जैसे युद्ध के घेरे मे बधे हुए थे। फौजो पलटनो के समुद्र उमड पडे, मतवाले हाथियो का चिघाडना, तलवारो के प्रहारो से हाथियो की सू डो का घटाक चटाक कटना, तोप-बन्दूक व घोडो की खुरतालो के प्रहारो से आभे मे गू ज, झण्डो का फरफराना, तलवारो के टकराने से अग्नि की चिन्गारिया उछलना, काले नागो के समान योद्धाओ की फु फकार, भालो-तलवारो के वार से शरीर के टुकडे-टुकडे होना, शरीर से रक्त के फव्वारे छूटना, फेफडा के टुकडे बिखरना, रक्तसनी आतो का पैरो तक लटकना, खून की नदिया बह जाना, बादलो की गडगडाहट के समान तोपो की गजना, कुँवारी सेना से ब्याह रचाना, सिन्धु राग के समुद्र का लहराना, युद्ध क्षेत्र की धूलि से सूर्य का ढक जाना अथवा उसका तेज क्षीण होना, युद्ध के वेग से कच्छप की पीठ का चरमराना, डाढाले की डाढ का कडकना, शेषनाग के फनो का टकराना, हडहडाहट से नारद मुनि का अट्टहास, रक्त से भरी जिह्वाओ वाली यागिनो का तालिया पीट पीट कर उधगड करना, युद्ध के नगारो पर किलकारिया करती कालिका का नृत्य, यमदूतो का कबड्डी खेलना, युद्ध का दृश्य देखने हेतु सूय का रथ रुकना, महेश द्वारा मु डो की माला पहनना, योद्धाओ के साथ शिव द्वारा ताडव नृत्य,[16] योगिनो के खप्पर रक्त से भर जाना, अप्सराओ द्वारा वर मालाएँ लेकर योद्धाओ का स्वागत करना, योद्धाओ के ढिग लग जाना, शरीर के छोटे छोटे टुकडे होकर तलवारो से चिपक जाना आदि आदि।

युद्ध के वर्णन तथा योद्धाओ का प्रेरणा देने की कला पर राजस्थानी साहित्यकारा का परम्परागत अधिकार। यहा साहित्यकारो के मान-सम्मान की भी पुष्ट परम्परा। साहित्य सृजन करो और लाख पसाव, क्रोड पसाव तथा जागीरो के पट्टे प्राप्त करो। अंग्रेजा से सन्धिया के कारण साहित्यकार जुन्च

हो गये। अंग्रेजा को विदेशी बता कर विरोध करने पर स्वय राजाजी के कोप का भाजक बनना पडे। सामन्तो की प्रशसा करना भी व्यर्थ हो गया। सन्धियो से सामन्तो की दशा भी बिगडने लगी थी। अंग्रेजों के मित्र रजवाडो मे युद्ध पर सन्धि द्वारा प्रतिबध लग गया। मुगल-पठान अथवा मराठे-पिंडारी निर्बल हो गये तथा उनके राजस्थान पर आक्रमण पूरी तरह रुक गये। युद्धो के वर्णन मे परम्परागत पारगतता निठल्ली होने लगी। कलमो पर काट चढने लगा तथा पोथी-पानडो के उदई का भख बनने की नौबत आ पहुँची। साहित्यकारो की दशा बिगडने लगी। मन मे उहापोह मच गई। अनेक विचारवान साहित्यकारा को अपने वर्ग की इस हीन दशा का आभास हुआ। उन्होंने अपने वर्ग को चेताया। इस स्थिति से छुटकारे का एक मात्र उपाय अंग्रेजी शासन की समाप्ति दिखलाई पडा। अन्तत अंग्रेजो के विरोध का अन्दर ही अन्दर खदबदता ज्वालमुखी फूटा। बाकीदास और सूरजमल मीसण जैसे बुद्धिमानो को अंग्रेज मातृभूमि का शोषण करते हुए भी दिखलाई पडे। राजस्थानी कलम सदैव ही तलवार से अधिक घातक घाव लगाने वाली रही है। साहित्यकारो ने एक बार अंग्रेजो का विरोध करने की ठान ली तब उन्हे रोकना किसके वश मे था। जोधपुर महाराजा मानसिंह के काव्य गुरु बाकीदास द्वारा कहा गया गीत—

आयो इगरेज मुलक रे ऊपर, आहस लीधा खेचि उरा।
धणिया मरै न दीधी धरती, धणिया ऊभा गई धरा।।
फौजा देख न कीधी फौजा, दोयण किया न खला-डला।
खवा खाच चूडै खावद रै, उण हीज चूडै गई यळा।।
छत्रपतिया लागी नह छाणत, गढपतिया घर परी गुमी।
बल नह कियो बापडा बोता, जोता जोता गई जमी।।
दुय चत्रमास वादियो दिखणी, भोम गई जो लिखत भवेस।
पूगो नही चाकरी पकडी, दीधो नही मरैठा देस।।
वजियौ भलौ भरतपुर वालौ गाजे गजर धजर नभ गोम।
पहिला सिर साहब रौ पडियो, भड ऊभा नह दीधी भोम।।
महि जाता चीचाता महिला, ऐ दुयमरण तणा अवसाण।
राखौ रे किहिक रजपूती, मरद हिंदू की मुसलमान।।
पुर जोधाण, उदैपुर, जैपुर, पह थांरा खूटा परियाण।
आकै गई आवसी आकै, बाके असल किया बग्वाण।।

ठीक बांकीदास के समान 1857 से पूर्व अंग्रेजों का विरोध करने वाले बूंदी के सूरजमल मीसरण ने राजस्थानियों की नींद उड़ाने के उद्देश्य से वीर सतसई की रचना की। उन्होंने देशी राजाओं को अंग्रेजों के विरोध हेतु कवित्त रच कर प्रेरित करने के प्रयत्न भी किये।[17] गीत-कवित्त लिखने के साथ ही सूरजमल मीसरण ने राजाओं को अनेक पत्र भेजकर अंग्रेजों से मातृभूमि को आजाद करने का आह्वान भी किया।[18] जीवनपर्यन्त अंग्रेजों का विरोध करने वाले जोधपुर के महाराजा मानसिंह ने अपनी लेखनी के द्वारा भी अंग्रेजों का विरोध किया।[19] आढा जवानजी,[20] बारहठ दुर्गादत्तजी[21] आढा जादूरामजी,[22] आसिया बुधजी,[23] तिलोकदानजी[24] आढा चिमनजी,[25] गोपालदानजी दधवाडिया[26] लाळस नवलजी[27] शंकरदान सामौर इत्यादि कितने ही साहित्यकारों का उल्लेख किया जा सकता है जिन्होंने 1857 की क्रान्ति का अलख जगाने में अपनी कलम की करामात दिखलाई।

फ्रांसीसी राज्य क्रान्ति के समय रूसो, वाल्टेयर, माटेस्क्यू, दिदरो और कोलीन जैसे विद्वानों तथा रूस की बोलशेविक क्रान्ति से पूर्व मार्क्स, टालस्टाय, गोर्की व दस्तोव्हेस्की आदि विद्वानों ने जो कार्य किया ठीक वही कार्य राजस्थान में 1857 की क्रान्ति से पूर्व यहां के साहित्यकारों ने सम्पन्न किया। राजा से रंक तक के हृदय में अंग्रेजों के लिये विरोध के बीज बो कर 1857 की क्रान्ति के लिये वातावरण तैयार करने का सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य करने का श्रेय इन साहित्य मनीषियों को ही प्राप्त है। दुर्भाग्य से फ्रांस व रूस के विद्वानों की प्रशंसा में लगे इतिहासकारों ने राजस्थान के इन साहित्यविदों की उपलब्धियों की ओर अभी तक ध्यान नहीं दिया है।

(3) क्रांति जैसा महत्वपूर्ण कार्य साधारण जन के सहयोग के अभाव में कभी सफलतापूर्वक सम्पन्न नहीं किया जा सकता। राजस्थान में 1857 की क्रान्ति से पूर्व यहां के लोगों के मन टटोलने से ज्ञात होता है कि आम आदमी ने अंग्रेज सत्ता का विरोध करने के लिये कमर कस रखी थी। लोक गीत आम आदमी के मन का दर्पण माने जाते हैं। लोगों के मन पर अंग्रेजी शासन की कैसी कलुषित छवि अंकित थी इसका साक्ष्य उस समय प्रचलित यह लोक गीत प्रस्तुत करता है —

मोडकी मगरी रो पाणी ढाळी ढाळ ढळियो रे
आवू थारै पा'डा मे अगरेज बड़ियो रे

क काळी टोपी रो वा वा काळी टोपी रो
देस मे छावणिया न्हाखी रे क काळी टोपी रो
देस मे अगरेज आयो काई काई लायो रे
फूट न्हाखी भाया मे वेगर लायो रे
म काळी टोपी रो वा वा काळी टोपी रो
घोडा रोवै घास ने टावरिया रोवै दाणे नै
बुरजा मे ठकराणिया रोवै जामण जाया नै
क रोळो वापरियो वा वा रोळो वापरियो

इस लोक गीत से ज्ञात होता है कि राजस्थान अपने आप मे मगन मस्त था। अंग्रेज न यहा बलपूर्वक घुसपैठ की और प्रसन्न-सन्तुष्ट गाव-ढाणियो को भभकती छावनिया बना डाला। यह अंग्रेज रूपी 'कातरा' (कीडा) यहा के काचगे को कुतरने लगा। यहा की समृद्धि मे सेंध लगा कर विलायत को समृद्ध करने मे जुट गया। भाईयो को एक दूसरे के विरुद्ध भडकाने - लडाने लगा। यहा के बच्चे भूख से बिल-बिलाने लगे। जानवरो के लिये घास-चारा तक नही बचा। सामन्त भी निर्बल हो गये। चारो तरफ अव्यवस्था फैल गई। निरन्तर युद्धो से मरने वालो की सख्या प्रति दिन बढने लगी। घर घर मे मातम छा गया।[28]

जयपुर के राजा पर लोक गीतो मे व्यग-बाणो की वर्षा इसलिये की गई कि उसने साभर अंग्रेजो को दे दिया।

म्हारो राजा भोळो साभर तो दे दीनी अगरेज नै
म्हारा टाबर भूखा रोटी तो मागै तीखै लूण री।[29]

जयपुर मे कप्तान ब्लैक की हत्या का कारण भी यही था कि अंग्रेजो ने साभर हडप लिया।[30] लोग अंग्रेजो से इतनी अधिक घृणा करते थे कि उन्होने डूगजी जवाहरजी जैसे डाकूओ की लोक-गीतो में केवल इसलिये प्रशसा की कि उन्होने अंग्रेजो की छावनी को लूट लिया।[31] बीकानेर के महाराजा रतनसिंह की गीतो मे इसलिये सराहना की गई कि उन्होने जवाहरसिंह को अंग्रेजो को सौपने से दृढतापूर्वक मना कर दिया। जोधपुर के तखतसिंह की आलोचना का कारण केवल यह था कि उसने डूगजी को अंग्रेजो को सौप दिया।[32]

इस प्रकार लोक गीतो से पता चलता है कि लोगो के हृदय मे अंग्रेजो के प्रति घृणा के समुद्र हिलोरे ले रहे थे।

राजस्थानी लोग परम्परावादी-रूढ़ीवादी थे। धर्म को खतरे का आभास होने पर वे सर्वस्व न्यौछावर करने के लिये तत्पर हो जाते। 1857 से पूर्व अंग्रेज, डच, और फ्रांसीसियों ने राजस्थान व समस्त भारत में अपने धर्म का प्रचार-प्रसार करने के प्रयत्न आरम्भ कर दिये। अंग्रेजी स्कूलों, अस्पतालों और अनाथालयों की स्थापना होने लगी थी। अकाल की चपेट में घिरे लोगों की सहायतार्थ अन्न-वस्त्र व आवश्यक वस्तुओं का वितरण कर पादरियों ने धर्म परिवर्तन का जाल फैलाना आरम्भ कर दिया था। इस प्रकार ईसाइयत के प्रचार से आम आदमी रुष्ट हो गया।[33] सती प्रथा को समाप्त करने के अंग्रेजी प्रयत्नों का भी उल्टा असर पड़ा। परम्परागत रीति रिवाजों पर प्रहार से रूढ़िवादी लोग अंग्रेजों के विरोधी बन गये।[34]

इस प्रकार 1857 से पूर्व राजस्थान का आम आदमी अंग्रेजों से घृणा करता था। जनमत ने स्वतन्त्रता संग्राम के सैनानियों को आवश्यक प्रेरणा और बल प्रदान किया।

(4) राजस्थान में अधिकांश रजवाड़ों के संस्थापन काल से ही सामन्तों की शक्ति बहुत बढ़ी हुई थी और राजाओं को उनकी शक्ति पर अंकुश लगाने के लिये अनेक प्रयत्न करने पड़ते थे।[35] मारवाड़ में तो यह कहावत प्रचलित थी 'रिड़मला थाप्या तिके राजा'। राज्य का वास्तविक फौज-बल सामन्त ही थे। अंग्रेजों से राजाओं की संधियों के कारण सामन्तों की शक्ति-प्रतिष्ठा समाप्त हो गई। राजाओं के तख्त के पायों ने सामन्तों के कन्धे छोड़कर अंग्रेजों का आश्रय ले लिया। न तो बाह्य आक्रमणों का भय रहा और न ही रही सामन्तों को खुश रखने की आवश्यकता। राजाओं के सभी कष्टों की एक मात्र रामबाण दवा अंग्रेज सरकार बन गई। स्वयं राजाओं और सामन्तों के बीच झगड़ों का निवारण भी अंग्रेज सरकार ही करती। सामन्त अपने कष्टों का कारण अंग्रेजी सरकार को समझने लगे। बातों-गीतों में प्रशंसित आउवा ठाकुर खुशालसिंह अंग्रेजों का महा वैरी। उसकी मान्यता थी कि अंग्रेजी सरकार उसके विरुद्ध महाराजा तखतसिंह के कान भरती है।[36] उदयपुर का ताजिमी सरदार अजीतसिंह कर्नल जेम्स टाड और महाराणा दोनों का ही विरोधी था। जोधपुर के महाराजा मानसिंह ने अपने सामन्तों की बुरी दशा बना दी तथा अनेकों को विष के प्याले पीने के लिये विवश कर दिया।[37] सलूम्बर ठाकुर केसरीसिंह भी अपने कष्टों का कारण अंग्रेजों को मानता था।[38]

सामन्तो की शक्ति कम करने के उद्देश्य से अंग्रेजी सरकार ने अनेक प्रचलित प्रथाओ को समाप्त करने के प्रयत्न किये। मेवाड मे सलूवर रावत की सहमति से नये महाराणा का अभिषेक होता।[39] यदि मेवाड के महाराणा किसी को गोद लेते तब भी अन्य खास सरदारो के साथ सलूवर रावत की स्वीकृति आवश्यक थी। अंग्रेजी सरकार ने सलूवर रावत के यह अधिकार समाप्त कर दिये। ठाकुरो को शरणागत की रक्षा का अधिकार प्राप्त था।[40] अंग्रेज सरकार ने 'शरणे' का अधिकार भी समाप्त कर दिया। सामन्तो के न्याय सम्बन्धी अधिकार भी समाप्त हो गये। बीकानेर मे तो साधारण न्यायालयो को सामन्तो के मुकदमो की सुनवाई और उनके विरुद्ध कुडकी के फैसले के अधिकार तक मिल गये। ब्रिटिस हकूमत ने लोगो पर से सामन्तो का प्रभाव समाप्त करने के लिये और भी अनेक कदम उठाये। पहले जागीर के निवासी अपने ठाकुर की आज्ञा बिना किसी अन्य स्थान पर जाकर नही बस सकते थे। राजपूताना के ए० जी० जी० आरॅस की इच्छानुसार ठाकुरो का यह अधिकार भी छीन लिया गया। पहले व्यापारी वर्ग पर सामन्तो का दबदबा था। राहदारी और दानापानी जैसे कर सामन्तों द्वारा वसूल किये जाते थे। सामन्ता के नाम से आने वाला माल चुंगी मुक्त होता था। अंग्रेज सरकार ने सामन्तो के इन आर्थिक अधिकारो का खातमा कर दिया।[41]

इस प्रकार अंग्रेजो के कारण सामन्तगण भी आम आदमी की पगत मे आ पहुँचे। सभी वर्गों के सामन्त अंग्रेजो पर खार खा रहे थे तथा किसी ऐसे अवसर की ताक मे थे जबकि वे अंग्रेजी राज को जड से उखाड फेंकें।

(5) राजस्थान के राजाओ ने अंग्रेजो से सन्धियां की तब उनके मन मे मराठो, पिण्डारियो और सामन्तो का डर बैठा हुआ था। अंग्रेजो ने भी इन राजाओ को सान्त्वना देकर समझा बुझा कर सन्धियां की थी। किन्तु धीरे-धीरे अंग्रेज स्वामी बन गये। अनेक राजाओ को आधीनता खटकने लगी। जिस राज्य की नींव को उनके पूर्वजो ने अपने रक्त से सींचा उस पर शासन करने मे अंग्रेजो का कैसा हस्तक्षेप ? दैनिक कार्यो मे अंग्रेजो का बढता हुआ हस्तक्षेप राजाओ के लिये असह्य हो गया। जोधपुर के महाराजा मानसिंह जैसे कई राजा अंग्रेजो से घृणा करने लगे। मानसिंह का शासन समस्त उत्तरी भारत के अंग्रेज विरोधियो का शरण स्थल बन गया। सिंधी शाहजादे और नागपुर के आप्पा साहब भोंसले जैसे अंग्रेजो के शत्रुओ को मानसिंह ने अपने दरबार मे आश्रय दिया।[42] गवर्नर जनरल लार्ड विलियम बंटिंक ने राजपूताना के रा.ज.

को अजमेर मे आयोजित दरबार मे बुलाया किन्तु मानसिंह के बहिष्कार करने से ब्रिटिश हुकूमत ने स्वय को अपमानित अनुभव किया ।

भरतपुर, कोटा, अलवर इत्यादि मे उत्तराधिकारी झगडो मे अंग्रेजो का हस्तक्षेप भी उनके प्रति घृणा का कारण बना । अनेक राज्यो के परम्परागत क्षेत्रो पर अंग्रेजो के अधिकार के कारण वे अंग्रेज विरोधी बन गये । अनेक योग्य शासको को अंग्रेज शोषण करते हुए दिखलाई पडे । अपनी जनता तथा सामन्तो के अंग्रेज विरोधी व्यवहार से भी अनेक शासक प्रेरित प्रोत्साहित हुए होंगे । बुद्धिमान लोगो ने उलाहने भी दिये । सूर्यमल मिश्रण ने वि० स० 1914 मे पीपल्या ठाकुर फूलसिंह को लिखे पत्र मे राजाओ को इस प्रकार लताडा "ये राजा लोग देसपति जमी का ठाकर छँ जे सारा ही हिमालय का गळ्या ई नीसरया सो चाळीस से लै'र साठ सत्तर बरस ताई पाछा पटक्या छै तो भी गुलामी करै छै । पर यो म्हारो वचन राज याद राखोगा क जे अबकै अंगरेज रह्यो तो ईको ही पूरी करसी । जमी को ठाकर कोई भी न रहती । सब ईसाई हो जाती, तीसो दूरन्देसी विचारै तो फायदो कोई कै भी नही, परन्तु आपणो आछो दिन होय तो विचारै और राज जिसो सुहृत म्हारै होय तो बडाई तरीकै लिखी जावै, तीसू थोडी मे बहुत जाण लेसी ।"[43]

यहा यह तथ्य उल्लेखनीय है कि अंग्रेजो के विरुद्ध सशस्त्र क्रान्ति का श्री गणेश हुआ तब राजागण या तो एक दम दुबक गए अथवा अंग्रेजो के विशेष हिमायती सिद्ध होने के प्रयत्न मे जुट गये । जो राजा अंग्रेजो पर खार खा रहे थे वे अवसर आते ही क्यो दूर हट गये । इस प्रश्न की गम्भीरता से छानबीन करने पर दो बाते स्पष्टत सामने आती है । प्रथम तो यह कि देशी राजाओ पर अंग्रेजो की जबरदस्त धौंस जमी हुई थी और दूसरी यह कि वे क्रान्ति की व्यापकता का अनुमान नहीं लगा सके । उन्हे इस बात का तनिक आभास भी न होगा कि समूचे देश मे क्रान्ति की आग लग चुकी है । अंग्रेज उन्हें क्रान्ति सम्बन्धी सूचनाएँ देते नही थे । स्वय राजाओ ने अपनी सडी गली गुप्तचर व्यवस्था के माध्यम से इस दिशा मे कुछ भी जानने का कभी प्रयास तक नहीं किया । क्रान्ति के नेताओ ने भी राजाओ से सहयोग प्राप्त करने के प्रयत्न नही किये । कारण कुछ भी रहे हो यह निश्चित है कि राजाओ की निष्क्रीयता देश के लिये हानिकारक सिद्ध हुई । यदि सभी राजा अपने सम्मान में छोडी जाने वाली तोपों की गिनती बढाने की आशा छोड अपने समस्त सैनिक बल सहित

आजादी के इस सघर्ष मे सम्मिलित हो जाते तो अगरेजो की ऐसी दुर्गति होती कि उनके समाचार लन्दन पहुँचाने वाला भी न बच पाता।

(6) ऐसा नही है कि राजस्थान मे 1857 मे होने वाली क्रान्ति का देश के अन्य भागो मे होने वाली क्रान्ति से कोई सम्बन्ध ही न हो। ब्रिटिश फौज के देशी सिपाहियो के साथ जो सौतेला व्यवहार किया जाता उससे राजस्थान की छावनियो मे स्थित देशी सैनिको के हृदय मे भी आग लगी हुई थी। साधू तथा फकीर वेष मे दिल्ली के असन्तुष्ट सैनिक राजस्थान पहुँचे और गाय-सूअर की चर्बी वाले कारतूसो की सूचना यहा के फौजियो के बीच छोड दी।[44] राजस्थान की छावनियो मे एक यह बात भी बहुत रग लाई कि फौज को जो आटा सप्लाई होता है उसमे मनुष्य की हड्डिया पीस कर मिलाई जाती है।[45] मेवाड के अर्जुनसिह को तो सिपाहियो के सम्मुख बैठ कर इस आटे से बनी रोटिया खाने के लिये बाध्य होना पडा।[46] चर्बी के कारतूसो और आटे मे मिली हड्डियो ने देशी सिपाहियो के हृदय मे घाव कर दिये। उन्होने इसे अपना धर्म भ्रष्ट कर इसाई बनाने का कुचक्र समझा। 1857 के अमर शहीद रिसलदार मेहराबखा,[47] हरिसिंह[48] और बन्दूकची गुल मोहम्मद[49] जैसे आजादी के परवानो के हृदय मे देश को अंग्रेजी आधिपत्य से मुक्त कराने की लालसा हिलोरे ले रही थी।

इस प्रकार राजस्थान मे 1857 की क्रान्ति की जडे कुरेदने पर दिखलाई पडता है कि आम जनता, साहित्यकार सामन्त, राजा और देशी सैनिक सभी ने शोषण करने वाली भूरी जौक से मुक्ति की ठान रखी थी। राजस्थान मे क्रान्ति आकस्मिक रूप से नही हुई। अंग्रेजो के विरुद्ध आक्रोश का पहाड तो बहुत पहले ही खडा था, अन्य स्थानो पर क्रान्ति के समाचारो ने तो बारूद के उस ढेर मे अग्नि लगाने का कार्य ही किया। एक बार अग्नि प्रज्जवलित होने पर तो नसीराबाद, कोटा, उदयपुर, अलवर, देवली, अजमेर, जोधपुर (अउवा), भरतपुर टोंक आदि स्थानो पर ऐसी धमचक मची कि अंग्रेजी साम्राज्य की जडे हिल गई और वह पूरी तरह अव्यवस्थित दिखलाई देने लगा।

आबू मे आराम करते ए० जी० जी० लारेंस के पास 19 मई 1857 को मेरठ की क्रान्ति के समाचार पहुँचे तो एक बार तो वह सकपका गया। इस तथ्य से तो वह पहले ही अवगत होगा कि राजस्थान के लोग अंग्रेजी शासन से तग आ चुके हैं और किसी सुअवसर की तलाश मे है। आने वाली कठिनाईयो के अनेक दृश्य स्वत ही उसे दिखलाई पडने लगे। अपनी ओर से सुरक्षा के

उपाय करने का विचार कर उसने राजाओ को पत्र लिखे कि वे अपने अपने रजवाडो मे सुरक्षा के उपाय करले और बागियो को अपनी सीमा मे प्रवेश न करने दे ।[50]

घबराहट मे ए० जी० जी० साहब अजमेर की स्थिति पर विचार करने लगे। राज्य का सारा कोष और शस्त्र अजमेर मे ही थे।[51] राजस्थान मे अंग्रेज सत्ता का केन्द्र अजमेर ही था अत यदि अजमेर मे ही बखेडा हो गया तो कुछ भी उपाय न हो सकेगा। साहब की बोखलाहट का विशेष कारण यह था कि अजमेर की सुरक्षा के लिये पन्द्रहवी नेटिव इन्फेंट्री की जो दो टुकडिया नियुक्त थी वे हाल ही मे मेरठ से स्थानान्तरित होकर अजमेर पहुँची थी। इस प्रकार एक तो राजस्थान मे पहले ही अंग्रेजो के प्रति घृणा की भावना विद्यमान थी और फिर मेरठ मे क्रान्ति के समाचार मिल गये तब बेचारे साहब का घबराना स्वभाविक ही था। हडबडाहट मे साहब ने अजमेर की सुरक्षा के प्रथम उपाय के रूप मे 15 वी नेटिव इन्फैन्ट्री की दोनो टुकडियो को अजमेर से हटा कर नसीराबाद भेज दी जहा इस इन्फैंट्री के शेष सैनिक तैनात थे।[52] इससे भी घबराहट दूर नही हुई तो छावनी मे तोपें लगवाकर अन्य पलटनो के वफादार सैनिको को मोर्चो पर नियुक्त कर दिया। साहब की अजमेर की सुरक्षार्थ की गई व्यवस्था ने ब्रिटिश राज्य को आफत मे डाल दिया। 15 वी नेटिव इन्फैन्ट्री के सैनिक क्रोधित हो गये। बख्तावरसिंह नामक सैनिक ने अंग्रेज अफसर प्रिचार्ड के पास जाकर पूछा कि "क्या यह सत्य है कि यहा यूरोपियनो की एक फौज बुलाई गई है।" 28 मई 1857 को मुशी मीर बाकर अली ने प्रिचार्ड को बताया कि सभी फौजी इस बात से क्षुब्ध है कि उन्हे जो आटा दिया जाता है उसमे हड्डिया मिला दी जाती है। प्रिचार्ड कोई सन्तोषजनक उत्तर न दे सका किन्तु उसने ब्रिगेडियर के पास रिपोर्ट भेज कर आवश्यक कार्यवाही का आश्वासन दिया। दुपहर दो बजे प्रिचार्ड भोजन करने के पश्चात हाथ साफ कर रहा था कि तोप छूटने की तेज आवाज से उसके कानो के पर्दे झना उठे। घर से बाहर देखने पर उसे जबरदस्त भगदड मची हुई दिखाई दी। पन्द्रहवी नेटिव इन्फैंट्री के सैनिको ने तोपखाने पर अधिकार कर लिया। पहले घुडसेना और बाद मे अन्य सैनिको को तोपखाने की ओर बढने के आदेश दिये गये किन्तु किसी ने इन आदेशो की अनुपालना नही की। तोपखाने से लगातर गोले दागे जा रहे थे। स्पोडिसवुड नामक एक मेजर तोपखाने की ओर बढा किन्तु चार कदम बढाते ही एक दनदनाती गोली ने

उसका भेजा विखेर दिया। कर्नल न्यूबरी के भी टुकडे टुकडे कर दिये गये। छावनी के कनल सहित अनेक अग्रेज अफसर घायल हुए। घबराये हुए अग्रेज अफसर अत्यन्त ही कठिनाई से स्त्रिया व बच्चो को साथ लेकर छावनी से निकल सके। यह अदेशा था कि छावनी के विद्रोही सैनिक अजमेर की ओर बढेंगे। अत छावनी से भगोडे अग्रेजो ने ब्यावर की राह पकडी। छावनी के विद्रोही इच्छानुसार क्रोध प्रकट करने लगे। चर्च और अग्रेज अफसरो के वगलो को आग लगा दी। माल-असवाव कब्जे किया और कपडो व अन्य सामान को मैदान मे एकत्रित कर दिया। छावनी को तहस नहस कर यह सैनिक दिल्ली की ओर रवाना हुए।[53] यहा यह तथ्य उल्लेखनीय है कि यह केवल असन्तुष्ट सैनिको का वखेडा अथवा कोई आकस्मिक घटना नही थी वल्कि पूर्व नियोजित विचार विमर्श के अनुसार अग्रेजी साम्राज्य को समूल नष्ट करने के उद्देश्य से की गई क्रान्ति थी। सव प्रथम तो इस क्रान्ति मे सभी धम-सम्प्रदाय के लोग सम्मिलित थे। फिर यदि छावनी लूटने के पश्चात यह सैनिक लूट के माल सहित अपने अपने घर की ओर चले जाते तव तो वात अलग होती। किन्तु सव ने दिल्ली की ओर प्रस्थान किया और मार्ग मे लडते-भिडते दिल्ली पहुँच गये।[54] वहा पहुँच कर दिल्ली का घेरा डाली हुई एक अग्रेज पलटन पर टूट पडे।[55] इससे यही निष्कर्ष निकलता है कि यह क्रान्तिकारी भारत भूमि को अग्रेजी दासता से मुक्त करना चाहते थे। यह लोग दिल्ली के अग्रेज विरोधी बादशाह वहादुरशाह जफर की सहायतार्थ दिल्ली पहुँचे थे। एक वहुत खटकने वाली वात यह है कि अग्रेज तो अजमेर की सुरक्षा के लिये वहुत ही चिंतित थे और नसीरावाद के क्रान्तिकारी सैनिको ने अजमेर की ओर देखा तक नही। जाते समय यदि अजमेर पर धावा वोल देते तो राजस्थान मे अग्रेजी शासन की कमर ही टूट जाती। उदयपुर मे पालिटिकल एजेट सावस ने लिखा कि दिल्ली के विद्रोहियो ने इन्हे दिल्ली पहुँचने का निमन्त्रण दिया था।[56] यही कारण है कि नसीरावाद के सैनिक शिघ्रातिशिघ्र दिल्ली पहुँचने के लिये आतुर थे। इनके दिल्ली पहुँचने की आतुरता की जानकारी इस तथ्य से भी होती है कि शीघ्र दिल्ली पहुँचने की धुन मे अनेको ने लूटे हुए माल को मार्ग मे ही फेक दिया। भार कम कर जल्दी पहुचने के उद्देश्य से ही लूट का माल फेंका गया था।

नसीरावाद के पश्चात् नीमच मे क्रान्ति की ज्वाला ने अग्रेजी साम्राज्य की नीव हिलाई। नीमच की छावनी नसीरावाद से 120 मील की दूरी पर

स्थित थी। वहा मेरठ के समाचार पहुचने से पहले ही भयभीत कर्नल ग्रेवाट को नसीराबाद मे क्रान्ति की सूचना मिलने पर वह आतंकित हो गया। देशी सिपाहियो को एकत्र कर अनुनय विनय करने लगा। उसने बाईबल पर हाथ रख कर सौगन्ध खाई कि वह देशी सैनिको पर पूर्ण विश्वास करता रहेगा।[57] फिर कुरान तथा गगाजल की शपथ दिलवाकर देशी सैनिको मे आश्वासन लिया कि वे ब्रिटिश सरकार के प्रति वफादार बने रहेगे। 2 जून को घुडसवार मोहम्मद अली बेग ने कर्नल ग्रेवाट के सम्मुख जाकर कहा "अग्रेजो ने सौगन्ध कब निभाई। क्या अवध मे आप जबरदस्ती नही घुसे। फिर केवल हिन्दुस्तानी ही सौगन्ध पर क्या अडे रहे?"[58] उस समय तो ग्रेवाट ने जैसे-तैसे लल्लु-चप्पु कर मोहम्मद अली को शान्त कर दिया। किन्तु अगले दिन प्रात ही नसीराबाद की क्रान्ति के समाचार नीमच पहुच गये। दिन के ग्यारह बजते-बजते छावनी मे भगाभग मच गई। सैनिको ने तोपखाने पर अधिकार जमाया और छावनी को आग लगा दी। क्रोधित सैनिको ने एक अग्रेज सार्जेंट के बच्चो को आग मे फेंक दिया। छावनी के लगभग चालीस अग्रेज जान बचा कर मेवाड की ओर भागे। छावनी के बन्दियो को मुक्त कर, खजाना लूटा और छावनी को आग लगाने के पश्चात् इन देशी सैनिको ने भगोडे अग्रेजो का पीछा किया। डूगला नामक गाव पहुचने पर इन भागते हुए अग्रेजो को कप्तान शावर्स और बख्तावर सिंह के नेतृत्व मे मेवाडी फौज का सरक्षण मिला तब इनकी जान बची।[59]

नीमच के फौजी सूबेदार गुरेसराम को कमाण्डर, सूबेदार सुदेरीसिंह को ब्रिगेडियर और जमादार दोस्त मोहम्मद को मेजर नियुक्त कर बैण्ड-बाजो के साथ रवाना हुए। चित्तौडगढ, हमीरगढ और बनेडा के सरकारी बगलो को लूट कर आग लगाते हुए शाहपुरा, निम्बाहेडा होते हुए देवली पहुचे। देवली मे भी छावनी थी जहा के अग्रेज तो पहले ही भाग गये और देशी सैनिक नीमच के इन सैनिको के साथ मिल गये। यहा से यह लोग टौंक पहुचे जहा जनता ने इनका स्वागत किया। यही कोटा से आए हुए अनेक सैनिक भी इनके साथ हो लिये। टौंक के नवाब के अनेक प्रयत्न करने पर भी वह असफल रहा और उसकी फौज के अनेक सैनिक भी नीमच के इन क्रान्तिकारियो के साथ मिल गये। टौंक से यह सम्मिलित सेना दिल्ली पहुची और वहा अग्रेजो से युद्ध करने वाली एक बडी सेना की सहायता मे जुट गई।[60]

1836 ई मे अग्रेजो ने जोधपुर लीजियन, नामक एक फौज बनाई। मारवाड मे 1857 की क्रान्ति का इस फौज से घनिष्ठ सम्बन्ध है। 18 अगस्त

को जोधपुर लीजियन की एक टुकडी रोवा ठाकुर के बखेडे के समाधान हेतु आबू की जडो मे बसे हुए गाव अनादरा पहुची। 21 अगस्त की रात्रि को लगभग पचास फौजी अनादरा से माउण्ट आबू चढे। प्रात लगभग सवा तीन बजे कोहरे से छाई हुई धुन्द के बीच यूरोपियन सोल्जरो की बैरेको तथा जोधपुर लीजियन के कप्तान हाल साहब के बगले पर गोलिया बरसने लगी। हाल साहब के बगले मे ए जी जी का पुत्र ए लारेन्स भी घायल हुआ।[61]

यद्यपि आबू मे छुट-पुट वारदात ही हुई किन्तु इसकी सूचना जोधपुर लीजियन के प्रमुख केन्द्र ऐरनपुरा पहुँचने पर तो गजब हो गया। 22 अगस्त को ऐरनपुरा मे भी क्रान्ति का बिगुल बज गया और उसी दिन आबू मे गोलियाँ बरसाने वाले सैनिक भी ऐरनपुरा आ पहुँचे। क्रोधित सैनिको ने छावनी और स्टेशन को लूट लिया तथा मेहरबानसिह को अपना जनरल नियुक्त कर अजमेर की तरफ रवाना हो गये। थोडी दूर जाने पर इन्हे समाचार मिला कि किलेदार अनाडसिह के नेतृत्व मे आई हुई जोधपुर के महाराजा तखतसिह की एक फौज पाली मे डेरा डाले हुए है। इस सूचना पर ऐरनपुरा के सैनिको ने सेरवा का मार्ग पकडा और आउवा के पास एक गाव मे पहुँच कर डेरा डाला।[62]

आउवा ठाकुर खुशालसिह चापावत के महाराजा तखतसिह से अनबन। ठाकुर अग्रेजो को झगडे का कारण मानकर उनसे घृणा करता था। यह बात गाव की चौपालो मे आज तक प्रसिद्ध है कि खुशालसिह दस सिर और चौपन हाथो वाली अपनी कुल-देवी सुगाली माता की मूर्त्ति के सम्मुख पूजा हेतु बैठा था तब उसे ऐरनपुर के सैनिको के आगमन की सूचना मिली। तुरन्त सामने जाकर ठाकुर इन सैनिको को गढ मे ले आया। ठाकुर के चाकरो ने समझा कि देवी मा का आदेश होने पर ही ठाकुर क्रान्तिकारियो का स्वागत कर रहा है। आगे से आगे खुसर-पुसर होते-होते यह बात चौपालो तक पहुच गई। आसोप के ठा० शिवनाथसिह, गूलर ठा० बिशनसिह और आलणियावास ठा० अजीतसिह भी अपनी-अपनी सेनाओ सहित आउवा आ पहुचे।[63] इनके अतिरिक्त लाम्बिया, बाटा, भीवालिया, राडावास तथा बाजावास के ठाकुर भी खुशालसिह के समर्थक थे। खेजडला तथा मेवाड के सलूम्बर, रूपनगर, लासाणी तथा आसीद के ठिकानो की फौजें भी आउवा पहुच गई।[64] एक हजार सैनिक तथा छ सौ घुडसवार ऐरनपुरा से आए ही थे। सब मिलाकर छ हजार के लगभग सैनिक सख्या हो गई।

किलेदार अनाडसिंह के नेतृत्व मे आई हुई जोधपुर महाराजा की सेना के साथ ए जी जी का खास मर्जीदान ले हीथकोट भी था। आरम्भ मे छोटी-छोटी मुठभेडो के पश्चात् बिथौरा नामक गाव के निकट बडी लडाई हुई। अउवा ठाकुर तथा ऐरनपुरा के क्रातिकारियो ने इतना भयकर युद्ध किया कि जोधपुर की सेना पस्त होने लगी। कुशलराज सिघवी तथा मेहता विजयसिंह युद्ध क्षेत्र से भाग खडे हुए। कठिनाई से हीथकोट अपनी जान बचा सका। अनाडसिंह तथा उसके साथ दरबार की फौज के छीयत्तर सैनिक मारे गये। शेष फौज के पैर उखड गए तथा युद्ध क्षेत्र से भाग गई। दरबार की फौज का सामान खुशालसिंह तथा उसके सहयोगियो ने लूट लिया।[65]

अनाडसिंह की मृत्यु और अपनी सेना की पराजय के समाचार से महाराजा तखतसिंह बहुत दु खी हुए। सुबह तथा साय दो बार दुग मे प्रतिदिन बजने वाली नौपत को केवल एक बार बजवा कर महाराजा ने अपना दु ख प्रकट किया।[66] ए जी जी लारेंस तो क्रान्तिकारियो की सैनिक सफलता की सूचना से बावला हो उठा। उसने तुरन्त ब्यावर से सेना साथ लेकर अउवा की ओर प्रस्थान कर दिया। जोधपुर से पालिटिकल एजेन्ट केप्टिन मैंक मैसन भी ए जी जी की सहायतार्थ पहुचा। 18 सितम्बर, 1857 को पुन भयकर युद्ध छिडा। ए जी जी की सेना बुरी तरह पराजित हुई। अग्रेजी सरकार पर जोरदार कलक यह लगा कि मैंक मैसन क्रातिकारियो के हाथ पड गया। बेचारे मैंक मैसन को मारकर उसकी लाश को अउवा गढ के मुख्य द्वार के सामने एक वृक्ष पर लटका दी। हताश ए जी जी को अजमेर लौटना पडा। बेचारे मैंक मासन ने व्यथ ही जान गवाई। जनता के भय से महाराजा उसकी मृत्यु के शोक मे नौपत बजवाना भी बन्द न करा सके।

अउवा के आजादी के आशीवानो का सम्पक दिल्ली से था और मारवाड की जनता की सद्भावना उनके साथ थी।[67] गत दो वर्षो से खुशालसिंह का सहयोगी सिमरथसिंह मारवाड-मेवाड के जमीदारो मे एकता स्थापित करने के लिए प्रयत्नशील था। एकजुट होकर मारवाड-मेवाड से अग्रेजो का सफाया करने की ठान रखी थी।[68]

10 अक्टूबर को जोधपुर लीजियन के फौजी और खुशालसिंह के कई सहयोगी ठाकुरो ने दिल्ली की ओर प्रस्थान किया। दिल्ली की ओर प्रस्थान करने का कारण यह था कि यह लोग बहादुरशाह जफर का फरमान प्राप्त कर उसकी सैनिक सहायता से मारवाड तथा मेवाड को अग्रेजी आधिपत्य से मुक्त

करवाना चाहते थे।[69] दिल्ली की ओर कूच करने वाली इस क्रान्तिकारी सेना में मरने मारने के लिए तत्पर लगभग चार हजार सैनिक थे। रेवाडी पर विजय के पश्चात दिल्ली मे अंग्रेजो की विजय से खिन्न चित इस सेना की 16 नवम्बर को नारनोल मे ब्रिगेडियर गेरार्ड के नेतृत्व वाली एक विशाल अंग्रेजी फौज से भिडन्त हुई। जोधपुर लीजियन की पराजय से मारवाड-मेवाड से अंग्रेजी प्रभाव समाप्त करने की लालसा की इति श्री हो गई।

सब स्थानो की ओर से पूणतया आस्वस्थ हो जाने पर जब जनवरी 1858 में बम्बई मे नई कुमक भी आ गई तब अंग्रेजो ने पुन अउवा की तरफ मुह करने का साहस किया। कर्नल होम्स की कमान में बम्बई की पलटन और 12वी नेटिव इन्फेन्ट्री ने अउवा की घेराबन्दी की। जोधपुर महाराजा की फौज भी इस ब्रिटिस सेना की सहायता कर रही थी। 20 जनवरी को घमासान युद्ध हुआ। चार दिन तक दोनो पक्षो की तोपें आग उगलती रही। उस समय अउवा की रक्षा के लिये दुर्ग मे बहुत कम सैनिक ही थे। 23 जनवरी की रात्रि को आकाश बादलो से ढक गया। निरन्तर वर्षा होने लगी। कामदार तथा सहयोगियो के अधिक आग्रह करने पर आजादी का यह दीवाना खुशालसिंह गोला-बारी के बीच से निकल कर, सैनिक सहायता की आशा से मेवाड पहुच गया।[70] शेष लोगो ने दुर्ग की रक्षाथ जबरदस्त युद्ध किया किन्तु अंग्रेजो की कई गुना विशाल सेना और जगी तोपखाना निर्णायक सिद्ध हुए। 24 जनवरी को दुर्ग पर ब्रिटिस सेना का अधिकार हो गया। फिर तो अंग्रेजो ने वहा यातनाओं का ताडव ही कर दिया।[71]

बाद मे अंग्रेजो ने खुशालसिंह पर मुकदमा चलाने का दिखावा भी किया किन्तु सजा देने का साहस न जुटा सकने पर अन्त मे बरी कर दिया। 25 जुलाई, 1864 को आजादी के लिये अलख जगाने वाले इस शूरमा का उदयपुर मे स्वर्गवास हुआ। युगो-युगो के लिये इस स्वतन्त्रता सेनानी के कृतित्व की छाप राजस्थानी जन मानस मे अंकित रहेगी।

कोटा मे 1857 की क्रान्ति का महत्त्व अपेक्षाकृत इसलिये अधिक माना जाता है कि लगभग छ महीनो तक कोटा पर क्रान्तिकारियों का अधिकार रहा। सारी जनता क्रान्ति समर्थक बन गई। मारवाड भी अधिक हुई। सितम्बर मे बादशाह जफर कैद हो गया और लाल किले पर अंग्रेजी आधिपत्य स्थापित हो गया तब भी कोटा के क्रान्तिकारी सेना अपने ही बल पर अंग्रेजो से लोहा लेते रहे। 1838 ई मे कोटा महाराव के शासन मे निर्मित कोटा

कटिंजेट नामक ब्रिटिश सेना के देशी सिपाही मेरठ, नसीराबाद, नीमच इत्यादि मे क्रान्ति के समाचारा से व्याकुल हो गए। ऐसे मे 'पायगा पलटन' के रिसालदार मेहराबखा के हस्ताक्षरो वाली एव अपील फौजिया के पास पहुची। इसमे चरबी वाले कारतूसो तथा आटे मे मिली हुई हड्डियो के उल्लेख के पश्चात् देश से अग्रेज आधिपत्य को समाप्त करने मे सहयोगी बनने का निवेदन किया गया था। 15 अक्टूबर को प्रात फौज ने बगावत कर दी। दो तोपो तथा दो घोमलो (ऊट पर लादी जाने वाली छोटी तोप) सहित लगभग तीन हजार सैनिको ने मेहराबखा के नेतृत्व मे एजेसी हाऊस को घेर लिया। बगले को आग लगा कर कुछ सैनिक लकडे की सीढी लगाकर ऊपर के कमरे मे पहुचे जहा कोटा का पालिटिकल एजेन्ट मेजर बर्टन और उसके दो युवा पुत्र छुपे हुए थे। क्रोधित सैनिको ने तीनो के टुकडे-टुकडे कर दिये।[72] एजेसी हाऊस पर इस हमले के समय दो अग्रेज डॉक्टर भी मौत के घाट उतार दिये गए। मेजर बर्टन का सिर काट कर समस्त कोटा शहर मे घुमाया गया। छ माह तक मेहराबखा और जयदयाल के नेतृत्व मे फौज ने इच्छानुसार शासन चलाया। अग्रेजा के अनेक पिट्ठुओ को तोपो के मुह पर बाध कर उडा दिया गया।[73]

अग्रेजो के विरुद्ध कार्यवाही के पश्चात क्रान्तिकारी असमजस मे पड गये। ग्वालियर मे सम्भलगढ के शासक गोविन्दराव विट्ठल को सहायता के लिये जो पत्र भेजा उसने वह पत्र अग्रेजो को सौप दिया।[74] कोटा महाराव किले के भीतर दुबके हुए थे। इस कठिन परिस्थिति मे कौन सहायता करे? मार्च 1858 मे बम्बई से आई हुई विशाल ब्रिटिश सेना के साथ कर्नल रॉबर्ट कोटा पहुचा। महाराव की स्वामी भक्त सेना, करौली के शासक की फौज तथा गोटपुर शासक की फौज भी इस ब्रिटिश सेना के साथ मिल गई। जगह-जगह घमासान युद्ध हुए। अनेक लाग मारे गये। कई दिनो तक सामना करने के पश्चात् क्रान्तिकारी सेना पराजित हुई। नेताओ पर अग्रेजो ने जबरदस्त अत्याचार किए। मेहराबखा और जयदयाल पर मुकदमो के दिखावे के पश्चात् भारत के गवर्नर जनरल की इच्छानुसार उन्हे उसी एजेन्सी हाऊस मे फासी पर लटकाया गया जहा उन्होने मेजर बर्टन और उसके पुत्रो को मारा था। एक बार क्रान्ति पर नियन्त्रण हो जाने पर तो अग्रेजो ने अत्याचारो की सारी सीमाए पार करली।[75]

नवाब के मामू आलमखा के नेतृत्त्व मे टौंक की फौज ने भी बगावत कर दी। नवाब की स्वामी-भक्त सेना से लडता हुआ आलमखा तो मारा गया किन्तु टौंक के लगभग छ सौ क्रान्तिकारी सैनिक लडते-भिडते बहादुरशाह जफर की सहायतार्थ दिल्ली जा पहुचे। भरतपुर, धौलपुर, अलवर, मेवाड तथा जयपुर सभी स्थानो पर 1857 मे कुछ न कुछ क्रान्तिकारी घटनाए अवश्य ही हुई। उस समय अग्रेजो के एक प्रबल विरोधी के रूप मे राजस्थान की प्रसिद्धी समस्त भारत मे फैल गई। तात्या टोपे जैसा अग्रेजो का शत्रु राजस्थान को अपने लिये उपयुक्त शरण-स्थल मानकर अलीपुर मे चार्ल्स नेपियर से पराजित होने के पश्चात् राजस्थान आ पहुचा।

इस प्रकार 1857 की क्रान्ति के समय राजस्थान के कौने-कौने मे ज्वालाएे धधकने लगी। जैसे-तैसे अग्रेजो ने इस आग को बुझा तो दिया किन्तु फिर भी इससे वह धुनी चेतन हो गई जिसकी राख मल कर अर्जुनलाल सेठी, गोपालसिंह खरवा, विजयसिंह पथिक और जोरावरसिंह बारहठ जैसे क्रान्तिकारियो ने पुन आजादी का अलख जगाया। असफल होकर भी प्रथम स्वाधीनता सग्राम आगे आने वाले आजादी के मतवालों के लिए एक प्रेरणा पुञ्ज बन गया।

टिप्पणिया—

1 (अ) शर्मा एव व्यास, राजस्थान का इतिहास, 342
(ब) यदुनाथ सरकार मुगल साम्राज्य का पतन, 1, 127
2 (अ) सूर्यमल मिश्रण, वश भास्कर, 3096 3100
(ब) जोधपुर मे बख्तसिंह— रामसिंह सघर्ष
3 मलीसन, द इण्डियन म्यूटिनी आफ 1857, 294
4 टी आर होम्स, ए हिस्ट्री आफ दी इण्डियन म्यूटिनी, 149
5 फारन पालिटिकल कन्सल्टेशन, 16 अप्रेल 1832, न 22
6 आदश शर्मा, 1857 और राजस्थान, कथा क्रांति की, 1
7 शर्मा एव व्यास राजस्थान का इतिहास, 397 8
8 टर्की की समस्या के कारण 1855-6 म यूरोप मे भयकर युद्ध हुआ। एक पक्ष म इगलड, फ्रास तथा इटली की सम्मिलित सेनाएँ थी व दूसरी ओर अकेला रूस। युद्ध मे रूस बुरी तरह पराजित हुआ।
9 डा प्रकाश व्यास, राजस्थान का स्वाधीनता सग्राम, 71
10 (अ) एजेन्सी रिकार्ड, लेटर बुक न 13, पृ 43
(ब) सावस, ए मिसिंग चेप्टर आफ द इण्डियन म्यूटिनी, 8

11 (अ) फारेन पालिटिक्ल कसल्टसन्स, 26 जून, 1857, न 113 116

(ब) वही, 31 दिसम्बर, 1858, न 3146 7

12 (अ) अमल कुमार सेन, ज्योग्राफिक्ल रीज म आफ राजस्थान, ट्राजेक्शन आफ द इण्डिया कासिल आफ ज्योग्राफ्स, स्पेशल आई जी यू वोल्यूम, 99 104

(ब) धमपाल, इण्डिया लण्ड द पीपल, राजस्थान, 1 7

(स) बी सी मिश्र, ज्याग्राफिकल रीजस आफ राजस्थान, दी इण्डियन जरनल आफ ज्योग्राफी I 1, 1966, पृ 35 48

(द) इरफान मेहर, राजस्थान का भूगोल, 5

13 बी सी मिश्र, राजस्थान का भूगोल, 23

14 (अ) जहूरखा मेहर राजस्थानी सस्कृति रा चितराम, 92

(ब) धमपाल, इण्डिया लण्ड एण्ड द पीपल, राजस्थान, 1

15 (अ) जहूरखा मेहर, राजस्थानी सस्कृति रा चितराम, 96

(ज) फरिश्ता, 228

16 डॉ नारायणसिंह भाटी, परम्परा, गोरा हट जा, 37 38

17 जिण वन भूल न जावता, गैद गवय गिडराज ।
तिण वन जबुक तालड उधम माट आज ।।

18 डा नारायणसिंह भाटी परम्परा गोरा हट जा 141 42

19 राणिया तलेटिया उतर राजा भुगत रस ।
गढ ऊपर गोरा फिर सरग गया सगतस ।।

20 हुव फल धरण हकप हुव
चढ तुरा राल कुण लाग चाळो ।
गढपति आज दूसरा नमिया घणा
मेव रह्यौ अनम गुमान वाळो ।।

21 यह जोधपुर के लोळावास गाव के निवासी तथा सूयमल मिश्रण के निकट मित्र थ ।

22 डाकर कर फिरग फेर मिर दाळा
ज सग ठाकर केम भल ।
ऊभा भाग्गर वलू अभनमो
भाग्गर ढाणो केम भळ ।।

23 यह कविराजा बाकीदास के चार भाइया म सबस छोट भाई थ ।

24 महाराजा मानसिंह के समकालीन प्रसिद्ध कवि ।

25 पाचेटिया के निवासी । मानसिंह क समय क प्रसिद्ध कवि ।

26 फिरै फिरगी नै हका काज सुधार हवार फौजा
धूवळी उवार रका मार बका धीग ।
सवादी मभीत होय नगारा धुरावै मारै
माभी थार भरोस नचीता मानसीग ।।

27 ग्राया लाट रा सलीता वाचता धक लाय ऊभौ
धर हाथ मूछा ग्राम ऊभौ ग्रोज धीग ।
ग्रापर भरास राग जागडा दिराय ऊभौ
साथ ऊभौ जनवा खागडी मानसीग ।।

28 जहूरखा महर धर मजला धर कामा, 105-6

29 डा प्रकाश व्यास, राजस्थान का स्वाधीनता सग्राम, 67

30 जगदीशसिह गहलोत, राजस्थान का इतिहास, 3, 149 50

31 (ग्र) निमला गुप्ता, राजस्थान ग्रराजकता से व्यवस्था की ग्रार, 117
(ब) ग्रजमेर के सुपरिटेंडेन्ट सी जी डिक्सन का ए जी जी मदरलण्ड का पत्र, दि 1 मई, 1848, एन्क्लोजर न 2, करस्पोण्डन्स 26 ग्रगस्त, 1848, न 101, एफ एण्ड पी
(स) परम्परा, डूगजी जवाहरजी री पड लोक काव्य परम्परा, 125 35

32 (ग्र) नाथूराम खडगावत, राजस्थान्स रोल इन द स्ट्रगल ग्राफ 1857, 123
(ब) राजस्थान हिस्ट्री काग्रेस प्रोसीडिंग्स, VII, 118

33 (ग्र) निमला गुप्ता, राजस्थान ग्रराजकता से व्यवस्था की ग्रार, 179
(ब) डा प्रकाश व्यास, राजस्थान का स्वाधीनता सग्राम, 61
(स) वि स 1814 मे सूयमल मिश्रण ने पीपल्या ठा फूलसिह को यह पत्र लिखा "य राजा लोग देसपति जमी का ठाकर छ जे सारा ही हिमाळय का गळ्या ई नीसरया, सा चालीस स लेर साठ सत्तर बरस ताई पाछा पटकिया छ तोई गुलामी कर छ । पर यो म्हारो वचन राज याद राखागा क जै ग्रबक ग्रगरेज रह्यो ता इका गायो ही पूरो करसी । जमी का ठाकर काई भी न रहसी । मब ईसाई हो जासी ।" परम्परा, गोरा हट जा, 141

34 मुशी ज्वाला सहाय, लायल राजपूताना, 278 80

35 (ग्र) टाड, एनल्स एण्ड एटीक्वीटीज ग्राफ राजस्थान, 1, 560
(ब) श्यामलदास, वीर विनोद, 806
(स) तवारीख जोधपुर, बडल 40, ग्रथ 7 (पुरातेखागार, बीकानेर)
(द) तबकात ए नासीरी, 465
(घ) जी एन शर्मा, सोसियल लाइफ इन मेडाईवल राजस्थान, 512
(ई) जहूरखा मेहर, राजस्थानी सस्कृति रा चितराम, 97

11 (अ) फारेन पालिटिकल कन्सल्टेसन्स, 26 जून, 1857, न 113 116
(ब) वही, 31 दिसम्बर, 1858, न 3146 7

12 (अ) अमल कुमार सेन, ज्याग्राफिकल रीजन्स आफ राजस्थान, ट्रांजेक्शन आफ द इण्डिया कौंसिल आफ ज्योग्राफर्स, स्पशल आई जी यू वोल्यूम, 99 104
(ब) धमपाल, इण्डिया लण्ड द पीपल, राजस्थान, 1 7
(स) वी सी मिश्र, ज्याग्राफिकल रीजन्स आफ राजस्थान, दी इण्डियन जरनल आफ ज्याग्राफी, 1, 1 1966, पृ 35 48
(द) इरफान महर, राजस्थान का भूगाल 5

13 वी सी मिश्र राजस्थान का भूगाल, 23

14 (अ) जहूरखा महर, राजस्थानी सस्कृति रा चितराम, 92
(ब) धमपाल, इण्डिया लण्ड एण्ड द पीपल, राजस्थान, 1

15 (अ) जहूरखा मेहर, राजस्थानी सस्कृति रा चितराम 96
(ब) फरिश्ता, 228

16 डा नारायणसिंह भाटी, परम्परा, गारा हट जा, 37 38

17 जिण वन भूल न जावता गँद गवय गिडराज ।
तिण वन जबुक ताखड, ऊधम माडै आज ।।

18 डा नारायणसिंह भाटी, परम्परा, गोरा हट जा 141 42

19 राणिया तलेटिया उतर, राजा भुगत रैस ।
गढ ऊपर गारा फिर सरग गया सगतस ।।

20 हुव फल धरण हकप हुव
चढ तुरा राखै कुण लाग चाळौ ।
गढपति आज दूसरा नमिया घणा
अेक रह्यो अनम गुमान वाळौ ।।

21 यह जाधपुर के लोळावास गाव के निवासी तथा सूयमल मिश्रण के निकट मित्र थे ।

22 ठाकर कर पिरग फेर गिर दाळा
ज खग ठाकर केम भल ।
ऊभा भाखर 'वलू अभनमी
भाखर ढाणी केम भळ ।।

23 यह कविराजा बाकीदास के चार भाइया म सबस छाट भाई थ ।

24 महाराजा मानसिह के समकालीन प्रसिद्ध कवि ।

25 पाचटिया क निवासी । मानसिह के समय के प्रसिद्ध कवि ।

26 फिर फिरगी के हका काज सुधार हवार फौजा
धू वळी उबार रवा मारै बका धीग ।
सबादी भैभीत होय नमारा धुराव सार
माभी थार भरोसैं नचीता मानसीग ।।
27 ग्राया लाट रा खलीता बाचता धक लाय ऊभौ
धरै हाथ मूछा ग्राय ऊभौ क्रोध धीग ।
ग्रापर भरास राग जागडा दिराय ऊभौ
साथ ऊभौ जनेबा भ्वागडौ मानसीग ।।

28 जहूरखा महर, घर मजला घर कामा, 105-6

29 डा प्रकाश व्यास, राजस्थान का स्वाधीनता सग्राम, 67

30 *जगदीशसिंह गहलोत, राजस्थान का इतिहास, 3, 149 50*

31 (ग्र) निमला गुप्ता, राजस्थान ग्रराजकता से व्यवस्था की ग्रोर, 117
(ब) ग्रजमेर के सुपरिटेंडेंट सी जी डिक्सन का ए जी जी मदरलण्ड को पत्र दि 1 मई, 1848, एन्क्लोजर न 2, करस्पोण्डेंस 26 ग्रगस्त, 1848, न 101, एफ एण्ड पी
(स) परम्परा, डू गजी जवाहरजी री पड, लाक काव्य परम्परा, 125 35

32 (ग्र) नाथूराम खडगावत, राजस्थान्स राल इन द स्ट्रगल ग्राफ 1857, 123
(ब) राजस्थान हिस्ट्री काग्रेस प्रासीडिंग्स, VII, 118

33 (ग्र) निमला गुप्ता, राजस्थान ग्रराजकता स व्यवस्था की ग्रार, 179
(ब) डा प्रकाश व्यास, राजस्थान का स्वाधीनता सग्राम, 61
(स) वि स 1814 मे सूयमल मिश्रण ने पीपल्या ठा फूलसिंह को यह पत्र लिखा "य राजा लोग देसपति जमी का ठाकर छ जे सारा ही हिमाळय का गळ्या ई नीसरया, सा चालीस स लेंर साठ सत्तर बरस ताई पाछा पटकिया छ ताई गुलामी कर छ । पर यो म्हारो वचन राज याद राखोगा क ज ग्रबक ग्रगरेज रह्यो तो इको गाया ही पूरा करसी । जमी को ठाकर काई भी न रहसी । सब ईसाई हो जासी ।" परम्परा, गारा हट जा, 141

34 मु शी ज्वाला सहाय, लायल राजपूताना, 278 80

35 (ग्र) टाड, एनल्स एण्ड एन्टीक्वीटीज ग्राफ राजस्थान, 1, 560
(ब) श्यामलदास, वीर विनोद, 806
(स) तवारीख जाधपुर, बडल 40, ग्रथ 7 (पुरालेखागार, बीकानेर)
(द) तबकात ए नासीरी, 465
(घ) जी एन शर्मा, सोसियल लाइफ इन मेडाईवल राजस्थान, 512
(ई) जहूरखा महर, राजस्थानी सस्कृति रा चितराम, 97

11 (अ) फारेन पालिटिकल कन्सल्टेशन्स, 26 जू
(ब) वही, 31 दिसम्बर, 1858, न 314(

12 (अ) अमल कुमार सेन, ज्योग्राफिकल रीज
इण्डिया कौंसिल आफ ज्योग्राफर्स, रपश
(ब) धर्मपाल, इण्डिया लण्ड द पीपल, राज
(स) वी सी मिश्र, ज्याग्राफिकल रीजन
आफ ज्योग्राफी 1, 1, 1966, पृ 3
(द) इरफान मेहर, राजस्थान का भूगोल,

13 वी सी मिश्र राजस्थान का भूगोल, 23

14 (अ) जहूरखा मेहर राजस्थानी संस्कृति रा
(ब) धर्मपाल, इण्डिया लण्ड एण्ड द पीपल

15 (अ) जहूरखा मेहर, राजस्थानी संस्कृति ग
(ज) फरिश्ता, 228

16 डॉ नारायणसिंह भाटी, परम्परा, गारा ह

17 जिण उन भून र जावता गैद गवय गिटरा
तिण वन जवुक तासड उधम माड म

18 डा नारायणसिंह भाटी, परम्परा, गोरा

19 राणिया तलेटिया उतर, राजा भुगत रस
गढ ऊपर गारा फिर सरग गया सगतम

20 हुव फैल घरण हुकम हुव
चढ तुरा राव कुण खाग चाळो ।
गढपति आज दूसरा नमिया घणा
अेक रह्यौ अनम गुमान वाळो ॥

21 मह जोधपुर के लोळावास गाव क निवार

22 डाकर कर फिरग फेरे गिर ढाळा
ज सग ठाकर केम फल ।
ऊभा भाखर 'वलू अभनमी
माथर ढाणी केम मळ ॥

23 यह कविराजा वाकीदास के चार भाइया

24 महाराजा मानसिंह के समकालीन प्रसिद्ध

25 पाथटिया क निवासी । मानसिंह क समय

51 (अ) जी एच ट्रेवर, ए चेप्टर आफ द इण्डियन म्यूटिनीज, 3-4
(ब) टी आर होम्स, ए हिस्ट्री आफ दी इण्डियन म्यूटिनीज, 3 4
52 (अ) नाथूराम खडगावत, राजस्थान्स रोल इन द स्ट्रगल आफ 1857, 17
(ब) आई टी प्रिचाड, द म्यूटिनीज इन राजपूताना, 39
53 फारस्ट, हिस्ट्री आफ दी इण्डियन म्यूटिनी, 3, 450
54 (अ) टी आर होम्स, ए हिस्ट्री आफ द इण्डियन म्यूटिनी, 151
(ब) आई टी प्रिचाड, द म्यूटिनीज इन राजपूताना, 89-90
(स) फारेन पालिटिकल कन्सल्टेशन, 27 जुलाई, 1858, न 3146 7
55 (अ) जी एच ट्रेवर, ए चेप्टर आफ द इण्डियन म्यूटिनी, 5
(ब) मु शी ज्वाला सहाय, लायल राजपूताना, 200 1
56 एजेंसी रकाड, मेवाड, 1857, न 88, कप्तान सावस का ए जी जी के नाम पत्र, 25 माच, 1858
57 (अ) प्रिचाड, द म्यूटिनीज इन राजपूताना, 121 128
(ब) नीमच के केप्टन लायड की ए जी जी को रिपोट, 16 जून, 1857
58 सी एल सावस ए मिसिंग चेप्टर आफ द इण्डियन म्यूटिनी, 27
59 वही, 27-29
60 राजस्थान का स्वाधीनता सग्राम
61 डा जबरसिह, द ईस्ट इण्डिया कम्पनी एण्ड मारवाड, 120
62 हकीकत बही, 18, 384
63 (अ) ढोलिया रा कोठार, न 59 तथा 63
(ब) जोधपुर राज्य रेकाडस, सनद बही 126 पृ 546
(स) डा जबरसिह द ईस्ट इण्डिया क एण्ड मारवाड, 126
64 मारवाड म सन् सतावन की चिगारी, 2
65 हीथकोटस रिपाट आफ दी प्रासीडिंग्स अगेन्स्ट द म्यूटिनीयस आफ जोधपुर लिजियन, 13 सितम्बर, 1857
66 (अ) हकीकत बही, 18, 284
(ब) खडगावत राजस्थान्स रोल इन द स्ट्रगल आफ 1857 180
67 (अ) फारन पालिटिकल कन्सल्टेसन, 27 दिसम्बर, 1857
(ब) खडगावत, राजस्थान्स राल इन द स्ट्रगल आफ 1857, 152
(स) डा प्रकाश व्यास, राजस्थान का स्वाधीनता सग्राम, 107
68 नाथूराम खडगावत, बही, 153 54

36 (अ) निमला गुप्ता, राजस्थान अराजकता से व्यवस्था की ओर, 176
(ब) श्यामलदास, वीर विनोद, 2, 1815

37 टाड, एनल्स एण्ड एन्टीक्वीटीज आफ राजस्थान, 2, 121

38 श्यामलदास, वीरविनोद 2 प्रकरण 18

39 (अ) डा प्रकाश व्यास, राजस्थान का स्वाधीनता सग्राम, 54-55
(ब) मेहता सग्रामसिंह क्लेक्शन हवाला न 28

40 (अ) डा व्यास, राज का स्वा स, 54
(ब) फा पो कन्सल्टेसन्स, 31 अक्टूबर, 1833, न 37 44
(स) महता सग्रामसिंह क्लेक्सन, हवाला न 787
(द) एजेन्सी रेकाड, हिस्टोरीकल रेकाड 215 जोधपुर फाइल न 5 खड 1, सन 1834, पृ 19

41 डा व्यास, राज का स्वा स, 56

42 (अ) 1857 और राजस्थान, क्या क्रान्ति थी, 3
(ब) डा भाटी, परम्परा, गोरा हट जा, 145

43 डा भाटी, परम्परा, गोरा हट जा, 141

44 (अ) आई टी प्रिचाड, द म्यूटिनीज इन राजपूताना, 19 20, 29 30 व 99
(ब) जी एच ट्रेवर, ए चेप्टर आफ इण्डियन म्यूटिनी 4

45 (अ) आ टी प्रिचाड, द म्यूटिनीज इन राजपूताना, 29 और 99
(ब) साबस, 48 85

46 मावस, ए मिसिंग चेप्टर आफ द इण्डियन म्यूटिनीज, 48 85

47 कोटा मे 1857 की क्रान्ति के नेता महराबखा का जन्म करौली म हुआ। कोटा के एजेन्सी हाऊस म मजर बटन व उसके दो पुत्रो को मारने वाले मेहराबखा को 1860 म फासी हुई।

48 मेहराबखा के सहयोगी हरिसिह का जन्म कोटा के नाता गाव म हुआ। एजेन्सी हाउस पर हमले मे विशेष योगदान। नवम्बर 1857 म कोटा म अग्रेजी सेना से लडते हुए मारा गया।

49 बख्शी गुलमाहम्मद क्रान्तिकारी सेना के साथ लडते हुए दिल्ली तक जा पहुचा। वहा अग्रेजो के विरुद्ध युद्ध करते हुए मारा गया।

50 (अ) राजस्थान का स्वाधीनता सग्राम, 72 87
(ब) फो पा कन्सल्टेसन (गुप्त), 26 जून 1857, न 113-116
(ग) वही, 31 दिसम्बर, 1858, न 3146 7

51 (अ) जी एच ट्रेवर, ए चेप्टर ग्राफ द इण्डियन म्यूटिनीज, 3-4
(ब) टी ग्रार होम्स, ए हिस्ट्री ग्राफ दी इण्डियन म्यूटिनीज, 3-4
52 (अ) नाथूराम खडगावत, राजस्थान्स रोल इन द स्ट्रगल ग्राफ 1857, 17
(ब) ग्राई टी प्रिचाड, द म्यूटिनीज इन राजपूताना, 39
53 फारेस्ट, हिस्ट्री ग्राफ दी इण्डियन म्यूटिनी, 3, 450
54 (अ) टी ग्रार होम्स, ए हिस्ट्री ग्राफ द इण्डियन म्यूटिनी, 151
(ब) ग्राई टी प्रिचाड, द म्यूटिनीज इन राजपूताना, 89 90
(स) फारेन पालिटिकल कन्सल्टेसन, 27 जुलाई, 1858, न 3146 7
55 (अ) जी एच टेवर, ए चेप्टर ग्राफ द इण्डियन म्यूटिनी, 5
(ब) मु शी ज्वाला सहाय, लायल राजपूताना, 200 I
56 एजेन्सी रेकाड, मेवाड, 1857, न 88, कप्तान सावस का ए जी जी क नाम पत्र, 25 माच, 1858
57 (अ) प्रिचाड, द म्यूटिनीज इन राजपूताना, 121-128
(ब) नीमच क केप्टन लायड की ए जी जी को रिपोट, 16 जून, 1857
58 सी एल सावस, ए मिसिंग चेप्टर ग्राफ द इण्डियन म्यूटिनी, 27
59 वही, 27 29
60 राजस्थान का स्वाधीनता सग्राम
61 डा जबरसिंह, द ईस्ट इण्डिया कम्पनी एण्ड मारवाड, 120
62 हकीकत वही, 18, 384
63 (अ) ढोलिया रा कोठार, न 59 तथा 63
(ब) जोधपुर राज्य रेकाडस, सनद बही 126, पृ 546
(स) डा जबरसिंह द ईस्ट इण्डिया क एण्ड मारवाड, 126
64 मारवाड म सन् सत्तावन की चिंगारी, 2
65 हीथकोटस रिपोट ग्राफ दी प्रासीडिंग्स ग्रगेन्स्ट द म्यूटिनीयस ग्राफ जोधपुर लिजियन, 13 सितम्बर 1857
66 (अ) हकीकत वही, 18, 284
(ब) खडगावत राजस्थान्स रोल इन द स्ट्रगल ग्राफ 1857, 180
67 (अ) फारेन पालिटिकल कन्सल्टेसन, 27 दिसम्बर, 1857
(ब) खडगावत, राजस्थान्स रोल इन द स्ट्रगल ग्राफ 1857, 152
(स) डा प्रकाश व्यास, राजस्थान का स्वाधीनता सग्राम, 107
68 नाथूराम खडगावत, वही, 153 54

69 दिल्ली की ओर कूच करने वाला म शिवनाथसिंह आसोप, विशनसिंह गूलर, अजीत सिंह आलणियावास, जोधसिंह बाजावास, चांदसिंह सिनाली इत्यादि ठाकुर तथा अउवा की तरफ स पहाड़सिंह व सलूंबर की ओर स संगतसिंह के नाम विशेष उल्लेखनीय ह ।

70 डा आर पी व्यास, रोल आफ नोबिलिटी इन मारवाड़, 138

71 वही, 139

72 फारेस्ट, हिस्ट्री आफ द इण्डियन म्यूटिनी, 3, 555 6

73 (अ) जी एच ट्रेवर, ए चेप्टर आफ द इण्डियन म्यूटिनी, 12
(ब) खडगावत राजस्थान्स रोल इन द स्ट्रगल आफ 1857, 67

74 (अ) डा प्रकाश व्यास, राजस्थान का स्वाधीनता संग्राम, 131
(ब) फो पो कन्सल्टेसन, (सीक्रेट) 28 मई, 1858, न 136, 39
(स) गवनर जनरल का सीक्रेट कमटी को डिस्पेच, 1858, न 14

75 (अ) नाथूराम खडगावत, राजस्थान्स रोल इन द स्ट्रगल आफ 1857, 66 8
(ब) वीर सतसई (सहल), 77 78
(स) कोटा महाराव की सलामी की तोपा की सख्या घटा दी, खिराज की रकम बहुत बढ़ा दी तथा कोटा पलटन म सनिका की सख्या बहुत कम कर दी ।

राजस्थान मे स्वतंत्रता आन्दोलन

सन् 1857 का विद्रोह एक अत्यन्त महत्वपूर्ण घटना थी। यह विद्रोह अंग्रेजो पर पहला मर्मान्तिक प्रहार था जिससे उन्हे काफी पीडा हुई। भारतीय नरेशो के कारण ही वे बच सके। अंग्रेजी जनता समझ गयी कि अब ईस्ट इण्डिया कम्पनी भारत के विजित प्रदेशो पर अच्छी प्रकार नियन्त्रण नही रख सकती है अत अंग्रेजी पार्लियामेंट ने कम्पनी के प्रदेशो को अपने प्रत्यक्ष नियन्त्रण मे लेना उचित समझा।[1] सन् 1858 के अधिनियम द्वारा भारत की सत्ता ईस्ट इण्डिया कम्पनी से ब्रिटिश ताज को हस्तान्तरित कर दी गयी। ई० सन 1858 की पहली नवम्बर को इगलण्ड की महारानी विक्टोरिया ने एक घोषणा-पत्र प्रकाशित किया जिसमें कहा गया था—

"हिन्दुस्तान पर शासन करने का अधिकार ईस्ट इण्डिया कम्पनी से इगलैण्ड की महारानी अपने हाथ मे लेती है। कम्पनी की रियासतो से जो सन्धियां हुई थीं उनका पूरी तरह से पालन किया जावेगा। महारानी का राज्य विस्तार करने की कोई इच्छा नही है। वह राजाओ के अधिकार, सम्मान और प्रतिष्ठा को बनाये रख कर देश मे शांति और स्वराज्य स्थापित करने मे राजाओ से सहायता की इच्छुक है। प्रत्येक प्रजाजन से, चाहे वह ब्रिटिश भारत का हो अथवा देशी रियासत का, समान व्यवहार किया जावेगा। सभी धर्मो के अनुयायियो को कानून की दृष्टि से समान व निष्पक्ष रूप से सरक्षण प्राप्त होगा। सरकारी नौकरियो के लिये धर्म का आधार नही माना जावेगा। शिक्षा, योग्यता और चारित्रिक निष्ठा के आधार पर ही उत्तरदाई पदो पर नियुक्तियां की जावेगी। हिन्दुस्तानियो की पूर्व परम्पराओ, रीतियां तथा प्राचीन रूढियां की पूरी रक्षा की जावेगी। देश मे शांति स्थापित होते ही उद्योग-धन्धो को प्रोत्साहित किया जावेगा। सार्वजनिक उपयोग के काम आरम्भ किये जायेंगे। शासन का उद्देश्य प्रजा का हित ही माना जायेगा।"[2]

शिक्षित भारतीयो ने इस ऐतिहासिक घोषणा को अपने अधिकारो का महत्वपूर्ण चिह्न माना।[3] यह घोषणा-पत्र अत्यन्त आदर्शवादी एव उच्च विचारो से परिपूर्ण तथा दूरदर्शी मालूम होता है लेकिन वास्तव मे यह घोषणा ब्रिटिश सरकार की एक चाल मात्र थी। इसके पीछे न तो ईमानदारी थी और न इसमे दिये गये आश्वसनो को पूरा करने की इच्छा थी। एक दूसरी रानी अवध की बेगम हजरत महल ने इस घोषणा की सच्चाई मे तब ही सन्देह प्रकट कर दिया था। बेगम ने प्रश्न किया कि कम्पनी और रानी के शासन मे अन्तर ही क्या रहा, जबकि कम्पनी का प्रबन्ध पहले की तरह कायम है और कम्पनी के नौकर, गवर्नर जनरल और कम्पनी का न्यायिक प्रशासन सब कुछ अपरिवर्तित रूप मे बना हुआ है।

इस घोषणा के बाद इगलैण्ड की महारानी के नाम से वहा का मन्त्रिमण्डल भारत पर शासन करने लगा। भारत स्थित गवनर जनरल "वायसराय" (महारानी का प्रतिनिधि) भी कहलाने लगा। इगलैण्ड की महारानी और देशी राजाओ के बीच के सम्बन्धो मे कोई कानूनी तथा वैधानिक परिवर्तन नही आया, लेकिन राजनैतिक व्यवहार आदि मे अवश्य ही काफी परिवतन आया। अग्रेजो ने बडी चालाकी से इन अर्द्ध-स्वतन्त्र राज्यो को पूर्णतया अपने आधिपत्य मे ले लिया। या ये राज्य पहले भी मुगलो के आधीन रह चुके थे अत इनको अग्रेजो की आधीनता स्वीकार कर लेने मे कोई हिचक नही हुई। 1857 के विद्रोह के समय अग्रेजो की सहायता करने के कारण राजाओ को पुरस्कृत भी किया गया। जयपुर नरेश को कोट-कासीम का परगना दिया गया।[4] अन्य कुछ नरेशो को प्रशसा के प्रमाणपत्र दिये गये।

अग्रेजो ने ई० सन् 1857 के विद्रोह से दो महत्वपूर्ण बाते सीखी थी— (1) रियासतो की भावना के विरुद्ध जाना, समझदारी नही है चाहे भले ही वे वतमान प्रगति मे कितनी ही पिछडी प्रतीत होती हो। (2) उनकी शक्ति को देखते यह आवश्यक था कि उन रियासतो को एक दूसरे से सगठित होकर शक्तिशाली होन से बचाने के लिये राजनैतिक, सैनिक तथा अन्य उपाय काम मे लिये जायें। अत एक और उन्होने उदारता की भावना दिखाई तो दूसरी ओर उनको शनै शनै शक्तिहीन भी किया गया। वास्तव मे ईस्ट इण्डिया कम्पनी से ताज के हाथो मे प्रभुसत्ता जाते ही देशी रियासतो की सवधानिक स्थिति बदल गयी। वे अब स्वतन्त्र मित्रो के स्थान पर ताज के सरक्षित सामन्त बन गयी। रियासतें अब अलग इकाइया नही रही तथा उनके शासक

ताज के सामन्तो के समान हो गये। वे भारतीय साम्राज्य के भाग बन गये।[5]

राजाओ को प्रसन्न करने के लिये महारानी का घोषणापत्र काफी था। जिसके अनुसार राजाओ को विश्वास दिलाया गया कि उनके राज्यो के साथ की गई सन्धियो का आदर किया जायेगा। उनके वशानुगत विशेषाधिकारो को भी चालू रखे जाने का विश्वास दिलाया गया। दूसरी और राजाओ को बतला दिया गया कि वे अंग्रेजी साम्राज्य की एक राजनीतिक इकाई मात्र है। भारत की सर्वोच्च सत्ता इगलैण्ड के राजमुकुट मे निहित है। भारतीय नरेश उनके सामन्त ही है। ई० सन् 1862 मे यहा के राजाओ को गोद लेने की सनदे दी गई जिनके अनुसार राजाओ और उनके उत्तराधिकारियो के निस्सन्तान होने पर गोद लेने का अधिकार मान लिया लेकिन साथ मे यह शर्त भी रखी गई कि उन राजघरानो को इगलैण्ड के बादशाह का राजभक्त रहना तथा भारत मे अंग्रेजी राज्य के प्रति सधि, समझौते आदि के अनुसार अपना कर्त्तव्य पूरी तरह निबाहना होगा। ई० सन् 1884 मे अंग्रेज सरकार ने यह आदेश भी जारी किया कि किसी देशी राज्य का उत्तराधिकार अवैध होगा जब तक वह अंग्रेज सरकार द्वारा किसी न किसी रूप मे स्वीकृत न हो जाये। इस आदेश का जब राज्यो ने विरोध किया तो ई० सन् 1891 मे स्पष्ट निणय दिया गया कि भारत सरकार का यह अधिकार तथा कर्त्तव्य है कि देशी राज्यो का उत्तराधिार तय करे। इस प्रकार गोद की सनद के नाम पर अंग्रेजो ने राजाओ को पूणतया अपने अधीन कर लिया। वे अब भारत के किसी राष्ट्रीय साम्राज्य के अग या स्तम्भ बन कर नही रह सके। यह रियासतें भारत भर मे फैली हुई थी अत अंग्रेजो ने यह फैलाव अपने हित मे अच्छा माना एक प्रकार से यह उनके मित्रो के दुर्ग थे जो किसी भी सकट मे अंग्रेजो के विरुद्ध विद्रोह के समय मे उनकी सुरक्षा के काम आ सकते थे।[6] अत सन् 1860 मे लार्ड केनिंग ने इस बात पर जोर दिया कि भारत मे अंग्रेजी शासन को बनाये रखने के लिये इन रियासतो को राजनैतिक शक्ति के बिना ही बने रहने दिया जावे।[7]

ई० सन् 1876 मे राज्यो व राजघरानो की महत्ता के अनुसार राजाओ की तोपो की सलामी तय की गई। अंग्रेज सरकार की प्रसन्नता या अप्रसन्नता के अनुसार तोपो की सख्या घटती बढती रहती थी। कोटा के महाराव रामसिंह, जोधपुर के महाराजा तख्तसिंह व टोक के नबाब इब्राहीम अलीखा की तोपो की सलामी अप्रसन्न होने पर घटा दी गई। राजाओ की बैठको का क्रम भी निश्चित

किया गया। इसमें विभिन्न नरेशों में आपसी प्रतिस्पर्धा आरम्भ हो गई। ई० सन् 1870 में अजमेर दरबार में जोधपुर नरेश तख्तसिंह ने उदयपुर के महाराणा शम्भूसिंह के बाद बैठना अस्वीकार कर दिया। इसी कारण अंग्रेज सरकार ने तख्तसिंह की तोपों की सलामी 19 से 17 कर दी थी। ई० सन् 1875 में बम्बई में उदयपुर के महाराणा सज्जनसिंह द्वारा हैदराबाद निजाम के बाद बैठने से मना कर देना पारस्परिक स्पर्धा का एक उदाहरण है। वे राजा जो अठारवी शताब्दी तक मूलतः सब सत्ताधारी थे लेकिन निश्चित आश्रित थे व अब वास्तव में आश्रित हो गये जबकि उनके साथ की गई सन्धियों के अनुसार उन्हें विधिवत सर्व सत्ताधारी मान्यता प्राप्त थी।[8]

ई० सन 1861 से राजाओं को प्रसन्न करने व उनकी राजभक्ति को आंकने के लिये उनको खिताब भी दिये जाने लगे। इनमें मुख्य "स्टार ऑफ इण्डिया" (सितारे हिन्द) था। उल्लेखनीय यह है कि "हिन्दुआ सूरज" महाराणा उदयपुर को भी "सितारे हिन्द" की पदवी दी गई। व 'सूरज' से केवल मात्र "सितारे" रह गये। इस प्रकार रियासतों में की गई सन्धियों, उनके साथ किये गये इकरारनामा तथा उनको दी गई सनदो के आधार पर, भारत सरकार द्वारा दिये गये निर्णयों तथा भारत सचिव द्वारा किये जाने वाले व्यवहारों से अब अंग्रेजी ताज की सर्वोच्च शक्ति स्पष्ट दिखाई देने लगी।[9] सर्वोच्च शक्ति होने के कारण रियासतों के विदेशी तथा आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप किया जाने लगा। विदेशी मामले भारतीय रियासतें तथा उनकी जनता अंग्रेजी भारत के प्रान्तों तथा वहां की जनता की भांति ही मानी जाने लगी।[10] भारतीय रियासतों का कोई अन्तर्राष्ट्रीय महत्व नहीं था। भारत सरकार ने 21 अगस्त 1891 को ही एक विज्ञप्ति द्वारा स्पष्ट कर दिया था कि "अन्तर्राष्ट्रीय कानून के सिद्धान्त सम्राज्ञी की प्रतिनिधि भारत सरकार तथा महारानी के अधीनस्थ भारतीय रियासतों के बीच के सम्बन्धों पर लागू नहीं होते हैं। पूर्ववर्ती का परमोच्च आधिपत्य पश्चातवर्ती पर भी लागू होता है तथा माना जाता है।[11] इस कारण परमोच्च शक्ति की अंतराष्ट्रीय आश्वासनों को लागू करने की जिम्मेवारी थी और राजाओं को परमोच्च शक्ति द्वारा किये गये अन्तराष्ट्रीय करारों का पालन करने को बाध्य होना पड़ा।

अंग्रेज सरकार अब राज्यों के आंतरिक मामलों में ज्यादा ही हस्तक्षेप करने लगी। कुप्रशासन व अव्यवस्था के नाम पर जब तब राजाओं के हाथ से प्रशासन लिया जाने लगा। ई० सन् 1870 में लार्ड मेयो ने अजमेर में

एक दरबार किया तब उसने उपस्थित नरेशो को कहा था—"हम आपको आपके द्वारा लाई गई भेंटो से नही आकते है और न आपके ठाठबाट से बल्कि आपके द्वारा अपनी प्रजा से किये गये वर्ताव से। यदि हम आपके अधिकारो और विशेषाधिकारो को स्वीकार करते है तो आपके लिये यह अत्यावश्यक हो जाता है कि आप भी अपने अधीन प्रजा के अधिकारो व विशेषाधिकारो का पूरी तरह पालन करे। यदि हम आपकी सत्ता की सहायता करते ह तो उसके बदले मे हम आपके शासन को सुव्यवस्थित देखना चाहते है। हम चाहते है कि सम्पूर्ण राजस्थान मे शाति बनी रहे और वहा सवत्र न्याय-पूर्ण शासन हो। आप विश्वास रखे कि और किसी के नही बल्कि आपके भले के लिये ही यह सब कुछ करने के लिये आग्रहपूर्वक आपसे यह अनुरोध किया जा रहा है।[12] इसके बाद ई० सन् 1874 मे जो कुछ बडौदा राज्य के मामले मे कहा गया वह राजस्थान के राज्यो के लिये भी लागू होता है—"यदि शासकीय कत्तव्य नही निभाये जाते ह, यदि कुशासन चलने दिया जाता है, यदि प्रजा को न्याय प्राप्त नही होता है, यदि जनता के जान व माल का बचाव नही किया जाता है, और यदि जनता के कल्याण का ध्यान नही दिया जाता है तो अग्रेज सरकार अवश्य हस्तक्षेप करेगी।"[13] सर्वोच्च सत्ता ने इस प्रकार कुशासित राज्यो के लिये स्पष्ट नीति बतला दी। बडौदा नरेश को राजगद्दी से उतार दिया गया। इस प्रकार राजगद्दी पर मे उतारा जाना स्पष्ट बतलाता है कि अग्रेजी सरकार भारतीय रियासतो के आतरिक मामलो मे हस्तक्षेप करने पर तुली हुई थी और कोई रियासत सुरक्षित नही थी।[14] राजाओ को यह बहुत बुरा लगा और उनमे असतोष फैल गया। इसी समय दिल्ली मे एक दरबार ई० सन् 1877 मे किया गया जिसमे राजाओ की उपस्थिति मे महारानी को "कैसरे-हिन्द "भारत की साम्राज्ञी" घोषित किया गया। राजाओ के हृदयो मे अब यह बात जम गई कि मुगल बादशाहो की भाति ही अब अग्रेज बादशाहत चलेगी। इसके बाद अग्रेज सरकार न स्पष्ट रूप से राजाओ की अबाध सत्ता और अधिकार छीन लिये और उनके विरुद्ध जब भी आवश्यक समझा गया हस्तक्षेप किया गया। राज्यो की वैदेशिक नीति अग्रेजो के हाथ मे आ गई और परिस्थितियो के अनुसार उनके आतरिक प्रशासन मे हस्तक्षेप किया जाने लगा। अग्रेज सरकार उनके गोद के मामलो मे रोडे अटकाने लगी। राजा के अव्यस्क होने पर उसका नियन्त्रण रहने लगा, और कुशासन होने पर वह राजा को राजगद्दी से हटाने तक लग गई। साम्राज्य व देश की सुरक्षा के लिये राजाओ से सैनिक सहायता ली जाने लगी। आर्थिक मामलो मे भी मनमानी की जाने

लगी। इस प्रकार राज्य के वास्तविक अधिकार नरेशो से छीने जाकर अग्रेज सरकार ने अपने हाथ मे ले लिये। अग्रेज सरकार का प्रतिनिधि राज्यो मे रहता था। उसकी इच्छा के अनुसार ही शासक राजगद्दी से उतारे जाने लगे या यश पाने लगे। अग्रेज रेजिडेन्ट या अग्रेज राजनैतिक एजेण्ट रियासत का वस्तुत शासक बन गया राजाओ को आदेश देने लगा और राजाओं को उन्हे मानना आवश्यक हो गया।

हस्तक्षेप की ऐसी ही नीति के कारण ई० सन् 1867 म टोक के नवाब को राजगद्दी से हटाया गया। उसने अपने अधीन लावा ठिकाने के राजपूत जागीरदार के काका की हत्या करवा दी।[15] ई० सन् 1868 मे जब जोधपुर नरेश तख्तसिंह तथा उसके जागीरदारो के बीच ज्यादा विवाद बढ गया तथा गृह-युद्ध की आशका हो गई तो अग्रेजो ने उसे बाध्य किया कि वह शासन काय मन्त्रियो की एक परिषद् को सौंप देवे। महाराजा के अधिकार भी सीमित कर दिये गये।[16] ई० सन् 1870 मे अलवर नरेश शिवदानसिंह के शासन काल मे अव्यवस्था फैल गई तथा वहा मुसलमान मन्त्रियो के विरुद्ध तीव्र विरोध उठ खडा हुआ तब अग्रेज अधिकारियो को हस्तक्षेप कर शिवदानसिंह के प्रशासनिक अधिकार लेकर एक मन्त्री परिषद नियुक्त करनी पडी।[17] तब लार्ड मेयो ने बतलाया—"यदि किसी देशी रियासत मे आतक, भ्रष्टाचार, फिजूलखर्ची अधिक बढ गई हो तो सर्वोच्च सत्ता के लिये आवश्यक हो जाता है कि वह हस्तक्षेप करे। दूसरी ओर यदि शासक अपने राज्य का प्रशासन ठीक करना चाहता हो लेकिन उसके जागीरदार, सैनिक या राजद्रोही विरोध करे तो हमारा कत्तव्य हो जाता है कि हम उस सत्ता और शक्ति का समथन करें। हम किसी भी परिस्थिति मे किसी राज्य मे गृह युद्ध नही होने देना चाहते है।"[18] इन तीन मुख्य आधारो पर ही अग्रजो ने अपनी नीति रियासतो के प्रति बनाये रखी।

ई० सन् 1903 मे जोधपुर नरेश सरदारसिंह के भी अधिकार उसकी फिजूलखर्ची के कारण अस्थायी रूप से ले लिये गये तथा उसे पचमढी भेज दिया गया और शासन एक मन्त्री परिषद के अधीन कर दिया गया। ई० सन् 1905 मे उसे वापस राज्य मे आने दिया गया लेकिन उसको सीमित अधिकार दिये गये। उसे पूण अधिकार बाद मे 1908 मे ही कुछ शर्तों के अधीन दिये गये।[19]

राजाओं की स्थिति और भी ज्यादा तब बिगडी जब वायसराय लॉर्ड कर्जन 1898–1905 के समय मे साम्राज्यवादी सिद्धान्त अपनी चरम सीमा पर

पहुँच गये। वह राजाओ को ताज का केवल एजेण्ट मानता था जिनका काम अपने क्षेत्रो पर केवल शासन करना था और उनके स्वय के कोई मूल अधिकार नही थे। उसके विचार से ताज की प्रभुसत्ता सवत्र बिना विवाद स्पष्ट है। उसने स्वय अपने परमाधिकार की सीमा बाध रखी थी।[20] अत राजा लोग वश परम्परागत अधिकारी मात्र रह गये। उन्हे सौपे गये अधिकारो का दुरुपयोग न कर अपनी उपयुक्तता प्रमाणित करना अत्यावश्यक हो गया। उसके समय मे राजा लोग बिना अनुमति लिये अपना राज्य तक नही छोड सकते थे। राजनैतिक अधिकारी तथा रेजीडेण्ट मनचाहे जब हस्तक्षेप करने लग। रियासतो मे अप्रत्यक्ष रूप से अपनी सरकार चलाना नग्न रूप से दिखाई देने लगा।[21] इसके परिणाम स्वरूप राजाओ मे असतोष फैल गया। फिर भी वे राजाओ पर सुधारो के लिये पूर्ण दबाव न डाल सके। ऐसा प्रतीत होता है कि अग्रेज लार्ड डलहोजी द्वारा अपनाई सुधारो की नीति के परिणाम नही भूले थे। अत उन्होने आर्थिक कारणो व सुरक्षा के लिये आवश्यक सुधारो को करके ही सन्तोष कर लिया। यो जनता मे भी इतनी जागृति नही आई थी कि वे अपने राजा को सुधारो के लिये विवश करते।

अग्रेजो ने अपना रौब जमाने व राजभक्ति का प्रदर्शन कराने के लिये ई० सन् 1903 मे सम्राट एडवर्ड के राज्यारोहण के उपलक्ष मे दिल्ली मे दरबार किया जिसमे राजस्थान के समस्त नरेशो को आमन्त्रित किया गया। उदयपुर नरेश महाराणा फतहसिंह भी इस समय दिल्ली पहुँचा। लेकिन महाराणा ने दरबार की बैठक मे हैदराबाद, बडोदा और मैसूर के बाद चौथा स्थान रखने के कारण दिल्ली पहुँच कर भी दरबार मे भाग नही लिया। लार्ड कर्जन जैसा कठोर प्रशासक यह सब कुछ देख कर भी महाराणा को कुछ न कह सका।[22] इसकी प्रतिक्रिया अन्य नरेशो मे भी हुई और जन साधारण मे भी साहस का सचार हुआ। भारत मे अब राष्ट्रीय भावना तेजी से पनप रही थी अत अग्रेज सरकार ने यही उचित समझा कि राजाओ से सहयोग लेना ही उचित है। जिस प्रकार भारतीय सैनिक विद्रोह ने अग्रेजो को रियासतो के प्रति नीति बदलने के लिये बाध्य किया उसी प्रकार भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस की बढती लोकप्रियता ने उन्हे पुन नीति बदलने को विवश कर दिया। अग्रेजो ने अग्रेजी भारत मे राष्ट्रीय आन्दोलनो के बढते क्रम को रोकने के लिये राजाओ को सुदृढ दीवार के रूप मे देखा। अग्रेजो को प्रतिक्रियावादी के रूप मे देशी नरेश बहुत ही अच्छे लगे। अत लार्ड कर्जन वाली नीति को आगे चलकर

नरम कर दिया गया जिसके कारण नरेशा मे अंग्रेज विरोधी भावना जागृत न हो सकी, लेकिन जनसाधारण मे जो राष्ट्रीय भावना उदय हुई वह बराबर बढती ही गयी।

सर्वोच्च सत्ता की नीति का विकास किसी सीमा तक राज्यो के लिये हितकर सिद्ध हुआ। यदि हम तत्कालीन परिस्थितियो पर गौर करें तो यह प्रतीत होगा कि उस समय राजस्थान के राज्यो का प्रशासन काफी सीमा तक अव्यवस्थित हो गया था। जोधपुर व उदयपुर जैसे बडे राज्या मे भी जागीरदारो के झगडो व उत्तराधिकार के मामलो को लेकर काफी अव्यवस्था फैल गई थी। ऐसी दशा मे अंग्रेज सरकार जैसी सत्ता ही यहाँ शान्ति व सुव्यवस्था स्थापित कर सकती थी। ऐसी ही सत्ता अंग्रेजी-प्रान्तो व देशी राज्यो के बीच की खाई को पाट कर भारत मे एकता ला सकती थी। अत अंग्रेज सरकार ने राज्यो मे शांति व सुव्यवस्था स्थापित कर भारत के प्रशासनिक जीवन मे एकता लाने का प्रयत्न किया। इसमे कोई सन्देह नही कि अंग्रेजी प्रान्तो व देशी राज्यो के बीच भेद-भाव भी लाने का प्रयत्न किया गया ताकि दोनो एक दूसरे के मामलो मे अलग रहे।

सुधारो की ओर—

नये राजनैतिक परिवर्तनो के कारण रियायतो को भी सुधारो के विषय मे सोचना पडा। चालू प्रशासनिक पद्धति को यदि परिवर्तित नही किया जाता तो परिवर्तित आधुनिक युग के साथ चला नही जा सकता था और न वे रह ही सकती थी। अंग्रेजी भारत के परिवर्तनो को नरेशो तथा उनकी जनता ने पहले तो पसन्द नही किया तथा उन्हे सन्देह की दृष्टि से देखा लेकिन अब जब अंग्रेज भारत के सर्वेसर्वा हो गये तब उनके पाश्चात्य विचार तथा उनकी संस्कृति पूर्वी विचारो तथा संस्कृति को धीरे-धीरे प्रभावित करने लगी। अत नई प्रशासनिक पद्धति तथा राजनैतिक संस्थाये, जो पाश्चात्य विचारो पर आधारित थी, अपनाई जाने लगी। सभी रियासते अब अंग्रेजी सरकार की सलाह तथा निर्देशन पर प्रशासनिक तथा राजनैतिक सुधार करने लगी। अंग्रेजी भारतीय प्रान्तो मे जो भी कार्यवाही की गयी उसी को आवश्यक परिवर्तनो के साथ यहा भी अपनाया गया। परमोच्च शक्ति की नीति के अनुसरण मे अंग्रेज सरकार ने भी देशी राज्यो मे शांति, व्यवस्था, सुरक्षा व कुशल प्रशासन लाने के लिये सुधारो की ओर कुछ ध्यान दिया। इस काल मे भारत के मुख्य केन्द्र रेल द्वारा जोडे गये और इस कारण यहा के

राज्यो मे होकर भी 'रेल की लाइने निकली। ई० सन् 1884 के वाद के वर्षो मे अहमदावाद को आगरा से मिलाने के लिये मारवाड जकशन, अजमेर व जयपुर होकर रेल की पटरी विछाई गई। जयपुर राज्य के वादीकुई से एक और पटरी विछा कर अहमदावाद को अलवर व दिल्ली से भी जोड दिया गया। एक दूसरी रेल पटरी को नीमच से चित्तौड व आगे अजमेर तक पहुँचा दिया गया। जोधपुर व वीकानेर राज्यो ने मिलकर ई० सन् 1889 मे अपनी ही रेल लाइनें चलाई। इसके फलस्वरुप मारवाड जकशन से जोधपुर, मेडता, वीकानेर, भटिण्डा (पजाव) तक रेल लाइने वनाई गई। एक लाइन मेडता से कुचामण रोड व फुलेरा तक तथा दूसरी लाइन लूणी से हैदरावाद (सिन्ध) तक खोली गई। इन लाइनो के वनने मे लगभग 14 वर्ष लगे लेकिन इससे दोनो राज्यो के व्यापार को काफी वढावा मिला व अच्छी आमदनी होने लगी। ई० सन् 1895 मे उदयपुर राज्य ने चित्तौड तक तथा जयपुर राज्य ने ई० सन् 1906 मे सागानेर से सवाई माधोपुर तक रेल की लाइन वनवाई। इन रेलो के इजन, पटरिया, डिब्बे आदि इगलैण्ड से ही आये और इस कारण अप्रत्यक्ष रूप से इगलैण्ड को काफी आर्थिक लाभ हुआ। आरम्भ मे यह रेले, यहा के निवासियो के धन, उनके कई धन्धो और उनके स्वास्थ्य के लिये विनाशकारी और अनेको गावो को उजाड देने वाली सिद्ध हुई। लेकिन इनसे आगे चलकर लाभ कम नही हुए।

रेल पटरियो के अलावा आगरा से जयपुर, अजमेर व डीसा (पालनपुर राज्य) तक तथा नसीरावाद से चित्तौड होकर नीमच तक सडकें वनी। इससे यातायात व व्यापार की वडी सुविधा हो गई तथा अकाल के समय अन्न व चारा लाने ले जाने मे भी सुविधा हो गई। यहाँ के लोगो के धार्मिक आचार विचार पर भी रेलो का महत्वपूण प्रभाव पडा और राजस्थानी समाज के सास्कृतिक ढाचे मे क्रान्तिकारी परिवर्तन आ गया।

इस काल मे विभिन्न राज्यो की डाक पद्धति का भी एकीकरण किया गया और प्रत्येक राज्य मे डाकघर व तारघर खुले जो केन्द्रीय सरकार के नियन्त्रण मे रहे। यो, जयपुर, उदयपुर आदि राज्यो मे उनके डाकघर चलते रहे। ई० सन् 1880 तक सम्पूर्ण राजस्थान मे अग्रेज सरकार के डाकघर स्थापित हो गये। राजस्थान मे तार की सर्वप्रथम लाईन ई० सन् 1864 मे आगरा से अजमेर तक चालू की गई।

राजस्थान मे अनेक तरह के सिक्को का प्रचलन था। प्रत्येक राज्य के, सिवाय सिरोही राज्य के, अपने पृथक सिक्के थे। ई० सन् 1859 से ही यहा के सिक्को पर मुगल बादशाह का नाम लिखा जाना बद हो गया था। इगलैण्ड की महारानी विक्टोरिया के सिक्के चलने लग गये थे। ई० सन् 1873 के बाद चादी के रुपये की कीमत घटने लगी तब ई० सन् 1893 मे अग्रेज सरकार ने अपनी टकसालो मे रुपया ढालना बद कर दिया जिससे अग्रेजी रुपये की दर कुछ बढ गई। अब इस दर को स्थायी रखने के लिये उन्होने राजाओ को फुसलाकर उनकी टकसाले बद कर दी और उनकी टकसालो के सिक्के चादी के भाव खरीद लिये। केवल मात राज्यों–जयपुर, उदयपुर, बू दी, जोधपुर आदि ने फिर भी अपनी टकसाले चालू रखी। इनके सिक्को का प्रचलन उन राज्यो की सीमा तक ही रह गया।

अग्रेज सरकार यह नही चाहती थी कि यहा के राज्यो की सनिक शक्ति बढे अत यहा की सेना का पुन सगठन किया गया। ई० सन् 1870 मे लाड मेयो ने लिखा—"देशी राजाओ के पास काफी सेनायें है। वे राजा अपने मित्र हो सकते है, लेकिन इनके सैनिको पर विश्वास नही किया जा सकता है।" वे अभी तक यह नही भूले थे कि तात्या टोप को देशी राज्यो के विद्रोही सैनिको से ही सहायता मिली थी अत उन्होने ई० सन् 1889 मे जयपुर, जोधपुर, बीकानेर व अलवर राज्यो मे नई सेनाएँ सगठित कराई जो "इम्पीरियल सर्विस ट्रूप्स" कहलाई। ये सेनाएँ रियासता के निवासियो को भर्ती कर बनाई गयी और इनके अधिकारी भी भारतीय थे लेकिन इनका प्रशिक्षण व नियत्रण अग्रेज अधिकारियो द्वारा किया जाता था। इन सेनाओ के कारण अग्रेज सरकार को भरोसा हो गया कि इन राज्यो की सेना से अब कोई खतरा नही है तथा भारत की एकता के लिये यह कहा जाने लगा कि भारत की सुरक्षा के लिये इनका होना आवश्यक है।

अग्रेजी प्रान्तो मे राजस्थान के नमक का निर्यात रोकने के लिए प्रारम्भ मे अग्रेज सरकार ने काफी चौकिया स्थापित की लेकिन इसमे उनको काफी धन खर्च करना पडता था इससे समस्या सुलझी नही थी अत अब साम्भर झील, पचपदरा झील आदि के नमक का एकाधिकार अग्रेजो ने ई० सन् 1869-70 मे जयपुर व जोधपुर राज्य से सधि कर ले लिया।[33] अब अग्रेज सरकार ही नमक का निर्यात करने लगी तथा बेचने लगी। ई० सन् 1879 तथा 1882 के बीच नमक न बनाने तथा नमक पर कोई चु गी या राहदारी वसूल न करने

के लिए अन्य राज्यो से भी सन्धिया की गई।[24] ई० सन् 1900 मे किशनगढ राज्य को बाध्य किया गया कि वह साम्भर झील से लगे रूपनगर तहसील के इलाके मे सिंचाई के लिए कोई बाध न बाधे तथा कुए न खोदे।[25] इन राज्यो को नमक की आमदनी के बदले मुआवजा दिया जाने लगा। इससे यहा के राज्यो की आमदनी को ठेस तो लगी ही यहा के काफी लोग बेकार भी हो गये। केन्द्रीय सरकार के नमक विभाग की खरी आमदनी ई० सन 1903 के अन्त तक एक करोड ग्यारह लाख हो गई,[26] जिसका अर्थ हुआ कि राज्यो की इतनी ही आमदनी समाप्त हो गई। दूसरी ओर नमक तीन गुणा अधिक महगा हो गया जिसका भार जनता पर पडा।

निरकुश व विलासी नरेश

कुछ राज्यो मे सुधार किये जाने से यह नही समझा जाना चाहिये कि राजस्थान की रियासतो के प्रशासन मे सामान्यत सुधार कर दिये गये थे। उनमें अभी तक पुराने ढग की मध्यकालीन व्यवस्था चली आ रही थी। राजा पूर्णतया स्वेच्छारी थे और उनकी दमनकारी शक्तियो पर कोई रोक नही थी। कानून से शासन करने का कम ही विचार किया जाता था। निरकुश राजा मनचाहे ढग से शासन चलाते थे। मेयो कालेज मे शिक्षा प्राप्त राजा केवल दिखावे के लिये आधुनिक ढग के नरेश बन गये। उन्होने केन्द्रीय सरकार के राजनैतिक विभाग द्वारा चयन किये गये दीवानो व मन्त्रियो को नियुक्त किया। इन्होने अग्रेजी प्रान्तो के सुधारो की नकल करना आरम्भ किया, लेकिन वे सुधार केवल नाम के थे। अब तक अग्रेजी प्रान्तो मे विधान सभाओ के निर्माण के लिये कानून बन गये थे। अत यहा भी जनताश्रित सस्थाओ के निर्माण के लिये प्रयत्न किये गये लेकिन वास्तव मे यहा के राजा निरकुश ही रहे। उनके अपनी प्रजा को दबाये रखने के अधिकारो पर कोई रोक नही थी। अग्रेजी प्रान्तों मे प्रत्येक व्यक्ति की जान व माल की रक्षा के लिये कानून या प्रथा द्वारा कई रोकें लगी हुई थी, और यदा कदा इनके विरुद्ध विभिन्न लोगो को अपमानित करने व नुकसान पहुँचाने तथा यहा तक कि हत्या करवा देने की शिकायतें सुनी जाती रहती थी। कई बार स्त्रिया की इज्जत ले लिये जाने की भी शिकायतें हुई। कई राजा अपने विलासी जीवन के लिये बदनाम थे। उनके रनिवासो मे अनेक स्त्रियाँ भरी पडी थी। कई राजाओं ने तो वैश्याओ के पीछे राज्य के लाखो रुपये उडा दिये। जोधपुर नरेश द्वितीय जसवन्तसिंह का एक वश्या नन्ही जान से इतना लगाव था कि स्वामी दयानन्द सरस्वती को

इसके लिये महाराजा की काफी भर्त्सना करनी पडी, लेकिन महाराजा पर इसका कोई प्रभाव नही पडा। इसके विपरीत उस वैश्या ने स्वामीजी के रसोइये को अपने पक्ष मे कर जहर दिलवा दिया जिसके कारण उनकी ई० सन् 1883 मे मृत्यु हो गई। जोधपुर के ही एक दूसरे नरेश सरदारसिंह अपनी शान शौकत बनाये रखने के इतने इच्छुक थे कि ई० सन् 1901 को 17 अक्टूबर को जोधपुर नगर मे ढिढोरा पिटवाया कि महाराजा जिस दिन इगलण्ड से लौटे तब दीपावली की जाये वरना 100) रुपये जुर्माना किया जायेगा। इन्ही महाराजा से ई० सन् 1903 मे फिजूल खर्च के कारण अधिकार छीन लिये गये और पचमढी भेजा गया। ई० सन् 1905 मे पचमढी से लौटने पर सीमित अधिकार भी दिये गये। ई० सन् 1908 मे इन्हे शासन के पूर्ण अधिकार कुछ शर्तों के अधीन ही दिये गये।[27]

इसमे कोई सन्देह नही कि ज्यादातर नरेश अंग्रेजो के कुचक्र मे फस गये थे और उनके इशारो पर ही शासन चलाने लगे थे लेकिन कुछ नरेश फिर भी स्वतन्त्रता पूर्वक शासन चलाने का प्रयत्न करते थे। ऐसे राजाओं के लिये भी अंग्रेज अधिकारियो का विरोध करना आसान नही था। झालावाड नरेश द्वितीय जालिमसिंह ने जब विरोध करने का साहस किया तो उसे ई० सन् 1896 मे राजगद्दी से उतार दिया गया।[28] बाद मे उसके उत्तराधिकारी न होने से झालावाड राज्य के दो टुकडे कर दिये गये। केवल मात्र चौमहला और झालरापाटन छावनी के परगनो को मिलाकर झालावाड राज्य की पुनर्स्थापना की गई तथा शेष भाग को पुन कोटा राज्य मे मिला दिया गया और प्रथम जालमसिंह झाला के ही सम्बन्धी के वशज को नये झालावाड राज्य का शासक बना दिया गया।[29] इस काल मे जब कभी कोई अल्पवयस्क राजा राजगद्दी पर बैठा अंग्रेजो ने अपनी रीजेसी परिषद् उस राज्य मे स्थापित कर दी। बीकानेर कोटा, अलवर आदि राज्यो मे ऐसा ही किया गया।

दयानन्द सरस्वती का जागृति सन्देश

अब तक न केवल राजस्थान बल्कि भारत मे भी एक राष्ट्र का स्पष्ट रूप नही था। अपना प्रात या राज्य ही जनता के लिये सब कुछ था। हिन्दू मुसलमान, मराठा, जाट, राजपूत आदि भेद, इनके एक राष्ट्रीय होने मे रोक लगाये हुए थे। अब नई शिक्षा के प्रभाव से लोग एक राष्ट्र के विषय मे सोचने लगे। जब विदेशी विद्वानो ने यहा के प्राचीन ग्रथो का अध्ययन करना प्रारम्भ किया तथा यहाँ के प्राचीन गौरव के विषय मे लिखने लगे तब यहा के शिक्षितो

ने भी इस ओर ध्यान दिया। इससे उनमे राष्ट्रीय चेतना तथा आत्म-विश्वास जगा तथा अपने राष्ट्रीय रूप को पहचानने का प्रयत्न किया। इस समय भारतीय जनता और विशेषकर राजस्थान की जनता को जागृत करने वालो मे स्वामी दयानन्द प्रमुख थे। वह भारत को उन्नत, स्वतन्त्र, स्वावलम्बी तथा शक्तिशाली बनाना तथा स्वतन्त्र देखना चाहते थे। इसके लिये उसने धर्म और समाज सुधार को प्राथमिकता दी। उसने राष्ट्रीय शिक्षा पर भी अपने ग्रन्थो मे काफी लिखा। स्वय गुज्राती होते हुए भी हिन्दी को सामान्य जनता की भाषा के रूप मे अपनाया और इस कारण न केवल हिन्दी मे ग्रन्थ लिखे बल्कि भाषण भी दिये। धौलपुर, करौली, भरतपुर, जयपुर, उदयपुर, आदि राज्यो मे रहकर उसने न केवल राजघरानो बल्कि सामान्य जनता मे जागृति उत्पन्न की। स्वामी दयानन्द ही पहला व्यक्ति था जिसने यह भावना जागृति की—"कोई कितना भी करे परन्तु स्वदेशी राज्य सवश्रेष्ठ होता है। माता पिता के समान कृपा, न्याय और दया रखते हुए भी विदेशियो का राज्य सुखदाई नही हो सकता है।"[७७] अपने इन अनुभवो का प्रचार उसने राजस्थान के विभिन्न राज्यो मे किया। ये विचार शीघ्र ही भारतीय भाषा के समाचार पत्रो द्वारा भारत भर मे फैल गये। अग्रेज सरकार ने प्रेस के काले कानून बनाकर ऐसे विचारो को रोकने का प्रयत्न भी किया लेकिन विफल रही। स्वामी दयानन्द ने अछूतोद्धार, स्त्री शिक्षा, राष्ट्रीय शिक्षा आदि पर काफी जोर दिया जिसका प्रभाव न केवल राजस्थान बल्कि अन्य प्रान्तो पर भी पडा। स्वामी दयानन्द के ही शिष्यो—श्यामजी कृष्ण वर्मा, केसरीसिह बारहट आदि ने स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिये सशस्त्र क्राति के बीज बोये। स्वामी दयानन्द के अलावा स्वामी विवेकानन्द ने भी राजस्थान मे रहकर लोगो मे जागृति पैदा की। उसने हिन्दू धर्म की श्रेष्ठता बतला कर लोगो मे आत्म विश्वास जगाया।

राष्ट्रीयता का उदय

पश्चिमी शिक्षा के प्रसार के कारण सबसे बडा लाभ भारतीयो को राजनैतिक जागृति का मिला। इस शिक्षा को प्राप्त कर भारतीयो मे राष्ट्रीयता, देशभक्ति, राजनैतिक अधिकार प्राप्ति के लिये चेतना आई। इसके कारण देश के विभिन्न प्रान्तो मे राजनैतिक सस्थाए स्थापित हुई जिनमे 'इण्डियन एसोसियेशन' मुख्य है। ब्राह्मसमाज तथा आर्य समाज ने तो व्यक्तिगत स्वतन्त्रता व समाज मे समानता की भावना भरने मे कोई कसर नही रखी। आर्य समाज ने सम्पूर्ण भारत के लिये एक ही धर्म तथा सस्कृति स्थापित करने

का उद्देश्य बनाया। स्वामी दयानन्द ने ही सबसे पहले 'स्वराज्य' शब्द का प्रयोग किया। उन्होंने विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार करने व स्वदेशी वस्तुओं को अपनाने पर जोर दिया। उन्होंने ही सबसे पहले हिन्दी को भारत की राष्ट्र भाषा बतलाया। इस प्रकार भारत में राष्ट्रीयता की लहर तेजी से फैलने लगी।

उनीसवी शदी के उत्तरार्द्ध में अंग्रेजों को मुसलमानों पर पूरा भरोसा नहीं था। वे मुसलमानों का रुख 1857 के महान् विद्रोह में देख चुके थे। अत उन्होंने हिन्दुओं पर भरोसा करने की ठानी ताकि आपत्तिकाल में वे काम आ सके लेकिन साधारण लोग अज्ञानता व गरीबी के कारण खुद ही परेशान थे। शिक्षित मध्यम वर्ग राजनैतिक रूप से सक्रिय था लेकिन उस पर निश्चित रूप से भरोसा नहीं किया जा सकता था क्योंकि उनमें सामाजिक व आर्थिक कारणों से काफी असन्तोष था। यह देखकर उन्हें यहां के राजाओं, बड़े जमींदारों, जागीरदारों आदि की सहायता लेन का सोचना पड़ा।

राजाओं के साथ की गई सन्धियों की शर्तों की व्याख्या इस प्रकार अंग्रेजी सरकार करती रही कि वे ब्रिटिश सरकार के नियन्त्रण में आते ही गये। इसी से उनकी मर्यादा भी घटती चली गयी। जब भी कोई नया राजा गद्दी पर बैठता था तब उसे मान्यता देना या न देना इंगलैण्ड के बादशाह या उसके प्रतिनिधि वायसराय पर निर्भर था। यदि किसी नाबालिग को राजा का उत्तराधिकारी बनाया जाता तो ब्रिटिश सरकार नाबालिगी के दौरान उस राज्य का शासन भार अपने ऊपर ले लेती थी। सामान्यत किसी राज्य में अव्यवस्था फैलने पर राजा को गद्दी से हटा देती थी। इस अधिकार को ब्रिटिश प्रभुसत्ता का नाम दिया गया।'[1] प्रभुसत्ता को आपत्ति काल में रियासतों के सारे साधनों पर असीमित अधिकार प्राप्त थे। रियासतों की सेना पूर्णतया ब्रिटिश सरकार के निर्देशन में ही काम करती थी। इसी प्रकार सचार के सारे साधन—रेल, तार, डाक आदि भी ब्रिटिश सरकार के नियन्त्रण मे रहते थे।

अब तक अंग्रेजी शासन के प्रति जनता में असन्तोष काफी फैल गया था। सरकार द्वारा गोरों व कालों के बीच भेद-भाव न केवल सरकारी नौकरियों बल्कि न्याय करने में भी रखना, आर्थिक नीति में इंगलैण्ड के हितों को भारत के विरुद्ध प्राथमिकता देना, आदि के कारण जनता समझने लग गई थी कि इन

बुराइयो का अन्त अंग्रेजी साम्राज्य को समाप्त कर पूर्ण स्वाधीनता प्राप्ति पर ही हो सकता है। अंग्रेज भी यह समझने लगे कि इस असन्तोष के कारण कही यहा विप्लव न हो जाये, जिससे सरकार के अस्तित्व को ही खतरा हो जाये। अत ऐसी कोई सस्था का होना आवश्यक है जो सरकार की कमियो तथा उनको सुधारने के विषय मे सुझाव दे सके तथा जनता को भी यह बता सके कि सरकार उनके लिये क्या काम कर रही है। यो इस समय भारत मे "इण्डियन एसोसियेशन" नामक सस्था सुरेन्द्रनाथ बनर्जी की अध्यक्षता मे राजनैतिक कार्य कर रही थी लेकिन अंग्रेजो को उसके विचार ज्यादा प्रगतिशील तथा उग्र लगे। अत एक नई सस्था की स्थापना की ओर उनका ध्यान गया।[32]

काग्रेस की स्थापना

अंग्रेजी साम्राज्य की छत्र-छाया मे भारत के लिए औपनिवेशिक स्वराज्य की प्राप्ति के लिए प्रयत्न करने के उद्देश्य से भारतीय प्रशासनिक सेवा के अवकाश प्राप्त अंग्रेज अधिकारी ए ओ ह्यूम ने 'इण्डियन नेशनल काग्रेस' की स्थापना ई० सन् 1885 मे की।[33] इसकी स्थापना पर तत्कालीन वायसराय लार्ड डफरीन ने आशीर्वाद दिया तथा कई अधिकारियो ने इसके सम्मेलन मे भाग लिया। इसका प्रथम अध्यक्ष डब्ल्यू० सी० बनर्जी को बनाया गया जो अंग्रेजी सभ्यता मे पूर्णतया रगा हुआ था तथा राजनैतिक आन्दोलनो से दूर रहने मे ही काग्रेस का हित समझता था। काग्रेस के पहले सम्मेलन मे भारत के विभिन्न प्रान्तो के 72 प्रतिनिधियो ने भाग लिया जिनमे दो मुसलमान थे। इस अधिवेशन मे भाषण बादशाह के प्रति आदर दिखाते दिये गये लेकिन फिर भी इगलैण्ड की जनता ने काग्रेस की स्थापना को अंग्रेजी सरकार के लिए एक बडा खतरा बतलाया।[34] भारत मे काग्रेस की स्थापना से जनता मे राजनैतिक चेतना और भी ज्यादा बढी। उस समय की चालू राजनैतिक सस्थाएं इसके सामने बौने जैसी लगने लगी। अब काग्रेस ही भारत की मुख्य राजनैतिक सस्था बन गई जिसके इर्द-गिर्द रहते अन्य सस्थाओ और व्यक्तियो ने राजनैतिक प्रगति मे योग दिया जिसके फलस्वरूप आगे चलकर भारत स्वतन्त्र हुआ। प्रारम्भ से ही भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस देशी रियासतो के मामलो मे कोई दिलचस्पी नही लेती थी। अपने प्रारम्भिक तीस वर्षो मे केवल एक बार ही काग्रेस ने देशी राज्यो के मामले मे दिलचस्पी ली। ई० सन् 1896 मे जब झालावाड नरेश जालिमसिंह को पदच्युत किया गया तब काग्रेस ने यह प्रस्ताव पारित किया कि अंग्रेज सरकार को न्यायिक जाच किये बिना किसी भी

नरेश को राजगद्दी से नही हटाना चाहिये। इस प्रस्ताव की ओर सरकार ने कोई ध्यान नही दिया।[35]

अंग्रेजो की ही प्रेरणा से स्थापित कांग्रेस बाद के तीस वर्षो तक अंग्रेजो की आँखो मे खटकती रही। सरकार द्वारा कांग्रेस के द्वारा पारित प्रस्तावो की कोई परवाह नही की जाती थी। ई० सन् 1897 तक कांग्रेस भी केवल प्रस्ताव पास करना ही अपना मुख्य धर्म समझती रही। ई० सन् 1898 मे बाल गंगाधर तिलक का कांग्रेस मे प्रवेश हुआ। उसी वर्ष लार्ड कर्जन भारत का वायसराय बनकर आया। तिलक के हृदय मे देश के लिए कुछ करने की लालसा थी और लार्ड कर्जन के हृदय मे भारत को पूर्णतया दबा रखने की इच्छा थी। तिलक ने अपना नारा दिया—"स्वराज्य हमारा जन्म-सिद्ध अधिकार है और यह मै अवश्य प्राप्त कर रहूँगा।"[16] लार्ड कर्जन के विचार थे—"भारत एक पिछड़ा देश है। वह किसी भी दशा मे पश्चिमी राष्ट्रो की बराबरी नही कर सकता है। अतः यहा की नई राजनैतिक चेतना को समाप्त कर रहूँगा।"[37]

तिलक ने देखा कि कांग्रेस ने केवल प्रस्ताव पास कर सरकार को भेजने का उद्देश्य बना रखा है, जो ठीक नही है। केवल पत्र भेजने से भारत का कोई भला नही होने का है। भारत का मुख्य उद्देश्य स्वराज्य प्राप्त करना है और उसकी प्राप्ति के लिये शिवाजी जैसे वीरो के पथ का अनुगमन करना पडेगा। अत्याचार के सामने झुकना अपनी निर्बलता है। अत्याचार का सामना शक्ति से ही करना पडेगा। तिलक के ऐसे ही विचारो से प्रभावित होकर पूना के चापेकर भाइयो ने पूना के कलक्टर रैण्ड को मार डाला क्योकि उसके अंग्रेज सैनिको ने पूना की जनता को काफी परेशान कर रखा था। सरकार ने इसका अप्रत्यक्ष अपराधी तिलक को माना और उसे राजद्रोह के अपराध मे 18 माह की सख्त सजा दे दी। तिलक को इस प्रकार सजा दिये जाने के कारण भारत मे राष्ट्रीयता की लहर और तेजी से फैली। अब लेख लिखने व भाषण देने से ज्यादा त्याग व कष्ट सहने को सराहा जाने लगा। अब तक कांग्रेसी यही सोचते थे कि भारत मे अंग्रेजी राज ईश्वर की देन है और हमे आशा है कि उनके संरक्षण मे संवैधानिक ढंग से भारत एक दिन स्वराज्य पा लेगा। तिलक जैसे नये राष्ट्रवादी कहने लगे कि "यदि इस प्रकार आशा किये बैठे रहे तो स्वराज्य कभी प्राप्त नही होगा। विदेशी तो और ज्यादा जमा रहने का प्रयत्न करेगा। अतः संवैधानिक ढंग से आंदोलन करना

व्यर्थ है क्योंकि भारत मे कोई सविधान है ही नही। जो कुछ हो रहा है वह प्रशासनिक अधिकारियो की मनमानी से हो रहा है। अत हमारे लिये उनके आदेशो की पालना करना आवश्यक नही है।" काग्रेस के कई नेताओ ने इन राष्ट्रवादियो के विचार को बेकार व भयानक बतलाया। [8] ई० सन् 1905 से नये राष्ट्रवादियो के विचारो व कार्य-प्रणाली से उनका काफी मनमुटाव हो गया। अत महत्त्वपूर्ण राजनैतिक प्रश्नो व समस्याओ मे भी यह बातें देखी जाने लगी।

हिन्दू मुस्लिम भेद-भाव

लगभग 700 वर्षों तक हिन्दुओ व मुसलमानो के साथ-साथ रहने के कारण उनके आपसी भेदभाव काफी कम हो गये थे। अग्रेजो द्वारा भारत पर साम्राज्य स्थापित कर लिये जाने के कारण मुसलमान अग्रेजो के ज्यादा विरुद्ध थे जबकि हिन्दू मुसलमानो के अत्याचारो से छूट जाने के कारण अग्रेजो के प्रति शत्रुता नही रखते थे बल्कि उन्हे अपना हितैषी समझते थे। इसी कारण हिन्दुओ ने अग्रेजी शिक्षा को शीघ्र अपनाया लेकिन मुसलमानो ने अग्रेजी शिक्षा की ओर ध्यान नही दिया। हिन्दू अग्रेजी शिक्षा प्राप्त कर राजनैतिक दृष्टि से जागृत हो गये और अब स्वराज्य प्राप्त करने का प्रयत्न करने लगे। अग्रेजो ने इसमे खतरा समझा और अब इस कारण वे हिन्दुओ के प्रति सशक रहने लगे तथा मुसलमानों को, जो अब तक पूर्णतया जागृत नही हुए थे, हिन्दुओ के विरुद्ध भडकाने लगे कि यहा स्वराज्य हो गया तो बहुसख्यक हिन्दू अल्प-सख्यक मुसलमानो को गुलाम बना देंगे। उनके नेता सैयद अहमद ने ई० सन् 1888 मे एक भाषण मे कहा था कि "हिन्दुओ तथा मुसलमानो के दो राष्ट्र होने चाहिये क्योकि यदि कभी अग्रेज भारत छोडकर चले गये तो दोनो एक समान राजनैतिक जीवन नही बिता सकेंगे। दोनो मे से कोई एक विजयी होकर दूसरे को दबा कर ही रह सकेगा।" उसने यहाँ तक कहा कि "यदि बहुसख्यक हिन्दुओ की सरकार बन गई तो अल्प-सख्यक मुसलमान तलवार के जोर से अपनी सरकार स्थापित करने का प्रयत्न करेंगे।"[39] इस प्रकार प्रारम्भ से ही मुसलमानो ने काग्रेस का विरोध करना शुरू कर दिया।

अग्रेजो ने हिन्दुओ व मुसलमानो के अलगाव को और ज्यादा बढावा दिया। उन्होने अपने हितो के लिये इस अलगाव का प्रयोग किया और उसी के फलस्वरूप आगे चलकर पाकिस्तान की माग ई० सन् 1930 से की जाने लगी कि "हमारा धर्म, सस्कृति, इतिहास, रीति-रिवाज, साहित्य, आर्थिक पद्धति,

उत्तराधिकार, विवाह आदि के नियम हिन्दुओं से पूर्णतया भिन्न हैं। मोटे रूप से ही नहीं बल्कि सूक्ष्म रूप से भी भिन्न है। हिन्दुओं व मुसलमानों में खान-पान व विवाह का भी सम्बन्ध नहीं है।"

लार्ड कर्जन ने यही देख कर राजनैतिक दृष्टि से सर्वाधिक जागृत बंगाल प्रान्त को विभाजित कर दिया ताकि एक भाग में मुसलमान बहुसंख्यक हो जावें और दूसरे भाग में हिन्दू बहुसंख्यक। इस प्रकार भारत के प्रमुख धर्मावलम्बियों को विभाजित कर एक दूसरे के विरुद्ध उकसाने की पहली बार चेष्टा की गई। बंग भंग की यह योजना 16 अक्टूबर, 1905 के दिन लागू की गई। इस योजना को देश-घाती समझकर तब सम्पूर्ण भारत ने इसका विरोध किया। उस दिन हड़तालें हुई तथा लोगों ने व्रत रखे। महात्मा गांधी ने इस विषय में लिखा था—"भारत का वास्तविक जागरण बंगाल के विभाजन के पश्चात् हुआ और वह दिन अंग्रेजी साम्राज्य के विभाजन का दिन माना जा सकता है। बंगाल में जो जागृति आई वह शीघ्र ही उत्तर में और दक्षिण में केप कमोरीन तक फैल गयी।"[40]

बंग भंग के बाद

बंग भंग के बाद भारत में अंग्रेजी सरकार के विरुद्ध आन्दोलन आरम्भ हो गया। जनता को यह पक्का विश्वास हो गया कि अंग्रेजों के भारत में रहते उनकी स्थिति सुधरने की नहीं है। अतः जनता में अंग्रेजी माल का बहिष्कार करने तथा स्वदेशी माल को अपनाने तथा राष्ट्रीय शिक्षा लेने की भावना जागृत हुई। अपनी आर्थिक, सामाजिक व राजनैतिक स्थिति सुधारने के लिये इससे अच्छा और कोई तरीका था भी नहीं। कांग्रेस ने इस आन्दोलन को स्वीकृति दे दी यद्यपि फिरोजशाह मेहता, गोपाल कृष्ण गोखले आदि नम्र दलीय नेता इसके विरुद्ध थे। उनके विचार से ऐसे अग्रगामी तरीकों से कांग्रेस के नष्ट होने का खतरा था लेकिन वास्तव में ऐसा कुछ न हुआ। इसी समय जापान ने रूस पर विजय प्राप्त कर संसार को बतला दिया कि पश्चिमी राष्ट्र अजेय नहीं हैं। अतः भारतीय भी अंग्रेजों को शक्ति का प्रयोग कर देश से बाहर कर सकते हैं। राष्ट्रवादी यह सोचकर सशस्त्र क्रान्ति का सोचने लगे।[41]

राजस्थान में आतंकवादी गतिविधियां (1905–1914)

राजस्थान में स्वामी दयानन्द व स्वामी विवेकानन्द के उपदेशों का नवयुवकों पर काफी प्रभाव पड़ा था। उनके हृदयों में जातीय आत्माभिमान

पुन जागृत हो चुका था। श्यामजी कृष्ण वर्मा जैसे क्रान्तिकारियो ने यहा रहकर उनको स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिये प्रयास करने को उकसाया। बाद मे भारत के स्वदेशी आन्दोलन का भी राजस्थान पर प्रभाव पडा। यहा भी स्वदेशी माल व राष्ट्रीय शिक्षा का प्रचार हुआ। सिरोही राज्य मे तब ही "सम्प सभा" स्थापित हुई। जनता ने इस सभा के कार्यक्रमो मे बडी रुचि बतलाई। पिछडे वर्गो मे इससे बडी चेतना आई। इसकी प्रगति देखकर अग्रेजी सरकार चौंकी और ई० सन् 1908 मे सैनिक कारवाई कर इस सभा को ही समाप्त कर दिया।

ब्यावर मे दामोदर दास राठी क्रान्तिकारी विचारो का व्यक्ति था। वह सशस्त्र क्रान्ति मे विश्वास करता था। अत उसने क्रातिकारियो को सहायता देना प्रारम्भ किया। कई क्रान्तिकारी उसके घर मे शरण लेने लगे। अग्रेज सरकार ने जब गर्म दल वालो तथा क्रातिकारियो का दमन आरम्भ किया तब कई क्रान्तिकारी राजस्थान मे विशेषकर ब्यावर व अजमेर नगर मे आ छिपे। इसी कारण दामोदर दास राठी के घर की तलाशी भी ली गई। ई० सन् 1907 मे जयपुर मे अर्जु नलाल सेठी द्वारा जैन वर्द्धमान विद्यालय की स्थापना की गई। इस विद्यालय मे राष्ट्रीय शिक्षा प्राप्त कर यहा के छात्रो मे देश-भक्ति व बलिदान की भावना जागृत हुई। कई क्रान्तिकारी यहा बराबर आया जाया करते थे। अत यहा क्राति के लिये एक अच्छा दल बन गया जिसमे शाहपुरा का केसरीसिह बारहठ, खर्वा का गोपालसिह, ब्यावर का दामोदरदास राठी व जयपुर का अर्जु नलाल सेठी मुख्य थे।

क्रातिकारियो के लिये यह आवश्यक था कि वे शस्त्रो को इकट्ठा करे या बनाये। अस्त्र-शस्त्र राजस्थान के राज्यो मे ही प्राप्त हो सकते थे क्योकि यहा तब तक शस्त्र कानून लागू नही हुआ था। अत क्रान्तिकारियो ने शस्त्रो का सग्रह करने के लिये एक गूजर नवयुवक भूपसिह को ई० सन् 1912 मे अजमेर भेजा। यहा रहते भूपसिह ने न केवल शस्त्रो का सग्रह किया बल्कि बन्दूको की मरम्मत करना, कारतूस बनाना व भरना भी सीख लिया। उसने ई० सन् 1913 मे "वीर भारत समाज" नामक सस्था क्रान्ति का प्रशिक्षण देने के लिये स्थापित की। ऐसी ही सस्थाए भारत के अन्य प्रान्तो मे भी स्थापित हुई थी। यथा बम्बई प्रान्त मे "अभिनव भारत", मध्य भारत मे "आर्य बाँधव समाज", बगाल मे "अनुशीलन समाज" आदि। राजस्थान के कुछ नरेश-बीकानेर के गगासिह, उदयपुर के फतहसिह व कोटा के उम्मेदसिह,

इस गुप्त सैनिक सगठन से छिपे तौर पर सहानुभूति रखते थे तथा सहायता देते रहते थे।[42] उनके विचार से यह सशस्त्रक्रान्ति सफल होने को थी। अत वे आशा लगाये बैठे थे कि अग्रेजो के जाते ही वे पुन स्वतन्त्र हो जायेगे तथा प्रान्त की बागडोर उनके हाथो मे आ जायेगी।

क्रान्तिकारियो को अपना कार्यक्रम चलाने के लिये धन की आवश्यकता होती तो कई बार वे डकैती करके अपना काम चलाते थे। ई० सन् 1913 मे अर्जुनलाल सेठी के चार छात्रो—मोतीचन्द्र, माणकचन्द्र, जयचन्द तथा जोरावरसिंह (केसरीसिंह का भाई) ने बिहार प्रान्त के आरा जिले के निमेज गाव के एक महन्त की हत्या कर दी। इसके पूव सन् 1912 मे जोधपुर के प्यारेराम साधु की हत्या कोटा मे कर दी गयी। हत्या करने वालो मे लक्ष्मीलाल, हीरालाल, केसरीसिंह, नारायणसिंह, जोरावरसिंह और त्रिवेणी दास उपनाम 'लहेरी' थे। इस साधु को फुसला कर कोटा ले गये और वहाँ लहेरी ने कटार भोक कर हत्या कर दी। वहा राजपूत बोर्डिंग मे मारकर लाश गाड दी गयी। लगभग 6 माह बाद लाश निकाल कर जला दी गई। जोरावरसिंह की आरा (बिहार) वाले मुकदमे मे भी जरूरत थी।[43] आरा निमेज के साधु की हत्या (20 मार्च, 1913) का मुकदमा चला उसमे भी यही अभियुक्त था। जोरावरसिंह के भाई केसरीसिंह को कोटा केस मे आजन्म कारावास की सजा हुई। इन्हे हजारी बाग जेल भेज दिया गया। बाद मे यह सजा 20 वर्ष की सजा मे परिवर्तित कर दी गयी। और सन् 1919 मे उसे 5 वर्ष की सजा भुगतने के बाद कारावास से मुक्त कर दिया गया। जोरावरसिंह बिहार के आरा केस मे आजन्म फरार रहे। इनके मझले भाई किशोरसिंह के बडे पुत्र प्रतापसिंह को बनारस षडयन्त्र केस मे 5 वष का कारावास दिया गया। वह 22 वष की अल्पायु मे बरेली जेल मे शहीद हो गया। भारत सरकार के गुप्तचर विभाग के निदेशक ने उसके लिये लिखा था कि "मैंने आज तक प्रतापसिह जैसा वीर तथा विलक्षण बुद्धि का युवक नही देखा। उसे सताने मे हमने कोई कसर नही रखी परन्तु वह टस से मस नही हुआ।" अग्रेज सरकार को राजस्थान के कुछ लोगो पर सन्देह था अत क्रान्तिकारियो पर कडी दृष्टि रखती थी लेकिन फिर भी इनकी कारवाइया चलती रही। भूपसिंह खर्वा के गोपालसिंह का कामदार बन गया। एक क्रान्तिकारी बालमुकुन्द जोधपुर के महाराजा सुमेरसिंह का शिक्षक नियुक्त हो गया तथा एक अन्य क्रान्तिकारी बीकानेर राज्य की सेवा मे नियुक्त हो गया।

इनकी क्रान्तिकारी गतिविधिया और ज्यादा चलती लेकिन ई० सन् 1913 के लाहोर वमकाण्ड के सिलसिले मे जब अर्जुनलाल सेठी का एक छात्र शिवनारायण पकडा गया तो उसने सब भेद खोल दिया। तत्काल केसरीसिंह, हीरालाल जालोरी, लहेरी व रामनारायण पकडे गये और उन्हे 20 वर्ष की सख्त कैद की सजा दे दी गई। उनकी कुल सम्पति जब्त कर ली गई। जयपुर राज्य द्वारा तग किये जाने व आर्थिक अभाव के कारण अर्जुनलाल सेठी ने अपनी जैन पाठशाला इन्दौर स्थानान्तरित कर दी। वहा वह 1914 मे कैद कर लिया गया और उसके विरुद्ध कोई अपराध प्रमाणित न होने पर भी उसे पाच वर्ष तक नजरवन्द ही रखा गया। अत वाद मे वह 1920 के आरम्भ मे जेल से छोडा गया। इस कारण 1914 के वाद के वर्षो मे राजस्थान मे क्रान्तिकारियो का सगठन टूट गया।

प्रथम विश्व युद्ध

ई० सन् 1914 की 4 अगस्त को यूरोप मे इगलण्ड का जमनी से युद्ध छिड गया। भारत को अग्रेजी साम्राज्य का ही एक भाग होने के कारण इस युद्ध मे भाग लेना पडा। जमनी को ऐसा विश्वास था कि जब इगलैण्ड विपदा मे पडेगा तब भारत मे उसके विरुद्ध विद्रोह हो जायेगा लेकिन इसके विपरीत भारत के सभी वर्गों के लोगो ने अग्रेजो के प्रति स्वामी-भक्ति वतलाई। स्वय अग्रेजो को भारत से इतनी सहायता की आशा नही थी। महात्मा गांधी जैसे राष्ट्रवादी नेता ने सैनिक सेवा मे जाने का विचार प्रकट किया। ई० सन् 1914 के काग्रेस अधिवेशन मे वडे घमड से अध्यक्ष ने कहा—"अपनी इज्जत, स्वतन्त्रता व न्याय के लिये भारतीय अग्रेजो के साथ अपना खून बहा रहे है।" अगले वप 1915 मे कागेस अधिवेशन मे पुन कहा गया कि—"विश्व की इन सकटमय घडियो मे, भारत को अग्रेजी राष्ट्र को यह वतलाना है कि पिछले 150 वर्षो मे उनके शासन के अन्तगत उन्हे जो शान्ति तथा समृद्धि मिली है उसके उपलक्ष मे हम यह वलिदान कर रहे है।" इस युद्ध मे हजारो भारतीय जवानो ने भाग लिया व अपना खून दिया। उस समय सभी भारतीय युद्ध की परिस्थितियो को भारत की राजनैतिक प्रगति हेतु मोडना चाहते थे। गाधीजी ने युद्ध के वाद वायसराय को लिखा था—"यह सत्य है कि हमारा सहयोग देने का कारण यह था कि हम आशा करते थे कि हम अपने उद्देश्य को शीघ्र ही प्राप्त कर लेंगे। इसी विश्वास से ज्यादातर सदस्यो ने सरकार को खुले हृदय से सहयोग दिया।[45] राजस्थान का भी इस युद्ध मे कोई कम योगदान

नही रहा। यहा के राजाग्रो को पता था कि यदि अंग्रेज हार गये तो उनकी काफी दुर्गति होगी। अत उन्होंने अंग्रेजो का पक्ष खुले हृदय से व उदारता से लिया।[45] सभी नरेशो ने युद्ध में स्वय जाने के लिये अंग्रेज सरकार को लिखा। उन्होंने अपने राज्य की सेनाए धन आदि देने की इच्छा प्रकट की। इनमे बीकानेर नरेश अग्रगामी था। जोधपुर के प्रतापसिंह, जो उस समय लगभग 70 वर्ष का था, ने भी युद्ध मे भाग लिया। वायसराय ने जोधपुर, बीकानेर व किशनगढ के नरेशो को युद्ध मे भाग लेने के लिये चुना। भारत की इन सैनिक सेवाग्रो को देखकर ई० सन् 1915 मे इगलैण्ड के प्रधानमंत्री ने भारत की सेवाग्रो की सराहना की और इसके फलस्वरूप भारत के भावी राजनैतिक प्रश्नो को सहानुभूति-पूर्वक निपटाने का आश्वासन दिया।

युद्ध के अंत तक बीकानेर के 2592, किशनगढ के 38, जयपुर के 1181, डू गरपुर के 100 व करौली के 400 सैनिक भर्ती किये गये। राज्यो ने काफी धन भी दिया। जोधपुर ने 35,96,095 रुपये, बीकानेर ने 42,08,865 रुपये, जयपुर ने 1,65,000 रुपये, धौलपुर ने 1,21,000 रुपये, झालावाड ने 3,25 375 रुपये, किशनगढ ने 27,000 रुपये, कोटा ने 1,40,572 रुपये तथा बूंदी ने 1,82,700 रुपये दिये। कई प्रकार के युद्ध-ऋण भी विभिन्न राज्यो ने दिये। इस प्रकार राजस्थान ने अंग्रेजी साम्राज्य के प्रति पूर्ण निष्ठा बतलाई। विभिन्न नरेशो से सहायता प्राप्त कर अंग्रेज जमनी पर 1918 मे विजय प्राप्त कर सके। राजस्थान के कई जवान युद्ध मे मारे गये तथा लाखो रुपये अंग्रेजो के हितो की रक्षा के लिये खर्च किये। इनका भार राजस्थानी जनता पर ही पडा। इस युद्ध मे भाग लेने के कारण राजस्थान को अप्रत्यक्ष रूप से लाभ भी प्राप्त हुआ। राजस्थानी सैनिको के अन्य भारतीय सैनिको के साथ युद्ध मे भाग लेने तथा युद्ध काल मे प्रशासन को ठीक ढ … रखने के लिये एक समान प्रशासनिक कार्यवाहियो ने अंग्रेजी … की जनता को काफी निकट ला दिया। विदेशो से लौटे सैनिक … ता की भावना को देख चुके थे। अत … वैसी ही … य वे भी यहा स्वतन्त्रता प्राप्ति की सो

वडी रियासतो का भारत सरकार से सीधा सम्वन्ध कर दिया जायेगा। राजाओ के शासन मे कोई गडवडी होने पर इसकी जाच एक कमीशन द्वारा कराई जायेगी।"[36] इस प्रकार के आश्वासन पाकर राजा लोग फूले न समाये। वे और ज्यादा अग्रेजी साम्राज्य के भक्त वन गये।

अब तक राज्यो की प्रजा अपने अधिकारो के लिये कोई माग नही कर पाती थी। यो उनका ख्याल कर भारत सरकार ने राजाओ को आदेश दिया कि वे अपना निजी खर्चा राज्य की आमदनी का दस प्रतिशत तक रखे। उनके अन्य अधिकारो को भी कम किया गया। यह सव कुछ करते भी राज्यो की प्रजा के अधिकारो व स्वतन्त्रता के लिये कुछ नही किया गया। अत यहा की प्रजा मे असन्तोष वना ही रहा। यह भी सत्य है कि यहाँ के राजाओ को यह भान नही था कि भारत मे राजनैतिक जागृति तेजी से आ रही है और अव राज्यो के लिये आवश्यक हो गया है कि वे अपने शासन को जनहित के लिये सुधारे लेकिन फिर भी उन्होंने कोई परवाह नही की।

जन आन्दोलन

लार्ड कर्जन की उग्र नीति के कारण अग्रेजी प्रान्तो मे जो राजनैतिक हलचल तथा तीव्र विरोध की भावना फैली उससे घवरा कर अग्रेजो ने भारतीय नरेशो को अपने पक्ष मे करने के लिये उन्हे शासन के मामलो मे काफी छूट दे दी। अव राज्यो के आन्तरिक मामलो मे कम ही हस्तक्षेप किया जाने लगा तथा उन पर अनुचित दवाव डाला जाना भी वन्द कर दिया गया। उनके प्रति विश्वास और सहयोग की नीति वरती जाने लगी। ई० सन् 1911 मे वादशाह पचम जार्ज ने दिल्ली मे राजदरवार किया तव भारतीय नरेशो ने भी अपनी राजभक्ति का प्रदर्शन किया। उदयपुर के महाराणा फतहसिंह भी वादशाह से मिले लेकिन वह न तो शाही जुलूस मे सम्मिलित हुए और न दरवार मे ही उपस्थित हुए।

कई नरेश अव यह समझने लगे कि जनता अव उत्तरदायित्व पूर्ण शासन की स्थापना की माग करेगी। अग्रेजी प्रान्तो मे चल रही राष्ट्रीय स्वतन्त्रता की लहर से यहाँ की जनता खूव प्रभावित होने लगी। अत वीकानेर नरेश गगासिंह ने अपने शासन काल की रजत जयन्ती के अवसर पर ई० सन् 1912 मे वीकानेर राज्य मे "प्रतिनिधि सभा" स्थापित करने की घोषणा कर दी। इस सभा मे 27 नामजद सदस्य (19 कर्मचारी, 8 गैर सरकारी), 5 ताजीमी सरदार और जागीरदार व 3 अन्य सदस्य, 18 निर्वाचित

सदस्य (11 नगरपालिकाओं से, 3 सरदारों से व 4 जमीदारों से) रखे गए।[47] नगरपालिकाओं, सरदारों व जमीदारों की ये संस्थाएँ राज्य के द्वारा निर्मित संस्थाएँ थी। अत इस सभा को जनता की प्रतिनिधि संस्था कहना केवल धोखा देना मात्र था, फिर भी उस समय को देखते हुए यह एक प्रगतिशील कदम था।

स्वतन्त्रता प्राप्ति की लालसा अब धीरे-धीरे गावों मे भी फैल रही थी। नवजागरण की यह किरण ई० सन् 1916 मे उदयपुर राज्य के जागीरी ठिकाने बिजोलिया मे दिखाई दी, जहा के काश्तकारों ने ठिकाने की अनुचित लागबागों तथा अत्याचारों के विरुद्ध आन्दोलन आरम्भ कर दिया। उन्होंने उस वर्ष मे ठिकाने का लगान देना बन्द कर दिया और काश्त करना छोड दिया। उनके इस आन्दोलन का मुख्य नेता साधु सीताराम था।

प्रथम महायुद्ध के आरम्भ के कुछ समय बाद ही भारत के कुछ क्रान्तिकारी—हरदयाल, महेन्द्रप्रताप आदि जर्मन सम्राट से मिले और भारत मे सशस्त्र क्रान्ति की योजना बनाई। उस समय भारत मे बहुत कम अंग्रेजी सेना थी तथा जो सैनिक थे वे पूर्णतया प्रशिक्षित नही थे अत उनसे आसानी से निपटा जा सकता था। यह सोचा गया कि यदि क्रान्तिकारी एक वर्ष तक जम सके तो अंग्रेजो के शत्रु उनकी सहायता कर देंगे और यहा युद्ध में लगे रहने के कारण भारत को आसानी से स्वतन्त्रता मिल जावेगी। अत क्रान्ति आरम्भ करने की तिथि सन् 1915 की फरवरी 21 निश्चित की गई जबकि भारत के सबसे बडे शस्त्रागार फिरोजपुर पर कब्जा किया जाना था। उसके बाद अन्य स्थानों पर क्रान्ति होनी थी। राजस्थान मे गोपालसिंह तथा दामोदरदास राठी को ब्यावर तथा भूपसिंह को नसीराबाद पर कब्जा करने का भार सौंपा गया। सब प्रकार से तैयारिया हो गई लेकिन निर्धारित तिथि के पूर्व ही एक भेदिये ने सब बातें सरकार को बतला दी। अत इन क्रान्तिकारियों को गिरफ्तार कर लिया गया। राजस्थान के इन क्रान्तिकारियो को मेवाड व मेरवाडे की सीमा पर स्थित टाडगढ मे नजरबन्द कर दिया गया। लगभग एक पखवाडे तक नजरबन्द रहने के बाद ये लोग वहा से भाग खडे हुए।[48] भूपसिंह अब विजयसिंह पथिक के नाम से बिजोलिया मे जाकर रहने लगा। उसने किसानों के आन्दोलन को और बढावा दिया। ई० सन् 1917 मे राज्य की पुलिस की सहायता से लगान के अलावा युद्धकोष के लिए धन वसूल किया जाने लगा। पथिक का नेतृत्व पाकर उन्होंने कुछ भी देने से इन्कार कर दिया।

उदयपुर के अंग्रेज रेजीडेन्ट को जब यह पता चला तो उन्होने पथिक की गिरफ्तारी का आदेश दे दिया लेकिन पथिक भेष बदलकर वहा से बूदी होकर कोटा चले गये। अब किसानो का नेतृत्व एक दूसरे नेता माणकलाल वर्मा ने सम्भाल लिया। उसके सहायका मे जयसिंह धाकड, भवरलाल सुनार, प्रेमचन्द भील व घनश्याम जोशी थे। ई० सन् 1916 मे वहा वर्षा के अभाव से फसलें कम हुई लेकिन फिर भी काश्तकारो को लगान के लिए तग किया जाने लगा। उदयपुर के महाराणा ने काश्तकारो को राहत देना उचित समझा लेकिन अंग्रेज अधिकारिया ने, इसमे काश्तकारो को बढावा मिलेगा की आशका बताकर मना कर दिया और दमन करने के लिए पुलिस भेज दी। ग्रामीणो पर गोलिया चलाई गई तथा गावो को लूटा व जलाया तक गया लेकिन किसानो ने सब यातनाएँ सह ली। उन्होने अपने क्षेत्र मे पचायती राज्य स्थापित कर लिया और चर्खे व खद्दर का घर-घर प्रचार कर गृह उद्योगो को बढावा दिया।[49] उनकी आत्म-निर्भरता व सगठन क्षमता के कारण राज्य को झुकना पडा। ई० सन् 1922 मे ठिकाने से किसानो का राजपूताना के ए०जी०जी० की मध्यस्थता से 1922 मे समझौता हुआ। इसके अनुसार अधिकाश कर माफ कर दिये गये, बेगार उठा दी गयी और लगान घटा दिया गया। किसानो की पचायत को मान्यता दे दी गयी।[50] बिजोलिया किसान आन्दोलन की भाति ही उदयपुर राज्य के एक और ठिकाने बेगू मे भी किसान आन्दोलन हुआ।[51] आन्दोलनो की यह लहर और भी जागीरी गावो मे फैलने लगी। आन्दोलनकारी नेताओ का तब खूब महत्व बढ गया। जनता को यह विश्वास हो गया कि यदि वे सगठित हो जावेंगे तो वे अपनी मागो को मनवा भी सकते है।

प्रथम महायुद्ध के पश्चात्

सन् 1917 की 20 अगस्त को भारत सचिव माटग्यू ने घोषणा की कि भारत मे उत्तरदायी सरकार बना दी जावेगी और इसके लिये यथा शीघ्र आवश्यक कार्यवाही की जावेगी। भारतीय नेता बहुत ही प्रसन्न हुए लेकिन शीघ्र ही उन्हे निराश होना पडा। महायुद्ध के समाप्ति के बाद ही प्रधानमन्त्री लायड जार्ज ने 22 नवम्बर 1918 को स्पष्ट कर दिया कि अंग्रेजी सरकार की यह नीति है कि "धीरे-धीरे भारत मे उत्तरदायी सरकार स्थापित की जावे इसके लिये हम कार्यवाही कर रहे है।" अत अंग्रेजी सरकार की मशा अब स्पष्ट हो गई। इस प्रकार प्रथम महायुद्ध मे अंग्रेजो की हार्दिक सहायता करो

के बाद भी भारत के सविधान मे नाम-मात्र के सुधार किये गये। काग्रेस ने इन सुधारो को अपर्याप्त तथा व्यथ माना। कागेस ने अब पुन अपना उद्देश्य "शान्तिपूण ढग से स्वराज्य की प्राप्ति" दोहराया।[52] इसकी प्राप्ति के लिये काग्रेस ने अहिंसात्मक असहयोग आन्दोलन चलाया। भारत सरकार ने इस आन्दोलन को दवाने के लिये नये कानून वनाये जिनमे रोलेट एक्ट सबसे ज्यादा दमनकारी कानून था। उस समय काग्रेस का नेतृत्व मोहनदास कमचन्द गाधी कर रहे थे। उन्होने विरोध प्रदशन के लिए 6 अप्रल 1919 को ग्राम हडताल करने की घोषणा की। इस कारण उस दिन भारत भर मे हडताले, सामूहिक प्रदर्शन व साथ मे कई स्थानो पर दगे भी हुए। सरकार ने इस आन्दोलन को और ज्यादा सख्ती से दवाया। गाधी 8 अप्रेल को गिरफ्तार कर लिये गये। सरकार ने सबसे ज्यादा अत्याचार अमृतसर मे किया जहा 13 अप्रेल 1919 को जलियावाला वाग मे एक शातिपूण सभा पर गोलिया चलाकर सैंकडा स्त्री, पुरुषो व वच्चो को मात के घाट उतार दिया। पजाव मे सैनिक कानून लागू कर दिया। भारतीय जनता मे ऐसे अमानुषिक अत्याचारो के कारण अग्रेजी सरकार के प्रति तीव्र घृणा फैल गई तथा गाधीजी का अहिंसात्मक आन्दोलन लोकप्रिय हो गया।[53] राजस्थान की जनता पर भी इसका काफी प्रभाव पडा। यहा भी राजनैतिक विभाग द्वारा नियन्त्रित राजाओ के शासन के प्रति असन्तोष फैलने लगा तथा उसका विरोध किया जाने लगा।

राजपूताना मध्यभारत सभा

ई० सन् 1918 के दिल्ली काग्रेस अधिवेशन म राजस्थान के कई व्यक्तियो ने भाग लिया। इससे यहा के नेताओ का अग्रेजी भारत तथा अन्य राज्यों के नेताओ से सम्पक हुआ। इस अधिवेशन के वाद गणेश शकर विद्यार्थी, विजयसिंह पथिक, जमनालाल वजाज, चादकरण शारदा, गिरधर शर्मा, स्वामी नरसिंहदेव सरस्वती आदि के प्रयत्नो से 'राजपूताना मध्यभारत सभा" नामक एक राजनैतिक सस्था की स्थापना दिल्ली के चादनी चौक मे स्थित मारवाडी पुस्तकालय मे हुई।[54] इस सभा का मुख्य उद्देश्य रियासतो मे उत्तरदायी सरकार स्थापित करना तथा रियासत के लोगो को काग्रेस का सदस्य वनाना था। इस सस्था का मुख्य कार्यालय कानपुर रखा गया जो उत्तरी भारत मे मारवाडी पू जीपतियो व मजदूरो का सबसे वडा केन्द्र था। यहा से गणेश शकर विद्यार्थी, के सम्पादकत्व मे 'प्रताप' नामक साप्ताहिक भी प्रकाशित होता था। यह पत्र इस क्षेत्र का प्रमुख राष्ट्रीय पत्र था। राजस्थान के राजनैतिक जीवन

के निर्माण मे इस पत्र ने अभूतपूर्व कार्य किया। सभा के सदस्यो ने इस सभा को काग्रेस की सहयोगी सस्था बनाने की पहले कोशिश की लेकिन वे विफल रहे। बाद मे कांग्रेस के नागपुर अधिवेशन (सन् 1920) के समय यह काग्रेस की सहयोगी सस्था मान ली गयी।[65]

सन् 1920 मे काग्रेस का 35वा अधिवेशन नागपुर मे हुआ तब राजपूताना मध्य भारत सभा का भी अधिवेशन 29 दिसम्बर को हुआ। या अध्यक्ष नरसिंह चिन्तामणी केलकर चुने गये थे लेकिन कुछ कारणवश वह नही आ सके। अत जयपुर के गणेश नारायण सोमानी को सर्व सम्मति से सभापति चुना गया।[66] इस सम्मेलन मे रियासतो के प्रतिनिधि काफी सख्या मे थे। सम्मेलन मे प्रस्ताव पारित किया गया कि रियासतो के शासको को अपनी-अपनी रियासत मे शीघ्र उत्तरदायी सरकार बनाने का आग्रह किया जावे। यह भी माग की गयी कि काग्रेस के सगठन मे ऐसा परिवर्तन किया जावे कि जिससे देशी रियासतो की जनता को भी उससे प्रतिनिधित्व मिले।[67]

फरवरी सन् 1920 मे सरकार ने महात्मा गाधी के चलाये आन्दोलन से तग आकर देश के राजनैतिक वातावरण को शान्त करने के लिये काफी राजबन्दियो को छोड दिया। भूपसिंह, जो नाम बदलकर विजयसिंह पथिक के नाम से प्रसिद्ध हो गये थे, का गिरफ्तारी वारण्ट रद्द कर दिया गया। राजस्थान के अन्य क्रान्तिकारी—अर्जुनलाल सेठी, केसरीसिंह बारहठ, गोपालसिंह आदि छोड दिये गये। इन लोगो ने अजमेर मे मार्च सन् 1920 मे 'राजपूताना मध्य भारत सभा' का अधिवेशन जमनालाल बजाज की अध्यक्षता मे किया। बजाज वर्धा मे व्यापार करते थे तथा वहा एक राष्ट्रीय पाठशाला चलाते थे। अत वहा से राजस्थान मे राजनैतिक प्रचार के लिए 'राजस्थान केसरी' नामक पत्र ई० सन् 1920 की अक्टूबर 22 से निकाला जाने लगा। इसका सम्पादक विजयसिंह पथिक तथा प्रकाशक एक दूसरा राष्ट्रीय कार्यकर्ता रामनारायण चौधरी बनाये गये। इस पत्र के लिए आर्थिक सहायता मुख्य रूप से जमनालाल बजाज ने की। 'राजस्थान केसरी' ने प्रारम्भ से ही किसानो व मजदूरो के समर्थन की नीति अपनाई। इसको मारवाडी पूजीपतियो ने पसन्द नही किया। राजस्थान के जन आन्दोलन के नेतृत्व पर भी जमनालाल बजाज आदि पूजीपतियो से पथिक की नही बनी। अत वह ई० सन् 1921 मे राजस्थान लौट आये और अजमेर से उसने 'नवीन राजस्थान' नामक पत्र निकालना आरम्भ

किया। वाद मे इस पत्र का नाम 'तरुण राजस्थान' रख दिया गया।[58] राजपूताना मध्यभारत सभा 1920 के पश्चात् सक्रिय नही रह सकी।

ई० सन् 1920 मे सेवर की सधि के कारण तुर्की का साम्राज्य छिन्न-भिन्न हो गया। इस सधि मे अग्रेजो का मुख्य हाथ था। भारत के मुसलमान तुर्की साम्राज्य की समाप्ति का मुख्य दोष अग्रेजो पर डालकर अग्रेजो के विरोधी हो गये और यहा इनके विरुद्ध खिलाफत आन्दोलन चलाया। सितम्बर 1920 मे काग्रेस के एक विशेष अधिवेशन मे, खिलाफत व पजाब के मामला मे अग्रेजो द्वारा कोई पश्चाताप न किए जाने के कारण राष्ट्रीय इज्जत को बनाये रखने के लिए, स्वराज्य प्राप्त करना आवश्यक मानकर, अग्रेजी सरकार के विरुद्ध अहिंसात्मक असहयोग आन्दोलन चलाने का कायक्रम अपनाया। काग्रेस व खिलाफत समिति ने सयुक्त रूप से तय किया कि माटग्यू चेम्सफोड सुधारो के अन्तगत होने वाले चुनावो का वहिष्कार किया जावे तथा अग्रेजो द्वारा दी गई पदवियां को लोटाया जावे, सरकार तथा उसकी सस्थाओ का, उसके कर्मचारियो, छात्रो, वकीलो आदि द्वारा बहिष्कार किया जावे। इस प्रकार हिन्दुओ व मुसलमानो ने पहली बार एक होकर ई० सन् 1921 के इस महान आन्दोलन मे भाग लिया। इसके कारण अग्रेजा को भय हो गया कि कही उनका भारत से साम्राज्य ही समाप्त न हो जावे। अग्रेजो ने उस आन्दोलन को बुरी तरह से दबाया। 'राजद्रोह बैठक अधिनियम' लागू कर हजारा व्यक्तिया को गिरफ्तार किया गया तथा उन्हे सख्त सजाए दी गई।[59]

प्रथम महायुद्ध के पश्चात् रियासतो के राजनैतिक वातावरण म परिवतन आया। अब अप्राकृतिक सीमाबन्दी समाप्त होने लगी। जनता मे असतोष व्याप्त हो गया। अब वे सवैधानिक सुधारो की माग करने लगे तथा नागरिक अधिकारो की भी माग करने लगे। कम से कम अग्रेजी भारत मे जनता द्वारा उपभोग किये जाने वाले अधिकारो को तो चाहने ही लगे।[60] अब भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अधिवेशनो के साथ देशी रियासता की प्रजा के भी सम्मेलन होने लगे। सन् 1924 मे भारतीय रियासतो की प्रजा के सम्मेलन मे, जो बेलगाव मे एन०सी० केलकर की अध्यक्षता मे हुआ अध्यक्ष ने काग्रेस को देशी रियासतो के मामलो मे पूर्ण रुचि लेने की अपील की।[61] सन 1927 मे देशी रियासतो के कुछ प्रतिनिधियो ने बम्बई मे इकट्ठे होकर अखिल भारतीय प्रजा परिषद का अधिवेशन 17 दिसम्बर 1927 को किया। लगभग 1500 प्रतिनिधियो ने इसमे भाग लिया।[62] इस अधिवेशन की अध्यक्षता रामचन्द्र राव ने की।

अंग्रेजी भारत के जन आन्दोलनो से भारतीय नरेश घबरा गये। वे यह कहने लग कि यह असहयोग आन्दोलन आगे चलकर हिंसात्मक आन्दोलन हो जायेगे। जनता के हाथो मे सत्याग्रह रूपी हथियार घातक सिद्ध होगा।[63] तब ही मोतीलाल नेहरु ने राजपूताना मध्यभारत तथा अजमेर मेरवाडा के राजनैतिक सम्मेलन मे अध्यक्षता करते हुये राजाओ से कहा था कि "वे असहयोग आन्दोलन से घबराये नही क्योकि यह उनके विरुद्ध न होकर केवल अंग्रेजी सरकार के विरुद्ध चलाये जा रहे हैं। देशी रियासतो की प्रजा व राजाओ के बीच आपसी सहयोग बना ही रहना चाहिये और इसी मे दोनो का भला है। यदि असहयोग आन्दोलन रियासतो मे चलाया जायेगा तो इसे जनता का ही अनिष्ठ होगा।"[64] यह सब कुछ होते हुये भी रियासती जनता पर इन आन्दोलनो का प्रभाव पडा और जनता अब अपने अधिकारो के प्रति जागरुक हो गयी।

राजस्थान भी इस आन्दोलन से प्रभावित हुए बिना न रहा। जोधपुर मे एक सत्याग्रही भवरलाल सर्राफ हाथ मे तिरगा भण्डा लेकर फिरा जिसके एक ओर 'महात्मा गाधी' तथा दूसरी ओर 'स्वराज्य' लिखा था। उसने बाजार मे व्याख्यान भी दिया जिसे जनता ने बडे प्रेम व उत्साह से सुना।[65] टोक राज्य की जनता ने एक सभा कर काग्रेस से पूण सहानुभूति प्रदर्शित की और असहयोग आन्दोलन का अनुमोदन किया। वहा के अंग्रेज पुलिस अध्यक्ष ने उनके नेताओ—मौलवी अब्दुल रहीम, सैयद जुबेर मिया, सैयद इस्माइल मिया, काजी महमूद अय्यून आदि को गिरफ्तार कर लिया। लगभग 70 अन्य व्यक्ति भी गिरफ्तार किये गये लेकिन शीघ्र ही छोड दिये गये।[66] जयपुर राज्य के जमनालाल बजाज ने अपनी 'रायबहादुर' की पदवी लौटा दी तथा एक लाख रुपये 'तिलक स्वराज्य फण्ड' मे दिये और उसी समय मुस्लिम लीग को 11,000 रु० तथा खिलाफत समिति को 10,000 रु० भी दिये। बजाज, अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी की 15 सदस्यो वाली कार्यकारिणी समिति के सदस्य भी बनाये गये।[67] उसके बाद तो वह गाधीजी के बहुत ही निकट आ गये। बजाज की देखादेखी राजस्थान के दूसरे मारवाडी व्यापारियो ने भी इस आन्दोलन मे काग्रेस का साथ दिया। इसमे कांग्रेस को काफी आर्थिक सहयोग मिला।

बीकानेर मे राजनैतिक जागृति का आरम्भ सन् 1920 के लगभग हुआ। इस रियासत मे जनता को अपने विचार प्रकट करने की कम ही स्वतंत्रता थी। अपने मौलिक अधिकारो कि माग करना यहाँ अपराध माना

जाता था। धीरे धीरे जब यहा भी अंग्रेजी प्रातो से असहयोग आदोलनो की हवा आने लगी और जनता मे रियासती शासन के प्रति असतोष फैलना आरम्भ हुआ तो महाराजा ने बीकानेर सावजनिक सुरक्षा अधिनियम 4 जुलाई 1932 से लागू कर दिया जो मार्शल लॉ की भाति ही कठोर था। यो उस समय बीकानेर मे कोई सोचता ही नही था कि यहा कोई हिंसात्मक आदोलन होंगे। यहा का प्रेस एक्ट बडा कठोर था जो समाचार पत्रो तथा पुस्तको के प्रकाशन पर काफी प्रतिबध लगाता था। यहा की सस्थाओ के रजिस्ट्रेशन के अधिनियम के अनुसार अनाथालयो, विधवाश्रमो आदि का भी पजीयन होना अनिवार्य था। राजनैतिक सस्थाओ के पजीयन का तो कोई प्रावधान ही नही था। जनता मे यह आम धारणा थी कि उन्हे किसी प्रकार की स्वतन्त्रता नही है और वे एक जेल मे रहते है।[68]

सन् 1921 मे बीकानेर मे मुक्ताप्रसाद वकील आदि ने विदेशी कपडो की होली जलाई तथा शुद्ध खादी पहनने का व्रत लिया। बीकानेर मे खादी भण्डार भी खोला गया। अनेक स्थानो पर पुस्तकालय तथा वाचनालय खोले गये ताकि जनता कुछ जागृत हो। चूरू, राजगढ, रतनगढ, सुजानगढ आदि मे सर्व हितकारणी सभा, विद्या प्रचारणी सभा आदि नाम से समाज सेवा के लक्ष्य को सामने रखकर सस्थाये स्थापित की गयी। इन सस्थाओ की ओर से राजनैतिक साहित्य के पर्चे आदि प्रचारित किये गये।[69]

बीकानेर के महाराजा गगासिंह अपने को ज्यादा ही प्रगतिशील समझते थे। उन्होने शिवमूर्तिसिंह, सम्पूर्णानन्द व आनन्द वर्मा को सरकारी नौकरी से हटा दिया क्योकि वे स्वदेशी वस्त्र धारण करते थे और उन्होने राष्ट्रीय सप्ताह मे कुछ चन्दा 'तिलक स्वराज्य फण्ड' के लिये जमा कराया था। जोधपुर मे महाराजा के सरक्षक प्रतापसिंह इस आन्दोलन के कारण इतने बौखला उठे कि उन्होने विदेशी माल को प्रोत्साहन देना आरम्भ कर दिया जब कि इससे पूर्व वह दयानन्द के उपदेश मान कर हिन्दी भाषा व स्वदेशी माल के प्रचार के लिये काफी प्रयत्न करते रहे थे। अजमेर मे भी अर्जुनलाल सेठी, चादकरण शारदा आदि ने असहयोग आन्दोलन मे खूब भाग लिया व विदेशी माल को नष्ट किया।

उदयपुर के महाराणा फतहसिंह इस आन्दोलन के प्रति छिपे छिपे सहानुभूति रखते थे। भारत सरकार के राजनैतिक विभाग को महाराणा के प्रति पहले ही से शका बनी हुई थी। इस समय सरकार ने उन्हे आदेश

दिया कि वह या तो उनके कहे अनुसार मन्त्रीमण्डल का पुनर्गठन करे या युवराज को शासन के अधिकार सौप कर स्वय राजकाज से अलग हो जावे।"[70] महाराणा ने विवश होकर अपने युवराज भूपालसिह को 28 जुलाई 1921 को शासनाधिकार सौप दिये। युवराज ने नया मन्त्रिमण्डल अग्रेज सरकार की मर्जी के अनुसार बना लिया। राजस्व विभाग जैसा महत्वपूण विभाग एक अग्रेज अधिकारी ट्रैंच को सौप दिया गया। स्पष्ट रूप से अब ऐसा कोई राजा नही था जो अग्रेजो की हा मे हा नही मिलाने वाला हो।

अग्रेजी सरकार की भारत के प्रति ऐसी दमनकारी नीति को देख कर पहली फरवरी 1922 मे "सरकारी अव्यवस्था तथा अत्याचार" के विरुद्ध नागरिक अवज्ञा आन्दोलन चलाने की सूचना गाधी ने सरकार को दी।[71] अब गाधी केवल जनता का नेता ही नही रहे बल्कि वह महात्मा बन गये थे। अत जागरूक भारतीय जनता गाधी के इस प्रस्तावित आन्दोलन मे पूर्ण जोश के साथ भाग लेने को तैयार हो गई। अग्रेज यह देखकर घबरा गये और वे यह सोचने लगे कि भारत उनके हाथ से जाने वाला है। वे कहने लगे कि "हिन्दुओ मे माता के स्थान पर गाधी की पूजा होने लग गयी है।"[72] आन्दोलन की तैयारी जोर पकड ही रही थी कि उत्तर प्रदेश के गोरखपुर जिले के चौरी-चोरा स्थान पर 5 फरवरी को एक हिंसात्मक घटना हो गई जिसमे आदोलन-कारियो की एक क्रुद्ध भीड ने पुलिस थाने पर आक्रमण कर 21 पुलिसमैना व एक थानेदार को जला दिया। अत महात्मा गाधी ने जनता को अहिंसात्मक आन्दोलन के लिये तैयार न मानकर इस आन्दोलन को बन्द करा दिया। जनता मे इससे गाधीजी के प्रति काफी रोष फैल गया और कई नेता गाधी के विरुद्ध हो गये। यह देख कर सरकार ने मार्च 13 को गाधी को गिरफ्तार कर लिया और उन्हे छः वर्ष की सजा दे दी। बाद मे अस्वस्थता के कारण उन्हे फरवरी 1924 मे छोड दिया गया।[73]

इस आन्दोलन ने जनता को राजनैतिक सघर्ष का एक नया तरीका बतलाया और लोगो को अहिंसात्मक क्रान्ति के लिये तैयार कर दिया। लोगो मे आत्मविश्वास जगा। अब उनके हृदय से अग्रेजी सरकार की अपार शक्ति का भय जाता रहा। स्वदेशी वस्तुओ को अपनाया जाने लगा। खादी राष्ट्रीय देशभक्तो का पहनावा हो गया। काग्रेस जनता की सस्था बन गई। इसके साथ ही इस आन्दोलन के समाप्त होते होते हिन्दू-मुस्लिम वैमनस्य भी ज्यादा बढ गया। तुर्की के जिस खलीफा के लिये मुसलमान अग्रेजो के

आदोलन कर रहे थे, वही तुर्की के कमालपाशा द्वारा अपने देश मे भगा दिया गया और उसने अंग्रेजो की शरण ले ली। अत मुसलमानो के सरकारपरस्त नेता राष्ट्रवादी मुसलमानो व कांग्रेसियो के विरुद्ध प्रचार करने लगे कि ये आन्दोलन हिन्दू साम्राज्य स्थापित करने के लिये किये जा रहे है। अंग्रेजी सरकार हिन्दू-मुस्लिम विरोधी भावना भडकाने मे ही अपना हित समझती थी। अत अनेको स्थानो पर हिन्दू-मुस्लिम दंगे हुए जिससे आपसी सौहार्द भाव बिलकुल समाप्त हो गया। अजमेर मे 1923 मे भीषण हिन्दू-मुस्लिम दगा हुआ जिसमे कई हिन्दू मारे गये। ख्वाजा साहब की दरगाह पर भी सेना को गोली चलानी पडी। अर्जुनलाल सेठी घायल हो गये और चांदकरण शारदा को अजमेर छोडना पडा।[74]

राजस्थान सेवा संघ

फरवरी 1921 मे राजस्थानियो मे संगठन एव राष्ट्रीयता के भावो की वृद्धि करने तथा राजनैतिक कार्यकलापो को और बढावा देने के लिये राजस्थान मे विजयसिंह पथिक, रामनारायण चौधरी व हरिभाई किंकर के प्रयत्नो से "राजस्थान सेवा संघ" की स्थापना की गई। पथिक इसके अध्यक्ष तथा चौधरी मंत्री बने। इस संघ के सदस्य वही हो सकते थे जो अपने कुल समय तथा शक्ति से राजस्थान की सेवा करने का व्रत लेते थे। प्रत्येक सदस्य अपने तथा अपने आश्रितो के लिये एक सौ रुपये मासिक से ज्यादा खर्चा नही ले सकता था। विजयसिंह पथिक ने तो अपना खर्चा काफी समय तक आठ रुपये मासिक तक ही सीमित रखा था।[75] इसके मुख्य कार्यकर्ता श्रीमती अन्जनादेवी, माणकलाल वर्मा, नानूराम व्यास, शोभाराम गुप्त, लादूराम जोशी आदि थे जो सामान्यत तीस रुपये मासिक खर्चा लेते थे। संघ की शाखायें—जयपुर, बीकानेर, जोधपुर, सीकर, कोटा, खेतडी आदि स्थानो पर स्थापित हुईं। जोधपुर मे 'मारवाड सेवा संघ' के अलावा 'मारवाड हितकारिणी सभा' ई० सन् 1915 से काम कर रही थी। इसका संगठन चांदमल सुराणा ने मारवाड के लोगो के सामाजिक तथा आर्थिक हितो के रक्षार्थ किया था। ई० सन् 1920 से इसका संचालन जयनारायण व्यास के हाथो मे आया। उनके समय मे इसकी सदस्य संख्या 10,000 तक पहुच गई। राजनैतिक क्षेत्र मे तब से ही वह प्रसिद्धी पा गये और 'लोकनायक' कहलाने लगे।[76]

भील आंदोलन

इसी समय उदयपुर राज्य के भोमट क्षेत्र मे मोतीलाल तेजावत ने भील लोगो मे सेवा कर उनको जागृत किया। सन् 1922 मे उसके नेतृत्व मे बढे

लगान को कम करने, बेगार न लिये जाने, महाजन, वोहरो आदि द्वारा अनुचित ब्याज न लिये जाने के विरुद्ध जो आन्दोलन चला वह शीघ्र जोधपुर, सिरोही, दांता, पालनपुर व ईडर तक फैल गया। सरकार ने इसको दबाने में कोई कम प्रयत्न नहीं किये। जोधपुर राज्य के सुमेरपुर के आसपास के गाँवों में भीलों व गिरासियों को दबाने के लिये 7 फरवरी 1922 को जोधपुर में सरदार रिसाले के दो दल भेजे गये। भीलों व गिरासियों ने सेना के डर से लगान देने का इकरार लिख कर दे दिया। उदयपुर राज्य के अंग्रेज सेना अधिकारी मेजर सटन ने भोमट व कोटडा में भीलों पर गोलियां चलवाई जिससे लगभग 200 व्यक्ति मारे गये। भीलो के दो गाँव—भूला व वालोलिया (सिरोही राज्य) जला दिये गये। मोतीलाल तेजावत को अज्ञातवास में जाना पडा और 7 वर्ष बाद जब वह देशी राज्य लोक परिषद् की बम्बई में होने वाली बैठक में उपस्थित हुए तब अपने साथियों की सलाह से उन्होंने उदयपुर राज्य को आत्मसमर्पण कर दिया। इसके बाद उन्हें 7 वर्ष जेल में तथा 1947 तक नजरबन्द के रूप में रहना पडा।[7]

किसानो का आन्दोलन उदयपुर राज्य के बेगू ठिकाने में तथा बून्दी राज्य के कुछ गांवों में भी उग्र रूप से फैला। बेगू में तो माल अधिकारी ट्रैंच स्वयं गांव जलाने के लिये मिट्टी के तेल के पीपे, पुलिस आदि को लेकर गया और गाँवों में आग लगवा दी। पुरुषों के साथ स्त्रियों को भी नंगा कर पीटा गया। लगभग 500 व्यक्तियां, जिनमें लगभग 100 बच्चे थे, बुरी तरह सताये गये। जनता से तंग आकर 4 जुलाई 1923 को ठिकाने को समझौता करना पडा। किसान आंदोलन के फलस्वरूप बेगू राव को लगभग 3 वर्ष तक उदयपुर में नजरबन्द रहना पडा। 1 मई 1926 में उसे पुनः अधिकार मिले तब वह 2 मई को बेगू गये।[78]

मेवाड के किसान आंदोलन के कारण पथिक व वर्मा के अलावा हरिभाई किंकर को जेल जाना पडा। रामनारायण चौधरी, सीताराम दास साधु, प्रेमचन्द भील पर मुकदमे चले। पथिक, चौधरी, हरिभाई दिनकर व हरिभाऊ उपाध्याय मेवाड से निर्वासित किये गये। इससे उदयपुर राज्य के अलावा बून्दी, कोटा, सिरोही आदि राज्यों के किसानों में काफी असंतोष फैल गया। राजस्थान के बाहर के समाचारपत्रों ने इस असंतोष व अमानुषिकता का खूब प्रचार किया। यह देखकर सरकार ने राज्यों में ऐसे प्रचार को रोकने के लिये सितम्बर 1922 में 'भारतीय राज्यों में असंतोष विरोधी अधिनियम' लागू

कर दिया। इस अधिनियम को लागू करने का अंग्रेज सरकार का मुख्य उद्देश्य राजाओं के हाथ मजबूत करना था तथा उनकी इज्जत बनाये रखना था। इस अधिनियम से राजाओं के विरुद्ध कुछ भी छापना या प्रकाशित करना अपराध माना गया। जिसकी सजा 5 वर्ष तक की कैद भी थी। इस अधिनियम के बारे में अंग्रेजी पार्लियामेंट में भी काफी विरोध हुआ। भारतीय नेताओं व समाचार पत्रों ने भी इसका विरोध किया।[79] इसी वर्ष बिजोलिया में किसानों के संगठित सत्याग्रह की सफलता तथा उसका प्रभाव पड़ौसी राज्यों में बढ़ता देखकर, भारत सरकार के राजनैतिक विभाग के इशारे से उदयपुर राज्य ने किसानों व ठिकाने के बीच पट कर समझौता करा दिया। किसानों की अधिकतर मांगें मान ली गई। किसान आन्दोलन के कारण राजस्थान सेवा संघ के ज्यादातर कार्यकर्ता दिसम्बर 1923 तक गिरफ्तार कर लिये गये। ज्यादातर गिरफ्तारियां उदयपुर राज्य में की गई। मुकदमा चलाने के बाद मेवाड़ प्रवेश निषेधाज्ञा लगाकर उनको वहां से बाहर निकाल दिया गया। विजयसिंह पथिक पर बेगूं आन्दोलन के सिलसिले में राजद्रोह का अपराध लगाया गया और उसका मुकदमा साढ़े तीन वर्ष तक चलता रहा। इस कारण लगभग साढ़े तीन वर्ष तक नजरबन्द रहने के बाद वह ई० सन् 1927 में छोड़ा गया।[80]

ई० सन् 1924 में यहां के राज्यों की आर्थिक स्थिति खराब होने लगी। राजाओं के निजी खर्च तथा शासन प्रबन्ध के खर्च काफी बढ़ गये थे। व्यापार में मन्दी चल रही थी। अतः विभिन्न राज्यों में भूमि कर लगान बढ़ाया जाने लगा। पशुधन बाहर भेजे जाने लगा। इससे किसानों व जनता में असंतोष बढ़ गया और आन्दोलन किये जाने लगे। इस वर्ष जब मारवाड़ में मादा जानवरों (गाय, भेड़ व बकरी) की निकासी ज्यादा ही होने लगी तब वहां की जनता ने निकासी रोकने के लिये ... की ओर ...
गाड़ियों के सामने धरना दिया। इस ...
15 अगस्त 1924 से मादा पशुओं की निक ...
की आर्थिक स्थिति ठीक न होते हुए भी ...
साथ 1925 में इग्लैण्ड ...
सरकार ने इस आन्दो ... से ...
व्यास, चांदमल सुराणा ...
जयनारायण व्यास तब

सम्पादक बन गये जिसके माध्यम से राज्य प्रशासन के विरुद्ध प्रचार अभियान चलाया। बाद मे दिसम्बर 1925 मे सभी राजनैतिक कार्यकर्ताओं को माफी दे दी गई।[81]

ई० सन् 1925 की 14 मई को अलवर राज्य के निरकुश शासन के विरुद्ध उसके एक गाव नीमूचाणा के किसानो ने विराट प्रदर्शन किया। अलवर नरेश जयसिंह अग्रेजो का बड़ा भक्त बना हुआ था। उसने अग्रेज सरकार से इशारा पाकर वहा के ग्रामीणों को गोलियों से भुन दिया। पचास स्त्री-पुरुष मारे गये व सैकडो झोपडे जला दिये गये। राज्य की ओर से पीडितो की कोई सहायता नही दी गई। महात्मा गाधी ने इस काण्ड को जलियावाला बाग काण्ड से भी अधिक वीभत्स बतलाया। सभी भारतीय समाचार पत्रो ने इस काण्ड की घोर निन्दा की।[82]

जयपुर राज्य के शेखावटी व खेतड़ी के जागीरी क्षेत्रो मे भी किसानो ने जागीरदारो से तग आकर ई० सन् 1925 मे प्रदशन किये लेकिन उनका निर्दयतापूर्वक दमन किया गया। किसानो को घोडो की पूछो से बाध कर दौडाया गया। किसान नेताओ को राज्य से बाहर निकाल दिया गया। बेगार व ऊची लगान दरे व लाग बागे ली जाती रही।[83]

अप्रेल 1926 मे जोधपुर राज्य के तत्कालीन प्रधानमत्री सुखदेवप्रसाद के स्वेच्छाचार तथा चरित्रहीनता से तग आकर जोधपुर की जनता ने जयनारायण व्यास तथा भँवरलाल सर्राफ के नेतृत्व मे एक आन्दोलन किया। यह माग की गई कि प्रधानमत्री को हटाया जावे तथा शासन मे सुधार किये जावे। इस आदोलन के कारण भँवरलाल जेल मे डाल दिया गया लेकिन अन्त मे राज्य ने प्रधानमत्री को हटा दिया और प्रशासन मे सुधार किये।[84]

जयपुर राज्य मे भी असतोष काफी फैला हुआ था। यह असतोष तब फूट पडा जब वहा के एक तागे वाले को एक पुलिसमेन ने पीट दिया। इस पर वहा की जनता न पहली सितम्बर 1927 को विशाल प्रदर्शन किया तथा 5 दिन तक हडताल रखी। जनता पर लाठियो की वर्षा की गई लेकिन जनता ने परवाह नही की। इस अवसर पर उन्होने अपराधी पुलिस कर्मचारियो को सजा देने, राज्य की मत्री परिषद मे जनता के दो प्रतिनिधि लेने तथा राज्य की आर्थिक स्थिति की जाच करने के लिये एक समिति स्थापित करने की माग की।[85]

उदयपुर राज्य मे नया भूमि बन्दोबस्त (1926) हो जाने पर भूमि का लगान बटा दिया गया। पुरानी लाग बागे पहले की तरह ही चलती रही। उदयपुर राज्य का प्रधानमन्त्री अब सुखदेवप्रसाद बन गया था। जोधपुर की तरह ही वह यहा भी किसानो को दबाने लगा। बिजोलिया मे समझौते के अनुसार किसानो की मागे पूरी नही की जा रही थी। अत यहा के लगभग 800 किसानो ने भूमि से स्तीफा दे दिया।[86] राज्य ने ये जमीने महाजनो, हरिजनो और जागीरदारो को नीलाम कर दी। ई० सन् 1927 मे पथिक छुट गये थे लेकिन उसे उदयपुर राज्य मे घुसने की मनाही थी। अत वह ग्वालियर राज्य से किसान आन्दोलन चलाने लगे। राज्य ने बिजोलिया के किसानो का पुन दमन किया। इस सत्याग्रह मे माणक्लाल वर्मा, शोभालाल गुप्त, अचलेश्वरप्रसाद शर्मा आदि बुरी तरह परेशान व अपमानित किय गये। अत मे जमनलाल बजाज ने अजमेर के कांग्रेसी नेता हरिभाऊ उपाध्याय को उदयपुर राज्य व बिजोलिया के किसानो के बीच समझौता कराने भेजा। उसने राज्य से मिलकर ई० सन् 1929 मे समझौता करा दिया। यह ध्यान देने की बात है कि 1927 मे ही रामनारायण चौधरी, शोभालाल गुप्त, विजयसिंह पथिक व माणिक्यलाल वर्मा के बीच कुछ निजी कारणो से मतभेद हो गये थे। इस कारण इस समझौते से किसानो को कोई विशेष लाभ नही हुआ। आपसी मतभेद के कारण राजस्थान सेवा सघ जैसी तेजस्वी सस्था का विघटन हो गया।[87] इसके बाद ही बिजोलिया का खादी उत्पादन केन्द्र जयपुर राज्य मे गोविन्दगढ ले जाया गया। अब तक चर्खा सघ द्वारा खादी उत्पादन केन्द्रो की स्थापना राजस्थान के कई गावो मे भी हो चुकी थी। अत इसके साथ ही राष्ट्रीय भावना का प्रचार भी बराबर होता रहा।

ई० सन् 1929 मे जयनारायण व्यास तथा उसके साथियो ने गावो मे राजनतिक चेतना लाने के लिये मारवाड हितकारिणी सभा का एक सम्मेलन बुलाने के लिये ब्यावर के आसपास के जागीरी गावो—चलुन्दा, बगडी, रायपुर आदि मे प्रचार आरम्भ किया। महाराजा को जब यह पता चला तो उन्होने 12 सितम्बर को परिषद पर रोक लगा दी। व्यास ने इस कारण 'तरुण राजस्थान' मे एक लेख लिखकर जोधपुर के महाराजा उम्मेदसिंह के विरुद्ध काफी लिखा और इस लेख की प्रतिया जोधपुर भेजी जिनको भँवरलाल सर्राफ ने नगर मे बाटा। सितम्बर 10 को जयनारायण व्यास व आनन्दराज सुराणा ने ब्यावर मे एक सभा बुलाकर महाराजा के विरुद्ध भाषण भी दिये।

तब ही एक पुस्तक "पोपांबाई की पोल" नाम से बटवाई गई जिसमे महाराजा के शासन के विरुद्ध काफी व्यग्य था। अत जयनारायण व्यास, आनन्दराज सुराणा व भँवरलाल सर्राफ के विरुद्ध राजद्रोह का अपराध लगाया जाकर उन्हे राज्य की जेल मे डाल दिया गया।[88]

नई राजनैतिक सस्थायें

सन् 1927 मे विभिन्न राज्यो के कार्यकर्ताओ ने मिलकर 'अखिल भारतीय देशी राज्य लोक परिषद' के नाम से एक सस्था स्थापित की। इसका प्रथम अधिवशन 16 व 17 दिसम्बर 1927 को बम्बई मे किया गया जिसमे भारतीय प्रान्तो व देशी राज्यो को मिलाकर एक भारतीय सघ राज्य की स्थापना कर, सघ परिषद मे देशी राज्यो के निर्वाचित प्रतिनिधि लेने की माग की गई। इसमे नेनूराम (कोटा), शकरलाल शर्मा (अजमेर), जयनारायण व्यास व कन्हैयालाल कलयत्री (जोधपुर), रामदेव पोद्दार व कानकिशन पोद्दार (बीकानेर) और त्रिलोकचन्द माथुर (करौली) कार्यकारिणी के सदस्य लिये गये। विजयसिंह पथिक को उपाध्यक्ष और रामनारायण चौधरी को राजस्थान और मध्यभारत के लिये प्रान्तीय सचिव बनाया गया। इस परिषद की स्थापना से राज्यो मे राजनीतिक चेतना की प्रगति पर बहुत प्रभाव पडा।[89]

ई० सन् 1924 मे पथिक की गिरफ्तारी के बाद 'राजस्थान सेवा सघ' का काय मन्द पड गया था। काग्रेस मे अब तक दो दल हो गये थे जिनमे एक दल गाधीवादियो का था जिसका नायक जमनालाल बजाज था। उसका स्थानीय प्रतिनिधि हरिभाऊ उपाध्याय था। काग्रेस के दूसरे दल का नेतृत्व अर्जुनलाल सेठी कर रहा था। उसकी अजमेर व ब्यावर की शाखा मे कुछ काम हो रहा था लेकिन पुष्कर, केकडी, कोटा, करौली, जोधपुर आदि की शाखा नाम-मात्र की थी। इन दोनो दलो मे पारस्परिक सहयोग का अभाव था। ई० सन् 1927 मे कैद से छूटने पर पथिक को महात्मा गाधी ने साबरमती बुलाया। गांधीजी की इच्छा थी कि पथिक जमनालाल बजाज के पथ-प्रदशन मे राजस्थान मे काम करे लेकिन पथिक नही माने। वह केवल सहयोग रखने को तयार थे। अत दोना दलो मे भीतरी मत-भेद बढता ही गया। सेवा सघ शीघ्र ही समाप्त हा गया। अर्जुनलाल सेठी तथा हरिभाऊ उपाध्याय के बीच मे भी दल का चुनाव युद्ध छिड गया। दोनो ओर से कई प्रकार की अवाछनीय कार्रवाइया हुई। अन्त मे सेठी को हार खानी पडी।[90] उसका राजनैनिक जीवन ही समाप्त हो गया। प्रान्तीय काग्रेस मे गाधीवादी दल की प्रधानता

हो गई लेकिन फिर भी पारस्परिक मतभेद समाप्त नहीं हुए। अत कांग्रेस संगठन उतना शक्तिशाली न हो सका जितना कि होना चाहिये था।

नरेन्द्र मण्डल

वायसराय लॉर्ड लीटन का प्रस्ताव था कि सरकार की सहायता के लिये भारत के बड़े-बड़े राज्यों के नरेशों की भारतीय प्रिवी कौंसिल बनाई जावे लेकिन उसके समय में यह नहीं हो सका। बाद में लॉर्ड कर्जन ने यह घोषणा की कि भारतीय साम्राज्य संगठन में देशी नरेशों का महत्वपूर्ण स्थान है। अत देशी नरेशों की कौंसिल स्थापित की जावे लेकिन वह भी अपने विचार कार्य-रूप में परिणित नहीं कर सका। इसी प्रकार लॉर्ड मिण्टो ने भी एक शाही सलाहकार परिषद बनाने का प्रस्ताव रखा था। प्रथम विश्व युद्ध के समय यहां के राजाओं ने इतना दिल खोल कर अंग्रेजों की सहायता की थी कि ब्रिटिश सरकार ने यह उचित समझा कि राजाओं की आवाज बुलन्द करने के लिये कोई संस्था हो। अत उनके आदेश से वायसराय लॉर्ड चेम्सफोर्ड ने ई० सन् 1916 में नरेशों का सम्मेलन बुलाया। युद्ध के बाद साम्राज्य की पहली युद्ध परिषद तथा बाद में वार्साई की सन्धि परिषद में भारतीय नरेशों के प्रतिनिधि के रूप में बीकानेर नरेश गंगासिंह को भेजा गया।[1] इस प्रकार भारतीय राजनैतिक क्षेत्र में नरेशों का महत्व बढ़ने लगा।

ई० सन् 1919 में मांटेग्यू-चेम्सफोर्ड रिपोर्ट में बतलाया गया कि नरेशों की एक परिषद होना आवश्यक है क्योंकि "ऐसे अनेक प्रश्न आ जाते हैं जो या तो सामान्यत देशी राज्यों से सम्बन्धित होते हैं या समस्त साम्राज्य और अंग्रेजी भारत एवं देशी राज्यों पर समान असर डालने वाले होते हैं। वायसराय ऐसे मामलों को कौंसिल के पास भेजे और राजाओं के विचारपूर्ण वाद विवाद से सरकार लाभ उठावे।" इसी वर्ष देशी नरेशों का एक सम्मेलन जिसमें उपर्युक्त प्रस्तावों पर विचार कर ऐसी कौंसिल का नाम 'नरे का प्रस्ताव पारित किया गया। इस प्रस्ताव को ब्रिटिश पर लिया। अत 1921 की 8 फरवरी को ' हुआ।[2]

नरेन्द्र मण्डल में कुल 120 सदस्य—
... तथा ... 12 द्वितीय श्रेणी के 127 नरे
... थे। ... 327 राज्यों का कोई प्रतिनिधि
... था। ... नागपुर, ... व ...

18 राज्य प्रथम श्रेणी मे आ गये थे। इसका अधिवेशन प्रतिवर्ष जनवरी या फरवरी मे दिल्ली मे होता था। इसकी अध्यक्षता वायसराय करता था लेकिन उसकी अनुपस्थिति मे चासलर करता था जो प्रतिवर्ष नरेन्द्र मण्डल द्वारा चुना जाता था। मण्डल द्वारा उन्ही विषयो पर विचार किया जाता था जिनकी वायसराय स्वीकृति देता था। ई० सन् 1927 तक इसका अधिवेशन बन्द कमरे मे होता था लेकिन 1928 से खुला अधिवेशन होने लगा। मण्डल द्वारा एक स्थाई समिति, जिसमे चार सदस्य होते थे, चुनी जाती थी। इनमे राजस्थान, बम्बई, मध्यभारत तथा पजाब के राज्यो का एक-एक सदस्य होता था। स्थाई समिति की बैठक वर्ष मे दो या तीन बार होती थी।[93]

नरेन्द्र मण्डल के कर्त्तव्य व अधिकार, नरेन्द्र मण्डल की स्थापना के समय सम्राट की ओर से की गई शाही घोषणा मे बतला दिये गये थे—

"वायसराय नरेन्द्र मण्डल से उन मामलो पर सलाह लेगे जो सामान्यत देशी राज्या से सम्बन्धित होगे और जिनका प्रभाव देशी राज्यो तथा अंग्रेजी भारत या मेरे साम्राज्य के अन्य भागों पर सम्मिलित रूप से पडता हो। किसी राज्य विशेष अथवा देशी राज्यो के नरेशो के व्यक्तिगत मामलो या किसी राज्य विशेष और मेरी सरकार के सम्बन्धो से इसका कोई सम्बन्ध नही होगा। राज्या के वर्तमान ढग और उनके कार्य की स्वतन्त्रता मे इससे कोई बाधा नही पडेगी।"[94]

नरेन्द्र मण्डल मे कठिनाई से 50 सदस्य ही भाग लेते थे और ये सदस्य भी सभा भवन मे कम ही बैठते थे। राज्यो की प्रजा का न तो प्रतिनिधित्व था और न उनके हितो के लिये कोई बात ही की जाती थी। कोई भी पारित प्रस्ताव उपस्थित या अनुपस्थित सदस्यो पर बिना उसकी स्वीकृति के लागू नही हो सकता था।[95] अत यह केवल सलाहकार सस्था बन कर रह गया। इस प्रकार नरेन्द्र मण्डल की स्थापना के कारण 562 राज्य आपस मे बँट गये। बडे राज्य छोटे राज्यो से अलग हो गये। अत नरेन्द्र मण्डल के कारण राजाओं मे सगठन होने के बदले विघटन हो गया।[96] भारत के पाच राज्यो के नरेश ही नरेन्द्र मण्डल मे ज्यादा रुचि लेते थे जिनमे बीकानेर व अलवर नरेश मुख्य थे।

इस समय जन आन्दोलन तेजी से चल रहे थे जिनका मुख्य उद्देश्य स्वराज्य प्राप्त करना था। अत नरेन्द्र मण्डल का इस ओर विशेष ध्यान गया और उसने यह प्रयत्न किया कि देशी राज्यो का भारत सरकार तथा ब्रिटिश

सरकार से वास्तव में क्या राजनीतिक सम्बन्ध हैं, इसका खुलासा हो जाय। यों राजाओं से अपनी वास्तविक स्थिति छिपी नहीं थी लेकिन इस बात से राजनैतिक आन्दोलनों का विचार कर वे कुछ लाभ उठाना चाहते थे। अतः कितने ही नरेशों ने यह मांग की कि सर्वोच्च सत्ता के साथ उनके सम्बन्धों का खुलासा होना आवश्यक है और उसके अनुसार ही व्यवहार होना चाहिये। राजाओं की इसी इच्छा का ख्याल कर वायसराय ने राजाओं के प्रतिनिधियों की एक बैठक मई 1927 में बुलाई। इस बैठक में यह निर्णय किया गया कि एक समिति राजाओं के भारत सरकार तथा ब्रिटिश सरकार से सम्बन्धों की जांच के लिये नियुक्त की जाय।[9]"

बटलर जांच समिति

देशी राज्यों तथा ब्रिटिश सरकार के बीच क्या सम्बन्ध थे, इसका उल्लेख हमें वायसराय लॉर्ड रीडिंग के 27 मार्च 1926 के पत्र से मिलता है जो उसने हैदराबाद के निजाम को लिखा था।[10] उसमें कहा गया है—' ... भारत में ब्रिटिश ताज की प्रभुसत्ता सर्वोच्च है और इस कारण कोई भी नरेश ब्रिटिश सरकार से समानता पर बातचीत करने का अधिकार नहीं कर सकता है। उसकी सर्वोच्चता केवल सनद और सन्धियों पर ही आधारित नहीं है बल्कि उनसे स्वतन्त्र है। विदेश नीति और विदेशी राष्ट्रों के विषय में हस्तक्षेप की बात छोड़कर भी, ब्रिटिश सरकार का यह अधिकार और कर्त्तव्य है कि वह समस्त भारत में देशी राज्यों से किये गये समझौतों और सन्धियों का सम्मान करते हुए शान्ति और सुव्यवस्था बनाये रखे। ... देशी राज्यों की आन्तरिक व्यवस्था में हस्तक्षेप करने का ब्रिटिश सरकार का अधिकार ब्रिटिश ताज के सर्वोच्च सत्ता से सम्बन्धित है। ... जहां साम्राज्य के हितों का प्रश्न हो या किसी राज्य की जनता के सामान्य कल्याण में उसकी सरकार के कार्यों से बाधा पड़ती हो तो उसके लिये कार्रवाई करने का उत्तरदायित्व सर्वोच्च सत्ता पर आ पड़ता है। आन्तरिक व्यवस्था का अधिकार जो देशी राज्यों को प्राप्त है वह सर्वाधिकारी सरकार के इस उत्तरदायित्व की शर्त पर ही निर्भर है।

सर्वोच्च सत्ता का यह अधिकार है कि वह दो राज्यों के झगड़ों का अथवा उसके तथा एक राज्य के बीच विवाद का निर्णय कर दे। यद्यपि कुछ मामलों में मध्यस्थ अदालत नियुक्त की जाती है पर उसका कार्य स्वतन्त्र रूप से भारत सरकार को केवल परामर्श देना है, जिस पर निर्णय करने का अन्तिम दायित्व है। मुझे यह स्मरण कराने की आवश्यकता नहीं कि इस अधिकार को देशी

नरेशो ने सम्मिलित रूप से माटग्यू चेम्सफोर्ड रिपोर्ट के पैरा 208 मे स्वीकार कर लिया है। यह व्यर्थ है कि जिस विषय मे निर्णय हो चुका है उसको दोनो दलो मे वाद-विवाद के रूप मे चलाया जाये।"[99]

यह पत्र देशी राज्यो तथा ब्रिटिश सरकार के सम्बन्धो को स्पष्ट करता है। इसी कारण इसका ऐतिहासिक दृष्टि से बडा महत्व है। इस पत्र के कारण राजाओ मे काफी असन्तोष फैल गया और वे अपने तथा भारत सरकार के बीच के सम्बन्धो के खुलासे के लिये बराबर माग करने लगे। अत ब्रिटिश सरकार ने हरकूट बटलर की अध्यक्षता मे 'देशी राज्य जाच समिति' की 1927 मे नियुक्ति की, ताकि वह भारत सरकार व देशी राज्यो के बीच के सम्बन्धो की जाच करे तथा उनके सन्तोषजनक सामजस्य के लिये आवश्यक सलाह दे। यह केवल समिति थी। इसे कोई निर्णय लेने की शक्तिया नही दी गयी थी। इस समिति को परमोच्च शक्ति के साथ रियासतो के चालू सम्बन्धो की जाच करना था तथा इसे यह सिफारिश नही करनी थी कि भविष्य मे कैसे सम्बन्ध हो या कैसे उनका नियमन किया जावे। फिर भी इस समिति ने अपनी रपट के द्वितीय भाग मे भारत सरकार तथा भारतीय रियासतो के बीच के वित्तीय तथा आर्थिक सम्बन्धो का उल्लेख करते भविष्य मे इस क्षेत्र मे क्या-क्या काम किया जावे के लिये सुझाव दिये थे। इस समिति ने जाच कर निम्नलिखित सिफारिशे की—

(1) वायसराय, न कि गवर्नर जनरल ताज के प्रतिनिधि के रूप मे राज्यो से सम्बन्ध रखें।

(2) ताज तथा नरेशो के सम्बन्ध बिना राजाओ से सहमति लिये, अग्रेजी भारत की कोई नई उत्तरदाई सरकार को हस्तातरित नही किये जायें।

(3) राज्यो की परिषद बनाने की योजना रद्द कर दी जाये।

(4) किसी राज्य के प्रशासन मे हस्तक्षेप वायसराय के निर्णय के अनुसार ही हो।

(5) राज्यो तथा अग्रेजी भारत के बीच कोई विवाद उठ खडे होने पर विशेष समिति नियुक्त कर जाच कराई जाये।

(6) देशी राज्यो तथा अग्रेजी भारत के बीच आर्थिक सम्बन्धो की जाच के लिये एक समिति नियुक्त की जाये।

(7) इगलैण्ड के विश्वविद्यालयों से निकले छात्रों को अलग से भरती कर व प्रशिक्षण देकर राज्यों मे राजनैतिक अधिकारी के पद पर नियुक्त किया जावे।

(8) सर्वोच्च शक्ति रियासतों की प्रभुसत्ता मे सम्पूर्ण भारत के आर्थिक हित हेतु हस्तक्षेप कर सकती है।

(9) रियासतों मे सवैधानिक परिवर्तनों हेतु किये जाने वाले जन आन्दोलनों के मामले मे सर्वोच्च शक्ति ऐसी मागों के पूरा करने हेतु कार्यवाही करने के लिये सुझाव दे सकती है।

इस प्रकार बटलर समिति न केवल राजाओ के विषय मे बहुत सी सिफारिशे की लेकिन वहा की जनता के विषय मे कुछ नही कहा। इसकी सिफारिशो ने अग्रेजी भारत तथा देशी राज्यो के बीच की खाई और ज्यादा चौडी कर दी। भारतीय नरेश समिति की इस सिफारिश से अवश्य प्रसन्न हुए कि जब भी भारत सरकार भारतीयों के हाथ मे दी जायेगी तब वे उसके नियत्रण से बाहर रखे जायेगे। समिति की रिपोट से यह भी स्पष्ट हो गया कि ब्रिटिश सरकार राज्यो मे किसी प्रकार के सुधार नही चाहती थी। उसने कभी यह नही सोचा कि राज्यों मे उत्तरदायी या लोकप्रिय शासन हो। राजाओ को अब यह भी ज्ञात हो गया कि उनके साथ की गई सन्धिया, शतनामे आदि रद्दी कागज है और वे पूर्णतया ब्रिटिश सरकार के अधीन है।

इस प्रकार इस समिति की रिपोर्ट से न तो यहा के नरेश सन्तुष्ट हो सके और न राज्यो की जनता ही। इस रिपोट को न केवल राजाओ बल्कि जनता ने भी अपने लिये हितकर नही माना। अत बटलर समिति की रिपोर्ट का सवत्र बहिष्कार किया गया तथा उत्तरदायी सरकार की स्थापना के लिये बराबर माग की जाती रही।

साईमन कमीशन

जनता मे बढते असन्तोष तथा अविश्वास की भावना को कम करने के लिये ब्रिटिश सरकार ने एक कमीशन ई० सन् 1927 मे जॉन साईमन की अध्यक्षता मे नियुक्त कर भारत भेजा। इसके सभी सदस्य अग्रेज थे जबकि भारतीयों की माग थी कि इसके कुछ सदस्य भारतीय भी हो। अत भारतीयो ने इस कमीशन का आरम्भ से ही बहिष्कार किया।[100] यह कमीशन फरवरी 3 से 31 मार्च 1928 तक तथा 11 अक्टूबर 1928 से 13 अप्रेल 1929 तक भारत मे रहा। भारत मे जहा भी यह कमीशन गया जनता ने हडताले कर

इसका विरोध किया। अत काफी स्थानो पर लाठी के प्रहार भी किये गये तथा गोलिया चली। दिसम्बर 1928 मे काग्रेस के कलकत्ता अधिवेशन मे यह प्रस्ताव पारित किया गया कि ब्रिटिश सरकार एक वर्ष के भीतर उपनिवेशिक स्वराज्य दे देवे अन्यथा काग्रेस पूर्ण स्वराज्य की माग करेगी। ई० सन् 1929 के अन्त तक सरकार की ओर से कोई आश्वासन नही दिया गया। सरकार ने केवल एक गोल मेज सम्मेलन बुलाकर उपनिवेशिक सविधान का प्रारूप तैयार करवाने का कहा लेकिन भारतीय नेता इससे सन्तुष्ट नही हुए और 31 दिसम्बर 1929 को काग्रेस ने घोषणा की कि उसका उद्देश्य पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त करने का ही है। उसी रात के 12 बजे पूर्ण स्वतन्त्रता का झण्डा फहरा दिया गया। 31 अक्टूबर 1929 को वाइसराय लॉर्ड इरविन ने घोषणा की कि अग्रेजी सरकार की नीति है कि भारत को डोमेनियम स्टेटस दिया जावे।

काग्रेस ने तय किया कि धारा सभा के सभी काग्रेस सदस्य स्तीफा दे देवे तथा सम्पूर्ण भारत मे 26 जनवरी को पूर्ण स्वराज्य दिवस (स्वतन्त्रता दिवस) मनाया जावे। उस अवसर पर गाधीजी द्वारा तैयार की गयी घोषणा भारत भर मे नगरो व गावो मे जनता के समक्ष पढी जावे तथा हाथ उठवाकर श्रोताओ की सहमति ली जावे। इस प्रकार प्रत्येक भारतीय को पूर्ण स्वतन्त्रता की उद्घोषणा करनी थी तथा भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस के प्रति निष्ठा तथा भारतीय स्वतन्त्रता के लिये लडने का प्रण लेना था। तदनुसार सम्पूर्ण भारत मे 26 जनवरी 1930 को स्वतन्त्रता दिवस बडे धूमधाम से मनाया गया तथा स्वतन्त्रता की घोषणा सभाओ मे पढी गई। जनवरी 30 को महात्मा गाधी ने सरकार के सामने 11 मागे रखी और सरकार को सूचना दी कि यदि ये मागे पूरी नही की गई तो वह नागरिक अवज्ञा आन्दोलन आरम्भ करेंगे। सरकार ने कोई ध्यान नही दिया। गाधीजी 12 मार्च को अपने 78 साथियों के साथ नमक कानून तोडने के लिये डाण्डी से रवाना हुए। इस सत्याग्रह का सन्देश तत्काल सम्पूर्ण भारत मे फैल गया। गाधीजी ने अप्रेल 6 को समुद्र के किनारे से नमक उठाकर सत्याग्रह आरम्भ किया। अब तो नमक ने जनता मे शक्ति भर दी। लगभग 75000 व्यक्तियो ने सत्याग्रह मे भाग लिया और गिरफ्तार हुए। उनको सख्त सजायें दी गई तथा उनकी सम्पत्ति जब्त कर ली गई। स्त्रियो ने शराब की दुकानो तथा विदेशी वस्त्रो की दुकानो पर धरना देकर तथा चर्खे का प्रचार करके सत्याग्रह मे भाग लिया। उनको भी गिरफ्तार किया गया तथा सजायें दी गई।[101]

राजस्थान मे सत्याग्रह का केन्द्र अजमेर रहा। अर्जुनलाल सेठी, विजयसिंह पथिक, हरिभाऊ उपाध्याय, जीतमल लूणिया, रामनारायण चौधरी, अचलेश्वरप्रसाद शर्मा आदि कई सत्याग्रही गिरफ्तार किये गये। अन्य राज्यो के व्यक्तियो ने भी अजमेर आकर सत्याग्रह मे भाग लिया और गिरफ्तार हुए। ब्यावर मे अजमेर से भी अधिक जोश दिखाई दिया।

ऐसे ही वातावरण मे साईमन कमीशन की रिपोर्ट ब्रिटिश सरकार को पेश की गई जो 7 जून 1930 को प्रकाशित की गई। इसने देशी राज्यो के लिये लगभग वही बाते कही जो बटलर कमीशन ने बतलाई थी। साईमन कमीशन ने यह सुझाव दिया कि 'भारत को एक संघ राज्य बनाया जाए जिसमे देशी राज्यो व अंग्रेजी प्रांतो को सम्मिलित किया जाये। उनको आतरिक मामलो मे स्वतन्त्रता दे दी जाये। देशी राज्यो के मामलो की देखरेख वायसराय के रूप मे तथा अंग्रेजी प्रांतो का काम गवर्नर जनरल के रूप मे एक ही व्यक्ति करता रहे।'[10] इस प्रकार का संघ बनाने से ब्रिटिश सरकार देशी राज्यो को अपने वश मे रख सकती थी तथा उनको अंग्रेजी प्रांतो के विरुद्ध एक रोक भी बनाये रख सकती थी। उन्होने जनता की आवाज तथा समय को नही पहचाना। उनके सामने ही रूस के बादशाह जार तथा जर्मनी के बादशाह कैसर को जनता द्वारा हटाये जाने का उदाहरण था फिर भी उन्होने इस पहलू पर कतई ध्यान नही दिया। ऐसा कर उन्होने अनायास ही जनता को अपना प्रबल विरोधी बना लिया।

गोल मेज सम्मेलन

ब्रिटिश सरकार ने अब भारतीयो को ललचाने के लिये साईमन समिति की सिफारिशो के आधार पर भारत का नया संविधान बनाने के लिये अंग्रेजी लोकसभा के 16 सदस्यो तथा अंग्रेजी प्रांतो व देशी राज्यो के 73 व्यक्तियो को भारत का प्रतिनिधि बनाकर, लन्दन मे एक गोल मेज सम्मेलन बुलाया जो 12 नवम्बर 1930 से 19 जनवरी 1931 तक लन्दन मे चलता रहा। इस सम्मेलन मे राजाओ ने बडी देशभक्तिपूर्ण बाते की। उन्होने इस शर्त पर संघ शासन मे आना स्वीकार किया कि उनके संधि अधिकार सुरक्षित रखे जावेगे। मुस्लिम लीग ने भी संघ शासन स्वीकार कर लिया। सम्मेलन के अन्तिम दिन ब्रिटिश प्रधानमन्त्री ने नये शासन विधान की भावी योजना की रूपरेखा इस प्रकार बतलाई—'भारत का भावी केन्द्रीय शासन एक संघीय विधान सभा के प्रति जिसमे अंग्रेजी प्रांतो और देशी राज्यो के भी प्रतिनिधि सम्मिलित होंगे,

अशत जिम्मेवार होगा क्योंकि सामरिक, विदेशिक और आर्थिक मामलो मे सघ सभा का नियत्रण नही रहेगा। प्रातो को शासन के आतरिक मामलो मे पूण स्वतत्रता दी जावेगी।'[103]

इस सम्मेलन की समाप्ति के 6 दिन बाद ही 26 जनवरी 1931 को काग्रेस की कार्यकारिणी के सदस्यो को जेल से छोड दिया गया। महात्मा गाधी ने 17 फरवरी को वायसराय लार्ड इरविन से मुलाकात की और उससे समझौता 5 मार्च को किया। इसके अनुसार भारत को केन्द्रीय शासन मे कुछ सुरक्षित विषयो को छोड आशिक उत्तरदायी शासन और प्रातो मे पूर्ण उत्तरदायित्वपूर्ण शासन मिलना था। इस समझौते पर 5 मार्च को हस्ताक्षर हुए और तब ही सत्याग्रह और अग्रेजी माल का बहिष्कार बद कर दिया गया।[104] समझौते के अनुसार सभी सत्याग्रही छोड दिये गये लेकिन अन्य क्रान्तिकारियो व तोड-फोड करने वाले गिरफ्तार सत्याग्रहियो के लिये कोई समझौता नही किया गया। इसी कारण इस समझौते के बाद ही 23 मार्च को प्रसिद्ध क्रातिकारियो— भगतसिह, सुखदेव व राजगुरु को फासी दे दी गई और उनकी लाशे गुप्त रीति से नष्ट कर दी गई।[105] जब जनता को इसका पता चला तो उन्हे बहुत दु ख हुआ। राष्ट्रकर्मियो और नवयुवको मे गाधीजी के नेतृत्व के प्रति गहरा असन्तोष फैल गया। फिर भी काग्रेस के कराची अधिवेशन मे यह तय किया गया कि काग्रेस का प्रतिनिधित्व गोल मेज मे केवल गाधीजी करे जबकि वायसराय ने काग्रेस के 16 प्रतिनिधि लेने की स्वीकृति दे दी थी। देशी राज्य लोक परिषद ने भी रियासती प्रजा का प्रतिनिधि गाधीजी को ही बनाया।

ई० सन् 1931 की 7 सितम्बर से शुरु होने वाले द्वितीय गोल मेज सम्मेलन मे गाधीजी ने भाग लिया लेकिन मुस्लिम सम्प्रदायिक नेताओ और विशेष हितो के हिमायतियो ने गाधीजी की नही चलने दी। राजाओ के प्रतिनिधियो, जिनमे बीकानेर नरेश गगासिह मुख्य थे, ने प्रस्तावित सघ परिषद मे जनता के चुने हुए प्रतिनिधियो को लिये जाने की माग का बहुत विरोध किया। इस सम्मेलन मे ज्यादा वाद-विवाद विधान सभाओ के निर्माण के सम्बन्ध मे, अर्थात् अल्प सख्यको के विषय मे ही हुआ। लगभग चार माह तक सम्मेलन चला। गाधीजी के भारत मे आने के बाद ही सरकार ने नये दमनकारी कानून बनाकर काग्रेस को गैर-कानूनी घोषित कर दिया। गाधीजी तथा कई अन्य नेता शीघ्र गिरफ्तार कर लिये गये।[106] राजस्थान मे भी काग्रेस तथा इससे सम्बद्ध नौजवान भारत सभा, भारतीय सेवा दल आदि

सस्थाओ के कार्यकर्ता एकदम गिरफ्तार कर लिये गये। इन सस्थाओ की सम्पत्ति भी जब्त कर ली गई।

ब्रिटिश प्रधानमत्री मेक्डोनल्ड ने शीघ्र ही मुसलमानो, सिक्खो, ईसाईयो, यूरोपियनो, एग्लोइण्डियनो, अछूतो तथा मराठो के लिये अलग निर्वाचक मण्डल होने की घोषणा की ताकि इन अल्प सख्यको के अधिकार सुरक्षित रह सके। इनको जनसख्या के अनुपात से ज्यादा स्थान दिये। गाधीजी ने अछूतो को हिन्दुओ से अलग मानने का विरोध किया और इस कारण जेल मे रहते आमरण उपवास किया जिसके कारण एक समझौता किया गया कि उनके अलग मतदाता नही होगे लेकिन उनको काफी ज्यादा सीटे दे दी जावेगी। अछूतो के लिये तब से हरिजन शब्द का प्रयोग किया जाने लगा। छूआछूत निवारण तथा हरिजनो की उन्नति के लिये हरिजन सेवा सघ की स्थापना की गई।[107]

ब्रिटिश सरकार ने दिखावे के लिये गोलमेज सम्मेलन का तीसरा अधिवेशन 17 नवम्बर से 24 दिसम्बर तक किया। यह सम्मेलन सविधान के सिद्धान्तो को निश्चय करने के लिये बराबरी के लोगो का नही था। इसमे कांग्रेस तथा मुस्लिम नेताओ को नही बुलाया गया। रियासतो को इसकी कार्यवाहियो के प्रति कोई रूचि नही थी। इस कारण किसी नरेश ने इसमे भाग नही लिया। उनका प्रतिनिधित्व उनके मत्रियो व अधिकारियो ने किया। ब्रिटिश मजदूर दल ने भी सम्मेलन मे भाग लेने से मना कर दिया। गोल मेज सम्मेलन की समाप्ति के बाद 15 मार्च 1933 के ब्रिटिश सरकार ने श्वेतपत्र प्रकाशित किया जिसमे प्रस्तावित सविधान की पूरी रूपरेखा दी हुई थी। इसमे साइमन आयोग की प्राय सिफारिशे थी परन्तु इसके दूसरे भाग मे केन्द्र की सघीय भारत की योजना थी जो कुछ शर्ते पूरी जाने पर कार्यरूप मे आनेवाली थी। शर्त यह थी कि राज्यो की एक निश्चित सख्या इस सघ के पक्ष मे हो।[108]

भारत सरकार अधिनियम 1935

यह अधिनियम पहली अप्रेल 1937 से लागू कर दिया गया। इसका एक भाग केन्द्रीय सरकार के गठन से सम्बन्धित था और उसे लागू करने के लिये यह शर्त थी कि पहले पर्याप्त सख्या मे देशी राज्य सघ मे सम्मिलित हो जाए लेकिन यह शर्त पूरी नही हुई। इस कारण सघीय विधान स्थगित रहा। अधिनियम के एक प्रावधान के अनुसार सारे भारत का एक सघ बनना था जिसमे अग्रेजी भारत के प्रान्त और भारत के देशी राज्यो को भी सम्मिलित

होना था। वह शर्त पूर्ण न होने पर 1919 का भारत सरकार अधिनियम कुछ सशोधनो के साथ लागू रहना था। अधिनियम 1935 के अनुसार सघीय सभा के दो सदन वनाए गए थे। ऊपरी सदन मे 260 प्रतिनिधि होने थे जिनमे से 104 राजाओ द्वारा मनोनित होने थे। शेष 156 मे से 75 साधारण, 6 अनुसुचित जाति, 4 सिक्ख, 49 मुसलमान, 6 स्त्रिया व 10 अन्य (6 एग्लो-इडियन, यूरोपियन व भारतीय ईसाई) व 6 गवनर जनरल द्वारा नामाकित होने थे। इस प्रकार बहुसख्यक हिन्दुओ के केवल 31 प्रतिशत सदस्य लिये जाने थे। अधिनियम के निर्माता चाहते थे कि शासन मे रियासतो का विशेष हाथ हो ताकि सामाजिक वदलाव और राजनैतिक प्रगति मे वे रोडे अटकाते रहे। इसी कारण रियासतो की जनसख्या भारत की कुल जनसख्या का 24 प्रतिशत होते भी उनको 40 प्रतिशत स्थान दिया गया। या राजस्व मे भी खर्च का दसवा भाग देने वाले राज्यो को 4/10 भाग दिया जाना था। सघ की विधान सभा मे भी 375 सदस्यो मे से 125 सदस्य राज्यो के होते अर्थात 24 प्रतिशत आवादी एक तिहाई प्रतिनिधित्व करती।[109]

इस प्रकार राजाओ के पक्ष मे यह अधिनियम बनाने पर भी राजाओ ने अपनी पूर्व प्रतिष्ठा व सम्मान का बने रहने का आश्वासन चाहा। वे चाहते थे कि उनके सवैधानिक अधिकार, आतरिक स्वायतता और सावभौमिकता पूर्व जैसी ही बनी रहे। जब उन्हे इसका आश्वासन नही मिला तो उन्होने सघ मे मिलने से मना कर दिया। ऐसा कर वे अपनी जनता की दृष्टि से गिर गये और साथ ही भारत के राष्ट्रीय नताओ की दृष्टि मे भी। अग्रेजी सरकार राजाओ से आशा करती थी कि वे सघ मे सम्मिलित होकर राष्ट्रीय तत्वा का विरोध करते रहेगे तथा गतिरोधात्मक भूमिका निभाते रहेगे। सघ मे सम्मिलित न होकर वे उनकी दृष्टि मे भी महत्वहीन हो गये। वायसराय लिनलियगो ने अधिनियम लागू होने के वाद भी राजाओ को सघ मे मिलाने के प्रयत्न जारी रखे। मार्च 1939 मे नरेन्द्र मडल के वार्षिक अधिवेशन मे अध्यक्षता करते हुये वाइसराय ने यहा तक कहा कि रियासतो ने जो भी प्रश्न उठाये थे उनका निणय कर दिया गया है और सशोधित अधिमिलन प्रलेख हस्ताक्षर के लिये नरेशो के पास भेज दिया गया है। वाइसराय ने रियासतो को आश्वासन दिया कि राज्यो मे सवैधानिक और प्रशासनिक परिवर्तन करना पूर्ण रूप से नरेशो के ही अधिकार मे होगा और सरकार उन पर किसी भी प्रकार का दवाव नही डालेगी। इस पर 10 जून 1939 को नरेशो व उनके

मन्त्रियों ने पुन विचार किया लेकिन उन्हे नया अधिमिलन प्रलेख और फडरेशन की शर्तें असतोषप्रद तथा अस्वीकारीय जान पडी अत कोई अतिम निर्णय नही लिया जा सका। पुन वार्ता चली लेकिन कोई समझौता नही हो सका। अंग्रेजो का उनपर विश्वास न रहा। तब ही द्वितीय विश्व युद्ध आरम्भ हो गया और सघ योजना खटाई मे पड गई।[110] अब राजाओं व उनकी जनता के बीच कटुता बढती ही गई।

प्रजा मण्डलो की स्थापना

ई० सन् 1930 के नागरिक अवज्ञा आदोलन ने राजस्थान की जनता को नई जागृति दी। ब्रिटिश सरकार ने गोल मेज सम्मेलनो मे राजाओं को आश्वासन दिया कि उनके साथ की गई सधियो के अनुसार राज्यो म होने वाले आन्दोलनो से उनकी रक्षा की जावेगी लेकिन जनता के मूल अधिकारो की रक्षा के लिये कुछ भी नही किया। अत जनता न केवल ब्रिटिश सरकार बल्कि अपने राजाओ के प्रति भी अपनी परम्परागत श्रद्धा भावना को छोडने लगी। अब वह उत्तरदाई शासन की बराबर माग करने लगी।

लाहोर के कांग्रेस अधिवेशन मे यह निर्णय लिया गया कि राज्यो म जनता के पथ प्रदर्शन तथा राजनैतिक जागृति के लिए वहा भी सगठन बने।[111] इसके फलस्वरूप कुछ राज्यो मे प्रजामण्डल स्थापित हुए। जयपुर मे नवयुवक सघ तथा बाल भारत सभाएँ स्थापित हुई। नवम्बर 1931 मे पुष्कर मे चादकरण शारदा के सभापतित्व मे मारवाड राज्य लोक परिषद का प्रथम अधिवेशन हुआ।[112]

ई० सन् 1930 मे जब भारत मे नागरिक अवज्ञा आन्दोलन आरम्भ हुआ तब जोधपुर के जयनारायण व्यास, गणेशलाल व्यास, अचलेश्वरप्रसाद शर्मा, मानमल जैन, अभयमल मेहता आदि युवक कार्यकर्ताओं ने अजमेर जाकर सत्याग्रह किया और गिरफ्तार हुए। अजमेर मे हरिभाऊ उपाध्याय, स्वामी कुमारानन्द आदि गिरफ्तार कर लिये गये। जनवरी 26 को राष्ट्रीय झण्डा फहराने के कारण जोधपुर मे छगनलाल चौपासनीवाला पुलिस द्वारा बुरी तरह पीटा गया।[113] सन् 1932 मे बीकानेर मे सीताराम सर्राफ, स्वामी गोपालदास आदि आठ कांग्रेसी नेताओ पर राजद्रोह एव षडयन्त्र के मुकद्दमे चलाये गये और सत्यनारायण सर्राफ को 7 वर्ष, खूबराम सर्राफ को 5 वर्ष, स्वामी गोपालदास को 4 वर्ष, चन्दनमल बहड को 3 वर्ष तथा शेष चार को दो वर्ष से तीन माह

तक की सजाये दी गई।[114] इस प्रकार की कठोर सजाये देने मे राज्य का एकमात्र उद्देश्य सारे राज्य मे आतंक पैदा कर जनता को भयभीत करना था। फिर भी यहाँ के निवासियो ने कलकत्ता मे ई० सन् 1935 मे प्रजा मण्डल की स्थापना की तथा वहाँ से लोगो मे प्रचार किया। अगले वर्ष बीकानेर नगर मे भी प्रजा मण्डल की स्थापना की गई। महाराजा ने शीघ्र ही उसके कार्यकर्त्ताओ को गिरफ्तार कर लिया।[115] यो बीकानेर नरेश गगासिंह अपने को अत्यन्त प्रगतिशील व सुधारक नरेश बतलाता था। वह साम, दाम दंड व भेद की नीतियो मे पारंगत था। ई० सन् 1937 मे तत्कालीन जोधपुर राज्य के प्रधान मन्त्री कमल फिल्ड को जयनारायण व्यास को सहायता देने के विषय मे, एक पत्र लिखकर वह अपने को राष्ट्रीय नेताओ का हमदर्द बनने का प्रयत्न भी कर चुका था।[116] लेकिन अपने राज्य की जनता के राजनैतिक व नागरिक अधिकारो को कुचलने मे उसने कोई कसर नही रखी।

जोधपुर मे 1934 मे मारवाड राज्य प्रजामण्डल स्थापित हुआ। ई० सन् 1934 मे रणछोडदास गट्टाणी की अध्यक्षता मे नागरिक स्वतन्त्रता संघ स्थापित हुआ ताकि नागरिक स्वतन्त्रता के लिये आन्दोलन किया जा सके। इन सस्थाओ की राजनैतिक गतिविधियो को देखकर राज्य सरकार ने दोनो सस्थाओ को ई० सन् 1936 मे ही गैरकानूनी घोषित कर दिया। जोधपुर प्रजा मण्डल के कुछ कार्यकर्त्ता नजरबन्द कर दिये गये। अगले वर्ष कुछ और गिरफ्तारिया राज्य को भारत संघ मे मिलने के मामले को लेकर की गई। प्रजामण्डल तथा नागरिक स्वतन्त्रता सघ की समाप्ति पर एक नई सस्था मारवाड लोक परिषद मई 1938 मे महाराजा की छत्रछाया मे उत्तरदाई सरकार स्थापित करने के उद्देश्य से स्थापित की गई।[117]

सिरोही राज्य के कुछ लोगो ने बम्बई मे ई० सन् 1935 मे प्रजा मण्डल की स्थापना कर वहा से ही राज्य मे चल रही धाधली का विरोध करना तथा उत्तरदाई सरकार की स्थापना करने की माग करना आरम्भ किया। इनमे गोकुलभाई भट्ट, भीमशंकर शर्मा, टेकचन्द सिंघी, वृद्धिशंकर त्रिवेदी, भवूतमल सिंघी आदि मुख्य थे। ई० सन् 1939 की जनवरी 22 को जब कार्यकर्त्ताओ ने एक राजनैतिक सभा सिरोही नगर मे की तब सात व्यक्तियो—गोकुल भाई भट्ट, पुखराज सिंघी आदि को गिरफ्तार कर लिया गया। इसका जनता ने बडा विरोध किया। पाच दिन तक विरोध चलता रहा अत राज्य सरकार को उन्हे बिना शर्त छोडना पडा। उस समय ही यहा प्रजा मण्डल की स्थापना हुई।

इसको गतिविधियो को देखकर राज्य ने इसे नवम्बर 1939 मे गैरकानूनी सस्था घोषित कर दिया तथा इसके प्रमुख नेताओ को गिरफ्तार कर लिया।[118]

भरतपुर राज्य मे ई० सन् 1928 मे प्रजा मण्डल की स्थापना सच्चिदानन्द व गोपीलाल यादव ने की। उस समय तक यहा के प्रगतिशील नरेश कृष्णसिंह को उत्तरदाई सरकार बनाने के प्रयत्न को विफल करने हेतु राजगद्दी से हटाया जाकर प्रशासन अग्रेज अधिकारी मेकेंजी के हाथो मे आ गया था। प्रजा परिषद इसी के कारण समाप्त हो गई। उसकी निरकुशता के विरुद्ध देशराज, गोकुल वर्मा, जगनाथ ककड, हरिश्चन्द्र शर्मा आदि ने आदोलन किया। छात्रो मे राष्ट्रीय भावना को जागृत करने के कारण यहाँ के अध्यापक आदित्येन्द्र को त्यागपत्र देना पडा। ई० सन् 1939 मे यहा प्रजा परिषद की स्थापना हुई। इसका पजीयन नही किया गया। इसका विरोध करने पर लक्ष्मण स्वरुप त्रिपाठी, कु जबिहारीलाल मोदी, शोभाराम, रामजीलाल अग्रवाल, मास्टर भोलानाथ, अब्दुल गफूर, हरिनारायण किकर, सुशीला त्रिपाठी आदि गिरफ्तार कर लिये गये।[119]

जयपुर राज्य के झु झनू क्षेत्र मे किसानो ने भी अपनी मागो के लिये आन्दोलन आरम्भ किया। ई० सन् 1930 मे झु झनू के 2,000 किसान अपने अधिकारो हतु महाराजा से बातचीत करने के लिये जयपुर भी गये लेकिन कोई सतोषजनक परिणाम नही निकला। ई० सन् 1934 मे सीकर मे एक जाट प्रजापति महायज्ञ किया गया जो दस दिन तक चला। इसमे लगभग 80,000 किसान इकट्ठे हुए। ऐसे बृहत सम्मेलन को देखकर राज्य सरकार घबरा गई और किसानो का दमन करना आरम्भ किया। सैकडो व्यक्तियो को गिरफ्तार किया गया। नरसिंह, मास्टर रत्नसिंह, किशनलाल जोशी आदि को राज्य से निकल जाने का आदेश दिये गये। नरसिंहदास व किशनलाल जोशी ने राज्य से बाहर जाने से इकार कर दिया। अत उनको गिरफ्तार कर सख्त कैद की सजा दी गई। सीकर ठिकाने के अत्याचार चल रहे थे कि सिहोर के ठाकुर ने कुछ किसान स्त्रियो का अपमान कर दिया—कुछ स्त्रिया को बाल पकड कर घसीटा और पीटा। इस पर लगभग 10,000 स्त्रियो ने सम्मिलित होकर माग रखी कि इस प्रकार अपमान करने के कारण ठाकुर को सजा दी जावे, किसानो की मागे स्वीकार की जावे तथा बदोबस्त जयपुर रियासत की देखरेख मे कराया जावे। किसानो ने लगान न देने का विचार करते अपनी मागे जयपुर के दीवान के समक्ष रखी। जयपुर दरबार ने

ऐसी परिस्थितियो मे सीकर मे केप्टन वेव को नियुक्त कर दिया ताकि वहा किसानो के हित मे सुधार कर सके।[120] फिर भी किसानो के हित मे कोई काम नही हुआ और उनमे असन्तोष व्याप्त रहा।

सन् 1939 मे जमनालाल वजाज के प्रयत्नो से जयपुर मे प्रजा मण्डल की स्थापना हुई। इसका राज्य ने पजीयन नही किया। वजाज द्वारा विरोध करने पर उसे राज्य की सीमा मे घुसने से मना कर दिया गया। इसके विरोध स्वरुप जमनालाल वजाज ने फरवरी 1939 मे जयपुर राज्य मे घुसने का प्रयास तीन वार किया। दो वार वह राज्य की पुलिस द्वारा पकडा जाकर जयपुर राज्य की सीमा के वाहर ले जाया जाकर छोडा गया। अन्त मे तीसरी वार 12 फरवरी को उसे नजरवन्द कर दिया गया। इस विरोध मे प्रजा मण्डल ने सत्याग्रह चलाया जिसके कारण हीरालाल शास्त्री, कपूरचन्द पाटणी, चिरजीलाल मिश्र, हरिश्चन्द्र शर्मा, हस डी० राय आदि लगभग 600 व्यक्ति गिरफ्तार हुए। यह सत्याग्रह 18 मार्च तक चला। अन्त मे राज्य सरकार का प्रजा मण्डल से समझौता हो गया। अगस्त 7 को जमनालाल वजाज व अन्य सत्याग्रही छोड दिये गये।[121]

जैसलमेर राज्य मे जन जागृति का आरम्भ रघुनाथसिंह मेहता ने किया। महाराजा को उसका यह काय खटका और उसको गिरफ्तार कर लिया। उसके वाद जीवनलाल कोठारी ने कुछ काम किया लेकिन वह भी जेल मे डाल दिया गया। इसके विरोध मे प्रवासी जैसलमेरियो ने वडा आन्दोलन किया।[122] सागरमल गोपा, जो नागपुर मे वैठा जैसलमेर राज्य के जुल्मो के विरुद्ध आवाज वुलन्द करता रहता था, जैसलमेर आया। वह भी 25 मई ई० सन् 1941 मे गिरफ्तार कर लिया गया। वह ई० सन् 1946 की 4 अप्रेल को जेल मे ही जीवित जला दिया गया।[123] रियासत के अत्याचार की यह पराकाष्ठा थी।

उदयपुर राज्य मे कुछ नये करो तथा अधिकारियो के द्वारा जनता के साथ दुर्व्यवहार करने के कारण जनता ने राज्य के विरुद्ध एक प्रबल प्रदर्शन किया। पुलिस द्वारा जनता पर लाठी के प्रहार किये गये। अत जनता ने नगर मे सात दिन तक हडताल रखी। अन्त मे सरकार को जनता के सामने झुकना पडा और महाराणा को उनकी शिकायतो को दूर करने का आश्वासन देना पडा। जव काग्रेस ने रियासती जनता को सलाह दी कि उसे राजनैतिक अधिकार प्राप्त करने के लिये अपने पावो पर खडा होना चाहिये तव यहा भी अप्रेल 1938 मे वलवन्तसिंह मेहता की अध्यक्षता मे प्रजा मण्डल की

स्थापना हुई लेकिन वह शीघ्र ही राज्य द्वारा गैर कानूनी घोषित कर दिया गया। अत अक्टूबर 1938 मे वहा सत्याग्रह किया गया गया। भूरेलाल बया, रमेशचन्द्र व्यास, बलवन्तसिंह मेहता, दयाशंकर श्रोत्रिय, नरेन्द्रपालसिंह चौधरी आदि लगभग 213 सत्याग्रही गिरफ्तार किये गये जिनमे से 35 को सजा दी गई।[1 4] सत्याग्रह का जोर उदयपुर के अलावा नाथद्वारा व भीलवाडा मे विशेष रहा। इस आन्दोलन के संचालक माणिक्यलाल वर्मा उदयपुर से निर्वासित कर दिये गये। वह प्रजा मण्डल का कार्यालय अजमेर ले आये और वहा से कार्य चालू रखा। 2 फरवरी 1939 मे उदयपुर राज्य पुलिस ने उन्हे देवली से जबरदस्ती उठा लिया और अपने राज्य मे ले जाकर जेल मे बन्द कर दिया। महात्मा गाधी के आदेश से 3 मार्च को सत्याग्रह बन्द कर दिया गया। सभी कार्यकर्त्ता 1940 मे रिहा किये गये लेकिन प्रजा मण्डल से प्रतिबन्ध 1941 मे हटा।[125]

विभिन्न राज्यो मे इस प्रकार से राजनैतिक चेतना बढती देखकर बम्बई मे नवम्बर 1938 मे विभिन्न राज्यो के नरेशो व मन्त्रियो ने बीकानेर नरेश गंगासिंह की अध्यक्षता मे एक सम्मेलन किया। इस सम्मेलन मे यह तय किया गया कि रियासतो मे बाहरी आन्दोलनकारियो को घुसने नही दिया जाव तथा प्रजा मण्डलो आदि नाम वाली राजनैतिक संस्थाओ को समाप्त कर दिया जावे। यह भी तय किया गया कि स्थानीय आन्दोलनकारियो की शिकायतो को जहा तक हो सके जाच कर दूर कर दिया जावे तथा उनका ध्यान कुछ और प्रवृतियो—हरिजन सुधार, ग्रामीण विकास आदि की ओर लगा दिया जावे।[126] उसी वर्ष राज्यो मे जन सुरक्षा कानून व सार्वजनिक संस्था कानून लगा कर प्रजा मण्डलो की स्थापना करने मे बाधायें डाली गई। इस प्रकार स्पष्ट रूप से राजाओं व जनता के बीच सम्बन्ध बिगडते ही गये। जनता अब राजाओ की निरकुशता सहने को कतई तैयार नही थी। विभिन्न रियासतो की जनता को विश्वास हो गया कि जब तक भारत स्वतन्त्र नही होगा तब तक उन्हे राजनैतिक अधिकार प्राप्त नही होंगे।

द्वितीय विश्वयुद्ध

भारत सरकार अधिनियम 1935 के अन्तर्गत अंग्रेजी प्रान्तो मे जो चुनाव 1936-37 मे हुवे उसमे कांग्रेस को अपूर्व सफलता मिली। उन्हे अब विश्वास हो गया कि यदि देशी राज्यो मे भी चुनाव होते तो वे अवश्य सफलता प्राप्त

करते । काग्रेस और देशी राज्यो मे उसकी प्रतिरूप सस्थाओ—लोक परिषद व प्रजा मण्डल—ने उत्तरदायी शासन की माग के लिये आन्दोलन तेजी से आरम्भ कर दिये । तब ही 3 सितम्बर 1939 को यूरोप मे अग्रेजो का जर्मनी से युद्ध शुरु हो गया ।

द्वितीय महायुद्ध के शुरु होने के पहले ही युद्ध की आशका से ब्रिटिश पार्लियामेंट ने भारत सरकार (सशोधन) अधिनियम 1939 पारित कर युद्ध की स्थिति मे भारत सरकार को प्रान्तीय सरकार तथा प्रान्तीय विषयो के प्रशासन के लिये ज्यादा अधिकार दे दिये । काग्रेस ने इस सशोधन को प्रान्तीय स्वशासन को नष्ट करना व तानाशाही स्थापित करना बतलाया । महायुद्ध के प्रारम्भ होते ही वायसराय ने भी भारत को युद्ध मे रत घोषित कर दिया । काग्रेस ने इस घोषणा का विरोध किया व माग की कि ब्रिटिश सरकार भारत के भावी शासन के लिये भी घोषणा करे लेकिन वायसराय ने 17 अक्टूबर 1939 के वक्तव्य मे यही बतलाया कि युद्ध के बाद ही सब दलो से राय लेकर भारत सरकार अधिनियम मे परिवतन करेगी तथा उसका अन्तिम ध्येय डोमिनियन पद देना ही है । काग्रेस ने इस घोषणा की निंदा की तथा 8 काग्रेसी मत्रीमण्डलो ने नवम्बर 1939 मे स्तीफा दे दिया ।[12]

काग्रेस का इस प्रकार विरोध स्वरूप मत्रीमण्डल से त्यागपत्र दे देना कोई बुद्धिमानी का काम नही था । उसका यह कदम आगे चलकर देश के लिये अत्यन्त घातक सिद्ध हुआ । अब तक काग्रेस का देश के आधे भाग—आठ प्रातो पर शासन होने से वह बहुत ही शक्तिशाली बनी हुई थी । इस कारण वह आगे किसी भी समझौते मे बहुत ही महत्व रख सकती थी । इस प्रकार अपने आप मत्रीमण्डल से अलग हो जाने पर वह शक्तिहीन हो गई । तब से अग्रेज हिन्दू-बहुसख्यक काग्रेस को अपना शत्रु तथा मुसलमानो को, जिन्होने इस समय युद्ध प्रयत्नो मे अग्रेजो को सहायता देना स्वीकार कर लिया था, अपना मित्र समझने लगी । अत ब्रिटिश सरकार अब काग्रेस को मुस्लिम लीग, जो यद्यपि कही भी अपना मत्रीमण्डल नही बना सकी थी, के बराबर ही मानने लगी । इसी कारण अग्रेजो के पक्षपात व कूटनीति के कारण आगे चलकर भारत का विभाजन हुआ ।

एक ओर जहा काग्रेस ने आरम्भ से ही अग्रेजो को युद्ध मे सहायता देने से इकार किया वहा भारतीय नरेशो ने युद्ध आरम्भ होते ही न केवल स्वय बल्कि अपने राज्यो के पूरे साधनो से युद्ध मे सहायता देने के लिये, वायसराय

स्थापना हुई लेकिन वह शीघ्र ही राज्य द्वारा गैर कानूनी घोषित कर दिया गया। अत अक्टूबर 1938 मे वहा सत्याग्रह किया गया गया। भूरेलाल बया, रमेशचन्द्र व्यास, बलवन्तसिह मेहता, दयाशकर श्रोत्रिय, नरेन्द्रपालसिह चौधरी आदि लगभग 213 सत्याग्रही गिरफ्तार किये गये जिनमे से 35 को सजा दी गई।[14] सत्याग्रह का जोर उदयपुर के अलावा नाथद्वारा व भीलवाडा मे विशेष रहा। इस आदोलन के सचालक माणक्लाल वर्मा उदयपुर से निर्वासित कर दिये गये। वह प्रजा मण्डल का कार्यालय अजमेर ले आये और वहा से कार्य चालू रखा। 2 फरवरी 1939 मे उदयपुर राज्य पुलिस ने उन्हे देवली से जबरदस्ती उडा लिया और अपने राज्य मे ले जाकर जेल मे बन्द कर दिया। महात्मा गाधी के आदेश से 3 मार्च को सत्याग्रह बन्द कर दिया गया। सभी कार्यकर्त्ता 1940 मे रिहा किये गये लेकिन प्रजा मण्डल से प्रतिबन्ध 1941 मे हटा।[105]

विभिन्न राज्यो मे इस प्रकार से राजनैतिक चेतना बढती देखकर बम्बई मे नवम्बर 1938 मे विभिन्न राज्यो के नरेशो व मन्त्रियो ने बीकानेर नरेश गगासिह की अध्यक्षता मे एक सम्मेलन किया। इस सम्मेलन मे यह तय किया गया कि रियासतो मे बाहरी आन्दोलनकारियो को घुमने नही दिया जाव तथा प्रजा मण्डलो आदि नाम वाली राजनैतिक सस्थाओ को समाप्त कर दिया जावे। यह भी तय किया गया कि स्थानीय आन्दोलनकारियो की शिकायतो को जहा तक हो सके जाच कर दूर कर दिया जावे तथा उनका ध्यान कुछ और प्रवृतियो—हरिजन सुधार, ग्रामीण विकास आदि की ओर लगा दिया जावे।[106] उसी वर्ष राज्यो मे जन सुरक्षा कानून व सार्वजनिक सस्था कानून लगा कर प्रजा मण्डलो की स्थापना करने मे बाधाये डाली गई। इस प्रकार स्पष्ट रूप से राजाओ व जनता के बीच सम्बन्ध बिगडते ही गये। जनता अब राजाओ की निरकुशता सहने को कतई तैयार नही थी। विभिन्न रियासतो की जनता को विश्वास हो गया कि जब तक भारत स्वतन्त्र नही होगा तब तक उन्हे राजनैतिक अधिकार प्राप्त नही होगे।

द्वितीय विश्वयुद्ध

भारत सरकार अधिनियम 1935 के अन्तर्गत अग्रेजी प्रान्तो मे जो चुनाव 1936-37 मे हुवे उसमे काग्रेस को अपूर्व सफलता मिली। उन्हे अब विश्वास हो गया कि यदि देशी राज्यो मे भी चुनाव होते तो वे अवश्य सफलता प्राप्त

करते। काग्रेस और देशी राज्यो मे उसकी प्रतिरूप सस्थाओं—लोक परिषद व प्रजा मण्डल—ने उत्तरदायी शासन की माग के लिये आन्दोलन तेजी से आरम्भ कर दिये। तब ही 3 सितम्बर 1939 को यूरोप मे अग्रेजो का जर्मनी से युद्ध शुरु हो गया।

द्वितीय महायुद्ध के शुरु होने के पहले ही युद्ध की आशका से ब्रिटिश पार्लियामेंट ने भारत सरकार (सशोधन) अधिनियम 1939 पारित कर युद्ध की स्थिति मे भारत सरकार को प्रान्तीय सरकार तथा प्रान्तीय विषयो के प्रशासन के लिये ज्यादा अधिकार दे दिये। काग्रेस ने इस सशोधन को प्रान्तीय स्वशासन को नष्ट करना व तानाशाही स्थापित करना बतलाया। महायुद्ध के प्रारम्भ होते ही वायसराय ने भी भारत को युद्ध मे रत घोषित कर दिया। काग्रेस ने इस घोषणा का विरोध किया व माग की कि ब्रिटिश सरकार भारत के भावी शासन के लिये भी घोषणा करे लेकिन वायसराय ने 17 अक्टूबर 1939 के वक्तव्य मे यही बतलाया कि युद्ध के बाद ही सब दलो से राय लेकर भारत सरकार अधिनियम मे परिवतन करेगी तथा उसका अतिम ध्येय डोमिनियन पद देना ही है। काग्रेस ने इस घोषणा की निंदा की तथा 8 काग्रेसी मत्रीमण्डलो ने नवम्बर 1939 मे स्तीफा दे दिया।[12]

काग्रेस का इस प्रकार विरोध स्वरूप मत्रीमण्डल से त्यागपत्र दे देना कोई बुद्धिमानी का काम नही था। उसका यह कदम आगे चलकर देश के लिये अत्यन्त घातक सिद्ध हुआ। अब तक काग्रेस का देश के आधे भाग—आठ प्रातो पर शासन होने से वह बहुत ही शक्तिशाली बनी हुई थी। इस कारण वह आग किसी भी समझौते मे बहुत ही महत्व रख सकती थी। इस प्रकार अपने आप मत्रीमण्डल से अलग हो जाने पर वह शक्तिहीन हो गई। तब से अग्रेज हिन्दू-बहुसख्यक काग्रेस का अपना शत्रु तथा मुसलमानो को, जिन्होने इस समय युद्ध प्रयत्नो मे अग्रेजो को सहायता देना स्वीकार कर लिया था, अपना मित्र समझने लगी। अत ब्रिटिश सरकार अब काग्रेस को मुस्लिम लीग, जो यद्यपि कही भी अपना मत्रीमण्डल नही बना सकी थी, के बराबर ही मानने लगी। इसी कारण अग्रेजो के पक्षपात व कूटनीति के कारण आगे चलकर भारत का विभाजन हुआ।

एक ओर जहा काग्रेस ने आरम्भ से ही अग्रेजो को युद्ध मे सहायता देने से इकार किया वहा भारतीय नरेशो ने युद्ध आरम्भ होते ही न केवल स्वय बल्कि अपने राज्यो के पूरे साधनो से युद्ध मे सहायता देन के लिये, वायसराय

के प्रतिनिधि—बीकानेर, नवानगर व पटियाला नरेश—क्रिप्स से मिले और यह तय किया गया कि अपनी रियासतो की अखण्डता और प्रभुसत्ता के अनुरूप राजा लोग देश के हित मे सभी सम्भव सहयोग देने को तैयार है। क्रिप्स ने कांग्रेस तथा मुस्लिम लीग के नेताओ से विचार विमर्श किया लेकिन उन्होने उन प्रस्तावो को अपने-अपने दृष्टिकोण से अस्वीकार कर दिया। क्रिप्स वापस लौट गया।

जून 1942 मे जापान के सहयोग से अंग्रेजी सेना के साथ बन्दी हुए कप्तान मोहनसिंह ने 16,000 भारतीय सैनिकों की आजाद हिन्द सेना, भारत के सुप्रसिद्ध क्रान्तिकारी रासबिहारी बोस की प्रेरणा से, गठित की। सुभाषचन्द्र बोस ने जर्मनी से सिंगापुर पहुँच कर वहा के भारतीयो का नेतृत्व और आजाद हिन्द सेना की बागडोर 4 जुलाई 1943 को सम्भाल ली। उसके प्रभाव ने पूर्वी एशिया के भारतीय प्रवासियो मे नई जान फूक दी। ई० सन् 1943 की 21 अक्टुबर को एक अस्थाई आजाद हिन्द सरकार की स्थापना की गई जिसको जापान, जर्मनी, इटली आदि देशो ने मान्यता दे दी। अब यह सेना भारत के पूर्वी सीमान्त पर आक्रमण करने लगी।[129]

क्रिप्स के लौट जाने पर भारत मे कांग्रेस ने यह तय किया कि देश के लिए तथा महायुद्ध का सकट टालने के लिये आवश्यक है कि अंग्रेजो का भारत से साम्राज्य समाप्त हो जावे। अत गाधीजी के नेतृत्व मे कांग्रेस ने "अंग्रेजो भारत छोडो" प्रस्ताव पारित किया। 8 अगस्त 1942 को यह प्रस्ताव पारित होते ही गाधीजी तथा कांग्रेस के सभी बडे नेता 9 अगस्त को गिरफ्तार कर लिये गये। जनता पर यह एक बडा वज्रपात था। उनमे इतना रोष भर गया कि उन्होने तोड-फोड तथा हिंसात्मक कार्यवाइया बहुत बडे पैमाने पर की जिसके कारण अंग्रेजी सरकार को शासन चलाना कठिन हो गया। सैकडो व्यक्तियो को सेना व पुलिस की गोलियो का शिकार होना पडा। हजारो को जेलो मे बन्द होना पडा।[130] अंग्रेजो ने इस राष्ट्रीय आन्दोलन को इस प्रकार बडी क्रूरता से दबाया। अब उन्हे आशका हो गई कि इस देश को गुलाम बनाये रखना सम्भव नही है।

ई० सन् 1945 की अगस्त तक अमरीकी सहायता से अंग्रेज महायुद्ध मे विजय पा गये। 'आजाद हिन्द सेना' का काफी बडा भाग बन्दी बना लिया गया। अंग्रेजो ने यही ठीक समझा कि वे भारत की जनता का सहयोग लेकर ही यहा का शासन चलाये। 14 जनवरी 1945 को कांग्रेस

को लिया। बीकानेर नरेश गगासिंह इनमे सबसे आगे रहे। उसने सितम्बर 6 को ही वायसराय को तार भेजकर युद्ध कार्यों म लगाने के लिये सम्राट को डेढ लाख रुपये और 1000 पाड भेंट किये। राज्य की काफी सेना-सुतर सेना (गगा रिसाला), सादूल लाइट इन्फेन्टी, विजय बेटरी आदि को यूरोप मे लडने को भेजा। इसके अलावा बीकानेर म एक युद्धबन्दी शिविर तथा युद्ध मे घायलो और बीमारो के लिये दो सैनिक अस्पताल खोले गये। छोटे टैंक और वायुयान खरीदने, भारतीय और अग्रेज सैनिकों को सुविधा देने, लन्दन की जनता की सहायता करने तथा रेडक्रास जैसे अन्य सहायता कार्यों के लिये महाराजा ने निजी कोष और रियासत की ओर से 15,19,063 रुपये, छ आना दो पाई की आर्थिक सहायता दी। इसी प्रकार एक दूसरी रियासत अलवर की जय पल्टन लगभग 6 वर्ष तक युद्ध मे रही। यहा के 14,000 रगरूट भारतीय सेना मे तथा 2,000 रगरूट राज्य की सेना मे भर्ती किये गये। राज्य के लगभग 4500 व्यक्ति विदेशो मे युद्ध लडते रहे जिनम से 400 युद्ध बन्दी हुए। राज्य ने 1,42,000 रु० के दो लडाकू हवाई जहाज दिये तथा युद्ध प्रयोजना के लिये 6,68 000 रुपये दिये गये। इसके अलावा 1,25,000 रुपये अन्य कार्यों के लिये दिये गये। लगभग साठ लाख रुपये युद्ध ऋणो मे दिये गये। इस प्रकार अन्य राजस्थानी नरेश भी अग्रेजो को युद्ध सहायता देने मे एक दूसरे से होड लगाते रहे। कई नरेश—बीकानेर, जोधपुर, जयपुर, बून्दी आदि स्वय युद्ध क्षेत्र मे भी गये।

महायुद्ध शीघ्र ही यूरोप के अलावा एशिया मे भी आरम्भ हो गया। ई० सन् 1941 के अन्त मे जापान के युद्ध मे प्रवेश करने पर युद्ध भारत की सीमा तक पहुँच गया। अग्रेजी सेना जापान से बराबर हारती जा रही थी। अत अग्रेजो ने भारतीय नेताओ से समझौता करना चाहा ताकि वे किसी न किसी प्रकार उनके युद्ध प्रयत्नो मे समथन देने लग जावें। अत मार्च 1942 मे सर स्टफर्ड क्रिप्स को ब्रिटिश सरकार ने इन प्रस्तावो के साथ भारत भेजा कि महायुद्ध के समाप्त होते ही भारत को डोमीनियन पद दे दिया जावेगा तथा भारतीय अपना सविधान बना सकेगे तथा फिलहाल, सिवाय प्रतिरक्षा विभाग के, समस्त विभाग भारतीयो को सौंप दिये जावेगे और इस प्रकार केन्द्र म राष्ट्रीय सरकार बना दी जावेगी। ये प्रस्ताव भारतीयों को सम्पूर्ण रूप से स्वीकार या अस्वीकार करने थे। रियासतो के मामले मे इन प्रस्तावो मे पहले के समझौतो पर पुनर्विचार करने की बात भी कही गई थी।[128] राजाओ

के प्रतिनिधि—बीकानेर, नवानगर व पटियाला नरेश—क्रिप्स से मिले और यह तय किया गया कि अपनी रियासतो की अखण्डता और प्रभुसत्ता के अनुरूप राजा लोग देश के हित मे सभी सम्भव सहयोग देने को तैयार है। क्रिप्स ने काग्रेस तथा मुस्लिम लीग के नेताओ से विचार विमर्श किया लेकिन उन्होने उन प्रस्तावो को अपने-अपने दृष्टिकोण से अस्वीकार कर दिया। क्रिप्स वापस लौट गया।

जून 1942 मे जापान के सहयोग से अग्रेजी सेना के साथ बन्दी हुए कप्तान मोहनसिह ने 16,000 भारतीय सैनिको की आजाद हिन्द सेना, भारत के सुप्रसिद्ध क्रान्तिकारी रासबिहारी बोस की प्रेरणा से, गठित की। सुभाषचन्द्र बोस ने जर्मनी से सिगापुर पहुँच कर वहा के भारतीयो का नेतृत्व और आजाद हिन्द सेना की बागडोर 4 जुलाई 1943 को सम्भाल ली। उसके प्रभाव ने पूर्वी एशिया के भारतीय प्रवासियो मे नई जान फूक दी। ई० सन् 1943 की 21 अक्टुबर को एक अस्थाई आजाद हिन्द सरकार की स्थापना की गई जिसको जापान, जर्मनी, इटली आदि देशो ने मान्यता दे दी। अब यह सेना भारत के पूर्वी सीमान्त पर आक्रमण करने लगी।[129]

क्रिप्स के लौट जाने पर भारत मे काग्रेस ने यह तय किया कि देश के लिए तथा महायुद्ध का सकट टालने के लिये आवश्यक है कि अग्रेजो का भारत से साम्राज्य समाप्त हो जावे। अत गाधीजी के नेतृत्व मे काग्रेस ने "अग्रेजो भारत छोडो" प्रस्ताव पारित किया। 8 अगस्त 1942 को यह प्रस्ताव पारित होते ही गाधीजी तथा काग्रेस के सभी बडे नेता 9 अगस्त को गिरफ्तार कर लिये गये। जनता पर यह एक बडा वज्रपात था। उनमे इतना रोष भर गया कि उन्होने तोड-फोड तथा हिंसात्मक कार्यवाइया बहुत बडे पैमाने पर की जिसके कारण अग्रेजी सरकार को शासन चलाना कठिन हो गया। सैकडो व्यक्तियो को सेना व पुलिस की गोलियो का शिकार होना पडा। हजारो को जेलो मे बन्द होना पडा।[130] अग्रेजो ने इस राष्ट्रीय आन्दोलन को इस प्रकार बडी क्रूरता से दबाया। अब उन्हे आशका हो गई कि इस देश को गुलाम बनाये रखना सम्भव नही है।

ई० सन् 1945 की अगस्त तक अमरीकी सहायता से अग्रेज महायुद्ध मे विजय पा गये। 'आजाद हिन्द सेना' का काफी बडा भाग बन्दी बना लिया गया। अग्रेजो ने यही ठीक समझा कि वे भारत की जनता का सहयोग लेकर ही यहा का शासन चलायें। 14 जनवरी 1945 को काग्रेस

कार्यकारिणी के सदस्य जेलो से छोड दिये गये। तत्कालीन वायसराय लॉर्ड वैवेल ने भारतीय नेताओ का एक सम्मेलन शिमला मे बुलवाया ताकि वायसराय की कार्यकारिणी समिति का पुनर्गठन हिन्दुओ व मुसलमानो के समान प्रतिनिधित्व के आधार पर किया जा सके। काग्रेस किसी हद तक समझौता करने को तैयार हो गई लेकिन मुस्लिम लीग ने आड लगा दी अत कोई समझौता नही हो सका।[131]

काग्रेस द्वारा प्रजामण्डलो को सहयोग

काग्रेस के नागपुर अधिवेशन (ई० सन् 1920) मे यह प्रस्ताव पारित किया गया था कि काग्रेस सभी नरेशो से अपील करती है कि वे अपने राज्यो मे तत्काल उत्तरदायी सरकार स्थापित कर देवे।[132] इस अधिवेशन के बाद राज्यो की प्रजा को काग्रेस का सदस्य बनाया जाने लगा और राज्यो को भारत मे काग्रेस के प्रान्तीय मण्डलो के साथ जोडा गया। कोई भी राज्य निकटवर्ती जिला काग्रेस मण्डल के साथ जोडा जा सकता था और वे अखिल भारतीय काग्रेस समिति के सदस्य बनकर अपना काग्रेस अधिवेशन मे भी प्रतिनिधित्व कर सकते थे। यह सब कुछ करते हुए भी काग्रेस राज्यो के आतरिक मामला म कोई हस्तक्षेप नही करती थी। काग्रेस के लखनऊ अधिवेशन (ई० सन् 1935) मे यह घोषणा की गई कि 'उसकी सम्मति मे भारत के प्रत्येक नागरिक को एक ही प्रकार के राजनैतिक, नागरिक व प्रजातन्त्रात्मक अधिकार मिलने चाहिये। यो राज्यो की प्रजा को अपने अधिकारो के लिये स्वय प्रयास करना चाहिये।"[133] इस प्रकार काग्रेस राज्यो के मामलो मे केवल सहानुभूति रखती रही लेकिन उसने कभी खुले रूप से उनकी सहायता नही की। इसी कारण बटलर समिति के सामने तथा गोल मेज सम्मेलन मे राज्यो की जनता को अपनी आवाज बुलन्द करने का कोई अवसर नही दिया गया। काग्रेस के अलावा अन्य राजनैतिक दलो—हिन्दू महासभा, मुस्लिम लीग आदि ने भी राज्यो की प्रजा को कोई सहायता नही दी। अत राज्यो की जनता को बराबर ब्रिटिश भारत के राजनीतिज्ञो के प्रति रोष बना रहा।

जब काग्रेस की, राज्यो की जनता के प्रति भावना की, ज्यादा ही आलोचना होने लगी तब काग्रेस के हरिपुरा अधिवेशन मे 5 मार्च 1938 को यह प्रस्ताव पारित किया गया कि 'काग्रेस रियासतो को भारत का ही एक भाग मानती है जिन्हे उससे कभी अलग नही किया जा सकता है। अत शेष भारत म जिस प्रकार की राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक स्वतन्त्रता

वह चाहती है वैसी ही रियासतो के लिये भी वह चाहती है, ऐसा उसका मत है। पूण स्वराज्य अर्थात सम्पूर्ण स्वाधीनता काग्रेस का ध्येय है। यह रियासतो सहित सम्पूर्ण भारत के लिये है। चूकि रियासतो और शेष भारत की स्थिति अलग-अलग है, इसलिए काग्रेस की नीति रियासतो के लिये सामान्यत ठीक नही जचती है। वह शायद रियासतो की स्वतन्त्रता की हलचल के स्वाभाविक विकास के लिये बाधक भी हो। आज की परिस्थिति मे रियासतो मे स्वाधीनता की लडाई का भार वहा की जनता को ही उठाना चाहिये। काग्रेस की शुभ कामनाये और समर्थन ऐसे शान्तिपूर्वक और उचित तरीके पर चलाये जाने वाले सघर्षो को सदा मिलते रहगे लेकिन काग्रेस सगठन की यह सहायता वतमान परिस्थितियो मे केवल नैतिक समर्थन और सहानुभूति के रूप मे ही होगी। राज्य की जनता द्वारा कोई भीतरी आदोलन काग्रेस के नाम से नही उठाना चाहिये। इसके लिये राज्यो मे स्वतन्त्र सगठन स्थापित किये जावे और यदि पहले से ही हो तो उनको जारी रखना चाहिये।"[134]

उपरोक्त प्रस्ताव का रियासतो की जनता पर बहुत अच्छा प्रभाव पडा। इसके कारण राज्यो मे जागृति और क्रियाशीलता की अपूर्व लहर आई। राज्यो के आन्दोलनो को और भी ज्यादा बल मिला जब अखिल भारतीय देशी राज्य लोक परिषद की अध्यक्षता ई० सन् 1938 मे जवाहरलाल नेहरू ने सम्भाली। तब नेहरू ने कहा था— 'कई लोग काग्रेस के रियासतो के प्रति रुख की आलोचना करते है लेकिन यह काग्रेस व भारत की जनता को तय करना है कि कब और कैसे वे हस्तक्षेप करेगे तथा कौनसी नीति अपनायेगे ताकि हस्तक्षेप प्रभावशाली व सफल हो।"[135] नेहरूजी के नेतृत्व मे देशी राज्यो की जनता शायद कोई ज्यादा प्रभावशाली कदम उठाती लेकिन तब ही (ई० सन् 1939 सितम्बर) दूसरा महायुद्ध छिड गया। अत सभी का ध्यान उस ओर चला गया।

अब तक राजस्थान के विभिन्न राज्यो मे प्रजा मण्डल आदि नामो से नये राजनैतिक सगठन स्थापित हो गये थे। इन सगठनो ने वहा की जनता मे अपूर्व जागृति ला दी थी। यह देखकर वहा के शासको ने इस जागृति को कुचलने के उद्देश्य से जाब्ता फौजदारी सशोधन कानून तथा जन सुरक्षा कानून जैसे दमनकारी कानून बनाकर समस्त राजनैतिक सस्थाओ को सरकारी मान्यता प्राप्त करने के लिए बाध्य किया। सरकारी मान्यता प्राप्त करने के लिए

उन्होने ऐसी शर्ते रखी कि कोई भी स्वाभिमानी नागरिक उनको स्वीकार करने को तैयार नही था। अत वहा की जनता ने अपने स्वेच्छाचारी शासको के विरुद्ध सघर्ष छेड दिया। ऐसे सघर्ष ई० सन् 1939 से 1948 तक बराबर चलते ही रहे। इस सघर्षो की मुख्य मागे उपरोक्त दोनो कानूनो को रद्द करने तथा अपने नरेशो की छत्रछाया मे उत्तरदाई सरकार स्थापित करने की थी। इन मागो के मनवाने के लिए जितने सघर्ष किये गये वे अग्रेजी प्रान्तो म किये गये सघर्षो से किसी भी प्रकार से कम नही थे। सैकडो व्यक्तियो को जेल जाना पडा, पुलिस के अत्याचार सहने पडे, स्त्रियो को बेइज्जत होना पडा तथा काफी लोगो को अपनी सम्पति खोनी पडी। कुछ व्यक्तियो को अपने प्राण तक देने पडे। उनमें से जोधपुर के बालमुकन्द बिस्सा, जैसलमेर के सागरमल गोपा, भरतपुर के रमेश स्वामी, बीकानेर के बलवीरसिंह, कोटा के नेनूराम शर्मा, शाहपुरा के प्रतापसिह बारहठ, बून्दी के नानकजी भील, बेगू के रूपाजी धाकड व किरपाजी धाकड, धोलपुर के छत्रसिह व पचमसिंह, डूगरपुर के मानाभाई स्वाट व काली बाई, लाडनू के चुन्नीलाल शर्मा व रुघाराम चौधरी, कुचामण के अल्काराम चौधरी व डाबडा के पन्नाराम चौधरी आदि-आदि के नाम लिये जा सकते हैं।[136]

जन आदोलनो की चरम सीमा

जोधपुर राज्य मे मारवाड लोक परिषद की स्थापना महाराजा की छत्रछाया मे उत्तरदायी सरकार की स्थापना करने के उद्देश्य से मई 1938 मे की गई लेकिन राज्य सरकार ने इसे समाप्त करने के प्रयत्न तत्काल आरम्भ कर दिये। तब ही राज्य सरकार के ईशारे से स्थापित की गई 'श्री राजभक्त देश हितकारिणी सभा' मारवाड लोक परिषद के विरोध मे काफी प्रचार करने लगी। इसी कारण जब विजयलक्ष्मी पण्डित जोधपुर आई तब वह भाषण देने भी जनता के बीच उपस्थित नही हो सकी। सुभाषचन्द्र बोस, जो तत्कालीन कांग्रेस अध्यक्ष थे, ने दिसम्बर 1938 मे कहा था कि जोधपुर राज्य मे नागरिक स्वतन्त्रता तथा उत्तरदाई सरकार स्थापित करने के लिये परिस्थितिया बिगडती ही जा रही है। ई० सन् 1938 म जब जोधपुर राज्य मे सलाहकार बोर्ड बना तब वह बोर्ड पूर्णरूप से ढकोसला था। जयनारायण व्यास उसके सदस्य बन गये और प्रत्येक मामले मे, जो वहा लाया गया, प्रशासन को सुधारने के लिये सुझाव दिये तथा राज्य र विरो की आलोचना की। इसी कारण लोक परिषद लो ।

अवसर मिल गया। जब राज्य सरकार से जयनारायण व्यास को सुधारो के लिये कोई आशा नही दिखलाई दी तब उसने इस्तीफा दे दिया। लोक परिषद ने ई० सन् 1940 मे पुन उत्तरदायी शासन के लिये आन्दोलन छेड दिया। मार्च 28 को जयनारायण व्यास, अचलेश्वरप्रसाद शर्मा, किशोरमल मेहता आदि गिरफ्तार कर लिये गये तथा लोक परिषद को अवैध घोषित कर दिया गया। महाराजा ने इस आन्दोलन को पूर्णतया आधारहीन आन्दोलन तथा लोक परिषद को नादान नवयुवको, जिन्होंने जीवन मे कही सफलता प्राप्त नही की, की जमात बतलाया। अप्रेल मे जब देशी राज्य लोक परिषद के प्रतिनिधि द्वारकादास कचरु ने राजनैतिक समझौते के लिये जोधपुर के प्रधानमत्री से मिलने की कोशिश की तब प्रधानमत्री ने उससे मिलने से इन्कार कर दिया। बाद मे जोधपुर सरकार को आन्दोलन के सामने झुक कर, लोक परिषद से समझौता कर, जयनारायण व्यास आदि राजनैतिक कार्यकर्त्ताओ को छोडना पडा। लोक परिषद कितनी लोकप्रिय थी इसका अनुमान राज्य को तब हुआ जब 1941 के नगर पालिका चुनावो मे लोक परिषद ने बहुमत प्राप्त किया। व्यास नगरपालिका के अध्यक्ष निर्वाचित हुए।[137]

अब लोक परिषद के कार्यकर्त्ताओ ने गावो मे किसानो को उनके अधिकारो और जागीरदारो के अत्याचार के सम्बन्ध मे जानकारी देना आरम्भ कर दिया। इस पर महाराजा और जागीरदारो ने इनके प्रभाव को समाप्त करने हेतु कायवाहिया शुरु कर दी। इस कारण लोक परिषद और सामन्ती तत्वो के बीच सघर्ष की स्थिति आ गई। बढते-बढते ई० सन् 1942 के आरम्भ मे किसानो व जागीरदारो के बीच लागबाग, लगान आदि के मामलो को लेकर काफी मनमुटाव हो गया। किसानो मे और ज्यादा जागृति लाने के लिए लोक परिषद ने लाडनू, नीमाज, चण्डावल आदि जागीरी गावो मे सभायें की जिनके कारण किसानो मे काफी जागृति आई। मार्च 28 को जब चण्डावल गाव मे उत्तरदायी शासन माग दिवस मनाने की कोशिश की गई तब गावो मे जाते समय लोक परिषद के मुख्य कार्यकर्त्ता मीठालाल त्रिवेदी व उनके साथियो को जागीरदार के आदमियो ने बिना किसी कारण बेरहमी से पीटा। राज्य सरकार ने फिर भी जागीरदार व उसके आदमियो के विरुद्ध कोई कायवाई नही की। लोक परिषद ने पुन सत्याग्रह आरम्भ कर दिया।[138] जून 9 को जयनारायण व्यास, अचलेश्वरप्रसाद शर्मा, बालमुकन्द बिस्सा, मथुरादास माथुर, छगनराज चौपासनीवाला, मीठालाल त्रिवेदी आदि 9

कार्यकर्त्ता गिरफ्तार कर लिये गये। जेल मे कुछ राजनैतिक बंदियो द्वारा भूख-हडताल की गई। कुछ कारणो से बालमुकन्द बिस्सा की 19 जून को मृत्यु हो गई। इससे जनता मे काफी रोष फैल गया।[139] यह रोष बढता ही गया और अगस्त 1942 के आन्दोलन के समय तो कुछ लोगो ने सशस्त्र आन्दोलन तक की तैयारी कर ली। ग्यारह नवयुवको ने विदेशी सैनिको की हत्या करने के लिये बमो तक का प्रयोग किया लेकिन यह ज्यादा नही चल सका। मई 1944 म जब राजनैतिक वातावरण कुछ शान्त हुआ तब राज्य सरकार ने समस्त राजनैतिक कैदियो को, जो भारत सुरक्षा अधिनियम के अतर्गत नजरबन्द थे, छोड दिया। बम काण्ड के कैदियो—जोरावरमल आदि को नही छोडा गया।[140] 24 अक्टूबर 1945 को जब देशी राज्य लोक परिषद के अध्यक्ष जवाहरलाल नेहरू जोधपुर आये तब यहा की जनता ने अभूतपूर्व स्वागत किया। राज्य सरकार ने भी पहली बार एक राष्ट्रीय नेता के स्वागत मे हार्दिक सहयोग दिया तथा सावजनिक अवकाश घोषित किया।[141] महाराजा ने भी नेहरूजी से मिलकर जनता की सद्भावना ली। ई० सन् 1947 मे जोधपुर राज्य मे जागीरदारो व काश्तकारो के बीच विवाद ज्यादा ही बढ गये। राज्य सरकार जागीरदारो का ही पक्ष लेती रही। मार्च 13 को जब किसान सभा का एक विशेष सम्मेलन जागीरी गाव डाबडा मे हुआ तब जागीरदारो द्वारा बुलाये गये शेखावाटी के 22 ऊट सवारो ने किसान सभा के सम्मेलन को भग किया तथा ऊट सवारो ने नेताओ पर गोलिया चलाई और तलवारो से वार किये। इस काण्ड मे 5 व्यक्ति मारे गये।[142] नरसिंह कछवाहा, राधाकिशन, मथुरादास माथुर, द्वारकादास पुरोहित, छगनराज चौपासनीवाला आदि बुरी तरह घायल हुए। जले पर नमक छिडकने को राज्य ने इन कार्यकर्त्ताओ पर ही अशांति फैलाने का मुकदमा चलाया लेकिन 1948 मे यह मुकदमा वापस ले लिया गया।[143] ई० सन् 1947 मे जोधपुर राज्य ने अपने प्रतिनिधि केन्द्रीय सविधान सभा मे भी भेजे। यो जोधपुर महाराजा ने मई 1944 मे सवैधानिक सुधारो हेतु एक सदस्यी सुधालकर समिति बनाई थी लेकिन उसकी रिपोर्ट में लोक प्रतिनिधियो को सत्ता हस्तान्तरित करने की कोई योजना नही थी। जो सभा बनने को थी उसमें सभा के सदस्यो को तीन श्रेणियो मे बाटा गया था—क्षेत्रीय 37, आरक्षित 15 और मनोनीत 9 तथा राज्य के 8 मत्री पदेन सदस्य होने थे। स्पष्टत यह सभा नाम की जन प्रतिनिधि सभा होती तथा उत्तरदायी सरकार की स्थापना न हो पाती। लोक परिषद ने 1946 मे नावा अधिवेशन मे इसकी आलोचना की। जोधपुर नरेश उम्मेदसिंह शायद कुछ

श्रौर प्रगतिशील कदम उठाते लेकिन जून 1947 मे उनका देहान्त हो गया ।[144] उनके नवयुवक उत्तराधिकारी हनुवन्तसिंह को उनके सलाहकारो ने ऐसा गुमराह किया कि वह जोधपुर राज्य को पाकिस्तान मे सम्मिलित करने तक का सोचने लगे। सौभाग्यवश वह ऐसा न कर सके श्रौर जोधपुर राज्य को भारत सघ मे 11 अगस्त 1947 को सम्मिलित होना पडा। महाराजा हनुवन्तसिंह का पाकिस्तान मे मिलने के इरादे को बदलवाने मे वायसराय माउण्टबेटन का प्रमुख हाथ था। केन्द्रीय राज्य मत्रालय के सचिव वी० पी० मेनन ने प्रयत्न कर 11 अगस्त 1947 को माउण्टबेटन श्रौर हनुवन्तसिंह की भेंट करवा दी थी अन्यथा भोपाल का नवाव महाराजा को पाकिस्तान मे सम्मिलित होने के लिये बराबर उकसा रहा था ।[145]

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भारत मे लोकतन्त्रवाद की एक नई लहर देश मे दौड गई। राजस्थान की प्रत्येक रियासत मे जन आन्दोलनो ने श्रौर भी उग्र रूप धारण कर लिया। अत यहा की कई रियासतो के राजाश्रो ने अपने राज्यो की लोक परिषदो को सत्ता सौपनी आरम्भ की। जोधपुर नरेश तब भी प्रतिक्रियावादियो से घिरा हुआ था। अत उसने अक्टूबर 1947 मे अपने मत्री मण्डल को पूर्णतया सामन्तवादी बना दिया ।[146] जनता मे असन्तोष ज्यादा ही फैल गया। यह देखकर महाराजा ने 5 फरवरी 1948 को घोषणा की कि शीघ्र ही लोकप्रिय मारवाडी मन्त्रीमण्डल सरकार बनाई जावेगी तथा शीघ्र ही राज्य के लिये नया सविधान बनाने के लिये बालिग मताधिकार से सविधान सभा बनाई जावेगी। इसको मारवाड लोक परिषद के अध्यक्ष जयनारायण व्यास ने एक ढकोसला बतलाया श्रौर महाराजा को चेतावनी दी कि वह वर्तमान सामन्ती मत्री मण्डल को 8 मार्च तक समाप्त कर देवे अन्यथा लोक परिषद उत्तरदायी सरकार स्थापित करने के लिये सघर्ष शुरू कर देगी ।[147] तब ही भारत सरकार ने हस्तक्षेप किया श्रौर जोधपुर नरेश को कुछ फेरबदल करने को विवश होना पडा। ऐसी परिस्थितियो मे जोधपुर नरेश ने प्रथम लोकप्रिय मिलीजुली सरकार का निर्माण 3 मार्च 1948 को कर दिया। उसके बाद मन्त्री मण्डल का पुन निर्माण 17 जून की आज्ञा द्वारा किया गया श्रौर अन्त मे महाराजा ने 31 अगस्त 1948 की घोषणा द्वारा राज्य के शासन सम्बन्धी कामो के प्रति जिम्मेवार मत्री मण्डल की स्थापना कर दी। तब मुख्यमन्त्री जयनारायण व्यास को तथा दीवान पी०एस० राव को बनाया गया ।[1]

यह मत्रीमण्डल राजस्थान के निर्माण तक (30 मार्च 1949 तक) चला जबकि जोधपुर राज्य वृहत राजस्थान मे विलीन हो गया।

बीकानेर राज्य की जनता मे राजनैतिक चेतना लाने तथा उत्तरदायी प्रशासन की स्थापना के लिये ई० सन् 1942 मे रघुवरदयाल गोयल ने वहा प्रजा परिषद की स्थापना की लेकिन राज्य ने उसे गैरकानूनी घोषित कर दिया और रघुवरदयाल को राज्य से निर्वासित कर दिया। कुछ माह तक कानपुर मे रहने के बाद जब वह बीकानेर लौटा तब वह अपने साथियो—गगादास कौशिक, दाऊदयाल आचार्य आदि के साथ गिरफ्तार कर लिया गया। अगले वर्ष जनवरी 26, ई० सन् 1943 को स्वतत्रता दिवस मनाने पर मघाराम वैद्य, भिखालाल, रामनारायण आदि गिरफ्तार कर लिये गये जो महाराजा गगासिह के देहान्त के बाद ही छोड़े गये।[149]

ई० सन् 1943 की फरवरी 2 को बीकानेर नरेश गगासिह का देहान्त हो गया। वह एक महान व्यक्तित्व का नरेश तथा आधुनिक बीकानेर का निर्माता था। उसकी गणना राजस्थान के महत्वपूर्ण प्रभावशाली शासको मे ही नही बल्कि भारत के महान राजनीतिज्ञो मे की जा सकती है। उसने न केवल भारत बल्कि अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र मे भी ख्याति प्राप्त की। वह घोषणायें, भाषण व वक्तव्य देने मे बडे कुशल थे। महाराजा ने अपने शासनकाल मे प्रगतिशील राज्यो की भाति ही अपने राज्य मे न केवल धारा सभा बल्कि नगरपालिकायें, जिला बोर्ड व पचायतें भी स्थापित की। निजी खर्च की सीमा बाधी और बजट के रूप मे राज्य का आय एव व्यय का विवरण धारा सभा मे पेश करने लगे तथा बीकानेर नगर मे प्राथमिक शिक्षा को भी अनिवार्य कर दिया था। ये सब कुछ करते भी ये सब ढकोसला बन कर रह गये। राजनैतिक, आर्थिक व सामाजिक दृष्टि से बीकानेर अन्य राज्यो से किसी भी प्रकार से ज्यादा प्रगति नही कर सका। उसके शासक के अन्तिम 20 वर्ष, जबकि देश मे अपूर्व जन जागृति आई तब बीकानेर मे जनता का दमन, उत्पीडन व शोषण ही किया गया। यदि बीकानेर राज्य ने कुछ समृद्धि प्राप्त की तो वह राज्य के उत्तरी भाग मे गगा नहर लाकर की, जिसके लिये न केवल बीकानेर बल्कि राजस्थान भी उनका चिर ऋणी रहेगा।

गगासिह के उत्तराधिकारी सादूलसिह ने भी अपने पिता की ही दमनात्मक नीति अपनाई। ई० सन् 1945 मे जागीरदारो के अत्याचारो के विरुद्ध दूधवाखारा के किसानो ने सत्याग्रह किया तब उसे कठोरता से दबाया

गया। इस समय चौधरी कुम्भाराम आर्य पुलिस सबइस्पेक्टर की नौकरी छोड कर प्रजा परिषद मे सम्मिलित हो गये। ई० सन् 1946 की मई मे तब किसानो ने बीकानेर व राजगढ मे जुलुस निकाले तब भी किसानो को बुरी तरह से पीटा गया तथा कई कार्यकर्त्ताओ को गिरफ्तार किया गया। गिरफ्तार होने वालो मे रघुवरदयाल गोयल, गणपतसिंह, कुम्भाराम आर्य, हीरालाल शर्मा आदि मुख्य थे। जून 30 को रायसिंहनगर मे बीकानेर राज्य का प्रथम राजनैतिक सम्मेलन किया गया। राज्य ने इस सम्मेलन मे लाठी प्रहार कराये। इसमे बीरबल शहीद हुआ। इस सम्मेलन का सयोजक रामचन्द्र जैन तथा स्वागताध्यक्ष चौधरी रयालीसिंह था। इस सम्मेलन मे भाग लेने के कारण कई नेता गिरफ्तार किये गये। इस सम्मेलन से राज्य मे काफी जागृति आई। यह जागृति देखकर ही महाराजा ने 26 जुलाई को शीघ्र ही उत्तरदायी सरकार स्थापित करने की घोषणा की। जुलाई 27 को सभी राजनैतिक बन्दी, सिवाय हीरालाल, जिसे हिंसावादी माना जाता था, के छोड दिये गये। सितम्बर 13 को बीकानेर मे एक कार्यकर्त्ता सम्मेलन हुआ लेकिन सरकार ने अकारण ही रामचन्द्र जैन, रामलाल, मालचन्द्र हिसारिया आदि को सम्मेलन मे ही गिरफ्तार कर लिया। कुम्भाराम के नाम भी वारण्ट जारी कर दिया गया। अक्टूबर 29 को प्रजा परिषद ने अपना दूसरा कार्यकर्त्ता सम्मेलन अपनी नीति स्पष्ट करने को बुलाया लेकिन उस समय भी हरदत्तसिंह, जो न्याय विभाग मे मु सिफ के पद को छोड कर प्रजा परिषद का सदस्य बन गया था, मनोहरसिंह, गुरुदयालसिंह आदि को गिरफ्तार कर लिया गया। इसी समय बीकानेर राज्य के जागीरी गाव कागट मे जागीरदार द्वारा अनुचित लाग बागे तथा लगान लेने का किसानो ने विरोध किया। इस पर जागीरदार के आदमियो ने गाव मे लूटमार की और स्त्रियो को बेइज्जत किया। किसान बीकानेर गये लेकिन वहा उनकी कोई सुनवाई नही की गई। तब प्रजा परिषद ने सात व्यक्तियों—स्वामी सच्चिदानन्द, केदारनाथ, हसराज, दीपचन्द, माजीराम, रगा व रूपराम को जाच के लिये भेजा। जागीरदार को जब यह ज्ञात हुआ तब उसने इन सात व्यक्तियो को गढ मे बुलवा कर नगा कर इतना पीटा की वे बेहोश हो गये। काफी तग करने के बाद इनको गाव से बाहर निकाल दिया।[160] केदारनाथ (उर्फ प्रो० केदार) अब राजस्थान सरकार मे मत्री है। इस प्रकार जागीरदारो का आतक बढता ही गया। राज्य सरकार चुप ही बैठी रही। ई० सन् 1947 मे जब देश स्वतन्त्र हुआ तब भी यहा राष्ट्रीय ध्वज का अपमान किया गया।

पहले लिखा जा चुका है कि बीकानेर राज्य मे प्रतिनिधि सभा 1913 मे स्थापित की गई थी जिसमे 35 सदस्य होते थे। ई० सन् 1917 मे यह सख्या 45 कर दी गई—6 कार्य कारिणी परिषद के, 15 चुने हुए तथा 19 मनोनीत। ई० सन् 1917 से यह विधान सभा कहलाने लगी। इस विधान सभा को अब लोकप्रिय बनाने के लिये इसके पुनर्गठन की घोषणा महाराजा ने 1946 मे की और 1947 मे बीकानेर अधिनियम लागू किया जिसके अनुसार महाराजा के सरक्षण मे कार्य करते हुए जनता के प्रति उत्तरदायी सरकार बननी थी। व्यवस्थापिका दो सदन वाली होनी थी जो व्यस्क मताधिकार द्वारा चुनी जानी थी। सम्पूर्ण शासन एक परिषद को सौपा जाना था जो व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायी होना था। महाराजा ने घोषणा की कि अप्रेल 1948 मे उत्तरदायी सरकार बना दी जावेगी लेकिन यह घोषणा ही रह गई। चुनाव होने तक के लिये एक अतरिम मन्त्री मण्डल 10 मार्च 1948 को बनाया गया। इसमे प्रधान मन्त्री के अलावा 9 मन्त्री लिये गये जिनमे से 4 प्रजा परिषद के तथा शेष राज्य के विभिन्न वर्गो के प्रतिनिधियो से मनोनित किये गये। प्रजा परिषद के हरदत्तसिह को उपप्रधान मन्त्री तथा गौरीशकर आचार्य, मस्तानसिंह और कुम्भाराम को मन्त्री बनाया गया।[151] प्रजा परिषद इस प्रकार के मिले जुले मन्त्री मण्डल से सतुष्ट नही हो सकी और इस कारण काग्रेसी मन्त्रियो ने त्याग पत्र दे दिया। अत अतरिम मन्त्री मण्डल भग कर दिया गया। अगले वर्ष बीकानेर राज्य राजस्थान सघ मे सम्मिलित हो गया।

भारतीय सविधान सभा मे भाग लेने तथा भारत के साथ मिलकर एक शक्तिशाली केन्द्र के निर्माण मे बीकानेर नरेश सादु लसिह का विशेष सहयोग रहा। उन्ही के कारण बीकानेर, जोधपुर, जयपुर आदि के प्रतिनिधियो ने सविधान सभा मे अपना स्थान ग्रहण कर लिया। यो महाराजा बीकानेर ने राज्य के ध्वज के विषय मे विवाद उठाया था कि उस ध्वज को वैसा ही सम्मान मिलना चाहिये जैसे राष्ट्रीय ध्वज को लेकिन यह माना नही गया।[152] शासक भारत के स्वतन्त्र होने के बाद भी राष्ट्रीय और राजकीय ध्वज मे अन्तर नही समझ पाये थे। यह अन्तर उनको अपनी रियासत के 30 मार्च 1949 को राजस्थान मे सम्मिलित होने के बाद समझ मे आया।

जयपुर के शेखावाटी क्षेत्र मे जागीरदारो व किसानो के बीच सघर्ष द्वितीय महायुद्ध काल मे भी चलता रहा। हरलालसिह, नेतरामसिह व

नरोत्तमलाल जोशी किसानो मे अच्छा प्रभाव रखते थे तथा उनके नेतृत्व मे ही आन्दोलन चला रहे थे। जयपुर राज्य प्रजा मण्डल किसानो की बराबर सहायता कर रहा था। जून 1942 मे, मिर्जा इस्माईल ने प्रधान मन्त्री बनने के बाद इस आन्दोलन के प्रति उदार दृष्टिकोण अपनाया और किसानो की मागो को स्वीकार कर लिया। अगस्त 1942 के 'भारत छोडो' आन्दोलन के समय यहा का प्रजा मण्डल दो दलो मे बट गया। एक पक्ष—बाबा हरिश्चन्द्र, ओमदत्त वैद्य रामकरण जोशी, दौलतमल भण्डारी, बी एम देश पाण्डे लादूराम शर्मा, रामेश्वरलाल अग्रवाल आदि–आन्दोलन के पक्ष मे रहे लेकिन प्रजा मण्डल के कुछ अन्य सदस्यो ने भाग ही नही लिया। मिर्जा इस्माईल ने प्रजा मण्डल की समस्त कारवाइयो को विफल कर दिया। कुछ नेता गिरफ्तार हुए लेकिन वे शीघ्र ही छोड दिये गये।[153]

ई० सन् 1944 मे जयपुर मे निर्वाचित नगरपालिका स्थापित हुई। उसी समय जयपुर राज्य मे विधान सभा व प्रतिनिधि सभा के चुनाव हुए। प्रतिनिधि सभा मे 125 सदस्य तथा विधान सभा मे 51 सदस्य निर्वाचित होने थे। इन सभाओ का 5 सितम्बर 1945 को विधिवत अधिवेशन हुआ। रामकिशोर व्यास प्रतिनिधि सभा मे तथा दौलतराम भण्डारी धारा सभा मे प्रजा मण्डल दल के नेता बने। मई 1946 मे प्रजा मण्डल के देवीशकर तिवाडी को मन्त्री पद दिया गया। अगले वर्ष प्रजा मण्डल के दौलतमल भण्डारी तथा सरदार दल के नेता कुशलसिंह को भी मन्त्री पद दिये गये। भारत स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद 27 मार्च 1948 को अतरिम सरकार की स्थापना की गई। दीवान वी टी कृष्णमाचारी को मन्त्री मण्डल का अध्यक्ष, प्रजा मण्डल दल के नेता हीरालाल शास्त्री को मुख्य मन्त्री व टीकाराम पालीवाल को राजस्व मन्त्री बनाया गया। यह मन्त्री मण्डल सयुक्त दायित्व के आधार पर काम करने लगा। ई० सन् 1949 की 30 मार्च को जब सयुक्त राजस्थान का निर्माण हुआ तब यह मन्त्री मण्डल समाप्त हो गया तथा जयपुर राज्य का विलयन राजस्थान मे हो गया। इस प्रकार जयपुर राज्य को अन्य राज्यो की तुलना मे स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिये बहुत कम सघर्ष करने पडे।[154]

उदयपुर राज्य मे प्रजा मण्डल से प्रतिबन्ध 1941 मे हटा। अगले ही वर्ष जब 'भारत छोडो' आन्दोलन आरम्भ हुआ तब प्रजा मण्डल ने एक प्रस्ताव पास कर महाराणा को अग्रेजी साम्राज्य से सम्बन्ध विच्छेद करने को 20 अगस्त को लिखा। पत्र मिलते ही महाराणा ने प्रजा मण्डल के कार्यकर्ताओ को

गिरफ्तार कर लिया। अगस्त 23 को जुलूस निकालने पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया। लगभग 500 व्यक्ति गिरफ्तार किये गये जिनमे 7 महिलायें भी थीं। इस आन्दोलन मे माणकलाल वर्मा, मोहनलाल सुखाडिया, नरेन्द्रपालसिंह चौधरी, रूपलाल सोमानी, भवानीशंकर नन्दवाना, उमरावसिंह टावरिया, गणेशीलाल, जयसिंह राणावत आदि का विशेष योगदान रहा। इनको फरवरी 1944 मे रिहा किया गया। ई० सन् 1945 के अन्त मे उदयपुर मे अखिल भारतीय देशी राज्य परिषद का अधिवेशन जवाहरलाल नेहरु की अध्यक्षता मे हुआ। देशी रियासत मे पहली बार यह अधिवेशन होने के कारण यहा के प्रजा मण्डल को बहुत बल मिला।[155]

ई० सन् 1947 मे राज्य के कर्मचारियो ने उचित वेतन दिये जाने की माग मनवाने के लिये यहा आन्दोलन किया। राज्य ने आन्दोलन को दबाने की बहुत कोशिश की। एक बार तो कर्मचारियो के जुलूस पर गोली तक चलाई गई लेकिन राज्य को झुकना पडा व कर्मचारियो से समझौता करना पडा।

ई० सन् 1947 मे राज्य ने वैधानिक सुधारो के लिये एक समिति के एम मुंशी की अध्यक्षता मे नियुक्त की जिसमे प्रजा मण्डल को बहुमत दिया गया। रिपोर्ट तैयार होने पर उस पर राज्य ने अमल नही किया और एक नया ही विधान बनवाया जिसके अनुसार प्रजा मण्डल का एक ही प्रतिनिधि मंत्री मण्डल मे लिया गया। जागीरदारो को प्रजा मण्डल की अपेक्षा अधिक अधिकार दिये गये। अत प्रजा मण्डल इस संविधान के विरुद्ध था। इस प्रकार यहा कोई लोकप्रिय मंत्री मण्डल नही बन सका।[156]

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद महाराणा ने उदयपुर को भी भारतीय संघ मे शामिल करने की घोषणा की। मार्च 1948 मे राजपूताने की कुछ रियासतो का एक संघ बना तब 18 अप्रेल 1948 मे उदयपुर भी उसमे सम्मिलित हो गया और इस प्रकार 10 रियासतो का राजस्थान संघ स्थापित हुआ। इस संघ का नाम युनाइटेड स्टेटस् ऑफ राजस्थान रखा गया तथा इसकी राजधानी उदयपुर रखी गई। बाद मे यह संघ वृहत राजस्थान राज्य मे मिल गया।[157]

हाडौती क्षेत्र (कोटा, बूंदी व झालावाड राज्य) मे जन-जागृति लाने वालो मे अभिन्न हरि, गोपाललाल कोटिया, नित्यानन्द नागर, ऋषिदत्त मेहता आदि मुख्य थे। बाद के वर्षो मे वृजसुन्दर शर्मा, इन्द्रदत्त स्वाधीन, कंवरलाल जेलिया, मास्टर रामचन्द्र, मागीलाल भव्य आदि ने भी राजनैतिक जागृति मे काफी योगदान दिया।[158]

बून्दी राज्य मे सन् 1931 मे स्थापित प्रजा मण्डल मे महाराव ईश्वरसिंह के समय मे ज्यादा पनप नही सका। ई० सन् 1944 मे यहा लोक परिषद की स्थापना हुई। इसका अध्यक्ष हरिमोहन माथुर तथा सचिव वृजसुन्दर शर्मा था। इसका मुख्य उद्देश्य राज्य मे उत्तरदायी शासन स्थापित करना था। लोक परिषद आन्दोलनो के द्वारा 1946 की अक्टूबर मे महाराव से यह घोषणा करा सकी कि शीघ्र ही कुछ लोकप्रिय नेता मन्त्री मण्डल मे लिये जावेगे। महाराव ने राज्य के लिये एक संविधान बनाने की भी घोषणा की। लोक परिषद पूर्णतया लोकप्रिय मन्त्री मण्डल चाहती थी अत राज्य से समझौता नही हो सका। मार्च 1948 मे बून्दी राज्य राजस्थान संघ मे सम्मिलित हो गया।[159]

झालावाड राज्य मे गिरधर शर्मा, रामनिवास शर्मा आदि राष्ट्रीय विचारो के व्यक्तियो ने राजनैतिक जागृति फैलाई। यहा के अन्य प्रमुख कार्यकर्ताओ मे भैरवलाल कालावादल, मागीलाल भव्य, मास्टर रामचन्द्र आदि थे। प्रजा मण्डल के 1947 मे स्थापित होने पर यहा उसे राजराणा का सहयोग व संरक्षण प्राप्त हुआ। ई० सन् 1947 मे महाराज राणा स्वयं प्रधानमन्त्री तथा कन्हैयालाल मित्तल और मागीलाल भव्य मन्त्री बने लेकिन शीघ्र ही, 1948 की 18 अप्रेल को यह राज्य राजस्थान संघ मे सम्मिलित हो गया।[160]

कोटा मे राजनैतिक जागृति का श्रेय नयनूराम शर्मा, अभिन्न हरि, चन्द्रदत्त स्वाधीन, नाथूलाल जैन, गजेन्द्रकुमार, विमलकुमार कजोलिया, तनमुखलाल मित्तल आदि को है। ई० सन् 1938 मे यहाँ प्रजा मण्डल की स्थापना हुई तब से यहा राजनैतिक जागृति बढी। ई० सन् 1942 के 'भारत छोडो' आन्दोलन के समय यहा की जनता ने तीन दिन तक सम्पूर्ण शासन अपने हाथो मे ले रखा। आन्दोलन के आरम्भ मे ही यहा के कार्यकर्ता जेल मे डाल दिये गये थे। अत जनता ने कोटा नगर के दरवाजो पर कब्जा कर लिया। कोतवाली पर भी कब्जा कर लिया और सरकारी भवनो पर तिरंगा झण्डा फहरा दिया। पुलिस को बैरको मे बन्द कर दिया गया। बाद मे कोटा महाराव द्वारा यह आश्वासन दिये जाने पर कि जनता का कोई दमन नहीं किया जावेगा शासन वापस सौंप दिया गया।[161] ई० सन् 1945 मे भी यहा राष्ट्रीय कार्यकर्ताओ को शांति भंग न करने सम्बन्धी काले कानून का शिकार होना पडा। बाबूलाल 'इन्दु' को यह बतलाने पर कि उसका पेशा कोटा राज्य की

गैर जिम्मेवार सरकार को उखाड़ फेंकना है, सख्त कैद की सजा दी गई। भारत के स्वतन्त्र होने पर यह राज्य सयुक्त राजस्थान मे सम्मिलित हो गया।

भरतपुर राज्य मे ई० सन् 1938 में प्रजा मण्डल की स्थापना की योजना के बाद ई० सन् 1939 मे प्रजा मण्डल और राज्य शासन के बीच सघर्ष चला और 1940 मे राज्य से समझौता होकर उसका पजीयन हुआ और इसका नाम भरतपुर राज्य प्रजा परिषद रखा गया। ई० सन् 1942 के आन्दोलन के समय यहाँ के कई कार्यकर्ता—युगलकिशोर चतुर्वेदी, आदित्येन्द्र आदि गिरफ्तार कर लिये गये। उसी वर्ष राज्य में बाढ़ आ जाने के कारण यह आन्दोलन स्थगित हो गया और प्रजा मण्डल का राज्य से समझौता हो गया। ई० सन् 1943 मे प्रजा मण्डल ने व्यवस्थापक सभा, अर्जजया प्रतिनिधि सभा के चुनाव मे 37 मे से 27 स्थान जीत लिए। विधान सभा मे प्रमुख विरोधी दल प्रजा परिषद का बना। इसका नेता युगलकिशोर चतुर्वेदी तथा उपनेता आदित्येन्द्र चुने गये। बाद मे इन सदस्यो ने व्यवस्थापक सभा का बहिष्कार कर दिया। ई० सन 1947 मे बेगार के विरोध मे जनता ने आन्दोलन किया। इसको बडी क्रूरता से दबाया गया। एकत्रित भीड पर घुडसवार सैनिक दौडाये गये जिसके कारण काफी लोगो को चोटें आई। कुछ दिन बाद जब महाराजा दौरे से लौटे तब जनता ने फिर सत्याग्रह किया। पुलिस ने एक बस सत्याग्रहियो पर चला दी जिसके कारण कई सत्याग्रही घायल हुए। रमेश स्वामी की तब ही मृत्यु हो गई। कई कार्यकर्ता गिरफ्तार कर लिये गये।[162] भारत के स्वतन्त्र होने के बाद दिसम्बर 1947 मे महाराजा ने अन्तरिम सरकार बना कर चार लोकप्रिय मन्त्री लिये लेकिन तब ही यहा का शासन केन्द्रीय सरकार ने अपने हाथो मे ले लिया क्योकि यहा तब साम्प्रदायिक दगे ज्यादा ही हो रहे थे।

अलवर राज्य मे ई० सन् 1933 मे काग्रेस समिति की स्थापना हुई। कई लोग काग्रेस के साधारण सदस्य बने। राज्य ने ऐसे कई सदस्यो को राजद्रोह कानून के तहत गिरफ्तार कर सजाये दे दी। ई० सन् 1938 मे काग्रेस समिति ने अपना नाम बदल कर प्रजा मण्डल रख लिया। प्रजा मण्डल के लिये पहले राज्य सरकार ने यह रोक लगा दी कि न तो प्रजा मण्डल अपना झण्डा लगा सकेगी और न वह अखिल भारतीय काग्रेस से सम्बद्ध हो सकेगी लेकिन इन शर्तो को प्रजा मण्डल ने बनने के बाद नही माना। ई० सन् 1942 के "भारत छोडो" आन्दोलन का प्रभाव इस राज्य पर भी पडा। उस समय प्रजा मण्डल के शोभाराम, रामचन्द्र उपाध्याय व कृपादयाल ने वकालत छोड दी।

शोभाराम ने 13 दिवसीय अनशन भी किया।[163] ई० सन् 1943 मे रामजीलाल अग्रवाल के प्रजा मण्डल मे आ जाने से इसका कार्य तेजी से चलने लगा। मास्टर भोलानाथ का भी प्रजा मण्डल मे कार्य प्रशसनीय रहा। फरवरी 1946 मे जब प्रजा मण्डल का एक सम्मेलन जागीरी जुल्मो के विरुद्ध खेडा मगलसिंह मे हो रहा था तब उसको सरकार विरोधी मान कर प्रजा मण्डल की कार्य-कारिणी के सब सदस्य गिरफ्तार कर लिये गये। इन गिरफ्तारियो का जनता ने प्रबल विरोध किया तथा 8 फरवरी को दमन विरोधी दिवस मनाया। अलवर नगर मे एक सप्ताह तक हडताल रही। राज्य ने काफी गिरफ्तारिया की। अन्त मे हीरालाल शास्त्री के प्रयत्नो से प्रजा मण्डल तथा महाराजा के बीच समझौता हो गया। सभी गिरफ्तार व्यक्ति छोड दिये गये। अगस्त माह मे यहा उत्तरदायी शासन के लिये आन्दोलन हुआ जिसके कारण अलवर नगर तथा राज्य के सभी कस्बो मे पूर्ण हडताले हुई। यह आन्दोलन 11 दिन तक चला तथा 600 व्यक्ति गिरफ्तार हुए।[164] अक्टूबर 1947 मे महाराजा ने मत्री मण्डल मे तीन लोकप्रिय मत्री लेने की घोषणा की लेकिन यह घोषणा ढकोसला मात्र थी। अत प्रजा मण्डल ने इसे स्वीकार नही किया। ई० सन् 1947 मे यहा ज्यादा ही साम्प्रदायिक दगे हुए, अत 7 फरवरी 1948 को केन्द्रीय सरकार ने यहा का शासन अपने हाथो मे ले लिया। मार्च 18 को यह राज्य मत्स्य सघ मे सम्मिलित हो गया।

धोलपुर राज्य प्रजा मण्डल की स्थापना 1936 मे हुई। इसके अध्यक्ष कृष्णदत्त पालीवाल व सचिव मूलचन्द्र चुने गये। राज्य ने ऐसी राजनैतिक सस्था को बिल्कुल पसन्द नही किया और मण्डल की सम्पत्ति जब्त कर ली। सन् 1938 मे प्रजा मण्डल ने सरकार को आवेदन पत्र पेश किया कि राज्य मे उत्तरदायी सरकार की स्थापना की जावे लेकिन सरकार ने कतई ध्यान नही दिया। ई० सन् 1940 मे पूर्वी राजपूताना की रियासत के एक सम्मेलन मे पुन उत्तरदाई सरकार की माग की गई लेकिन फिर भी सरकार ने ऐसी माग करने वालो का दमन किया। ई० सन् 1947 मे तसीमोली गाव मे कुछ लोगो ने एक राजनैतिक सम्मेलन किया तब दो व्यक्ति—छत्रसिंह व पचमसिंह पुलिस की गोली के शिकार हुए।[165] जनता ने फिर भी आन्दोलन चलाये और अन्त मे रियासत को झुकना पडा और वैधानिक सुधार की योजना घोषित करनी पडी लेकिन शीघ्र मार्च 1948 मे रियासत का विलयन मत्स्य सघ मे हो गया।

करौली राज्य मे राजनैतिक जागृति का सूत्रपात कुवर मदनसिंह ओकारसिंह, चिरजीलाल शर्मा आदि ने किया। ई० सन् 1938 मे प्रजा मण्डल की स्थापना होने के बाद जनता को सगठित किया गया और मपोटरा आदि स्थानो पर जागीरी जुल्मो के विरुद्ध सम्मेलन किये गये। नवम्बर 1946 मे पडौसी रियासतो के राजनैतिक कार्यकर्त्ताओ ने उत्तरदाई सरकार की माग उठाई। अत महाराजा ने जुलाई 1947 मे सवैधानिक सुधारो हेतु एक समिति बनाई। समिति काम करने लगी ही थी कि ई० सन् 1948 मे यह राज्य मत्स्य सघ मे सम्मिलित हो गया।[166]

किशनगढ राज्य अजमेर के अत्यन्त निकट होने के कारण वहा काफी जागृति आई। यहा के प्रजा मण्डल के मुख्य कार्यकर्ता कातिचन्द्र व पुरुषोत्तम-लाल शर्मा जमालशाह आदि थे।[167]

टोक मुसलमानी राज्य था। यहा ज्यादातर धार्मिक आदोलन हुए। टोक म ही लावा ठिकाना था जहा के महेन्द्रकुमार जैन ने राष्ट्रीय कार्यक्रमो मे बडे उत्साह से भाग लिया।[168]

शाहपुरा राज्य मे प्रजा मण्डल की स्थापना ई० सन् 1938 मे हुई। इसने बेगार बन्द करने, नगरपालिका स्थापित करने आदि के लिये काफी प्रयत्न किये। ई० सन् 1942 के आन्दोलन मे यहा के कार्यकर्त्ता पकडे जाकर अजमेर जेल मे रखे गये। यहा के प्रमुख कार्यकर्त्ता गोकुललाल असावा, लादूराम व्यास, रमेशचन्द्र, लक्ष्मीदत्त आदि थे। ई० सन् 1947 मे गोकुललाल असावा के प्रधान मन्त्रीत्व मे लोकप्रिय सरकार और विधान निर्मात्री परिषद बनी और उसे सविधान बनाने का पूरा अधिकार दिया गया। इस प्रकार का प्रगतिशील कदम उठाने वाली यही रियासत थी।[169] 1948 मे यह रियासत सयुक्त राजस्थान सघ मे सम्मिलित हो गई।

सिरोही राज्य मे प्रजा मण्डल 1939 मे स्थापित हुआ लेकिन इसका पजीयन 1940 की मई मे हो सका। ई० सन् 1941 मे पुन कुछ गडबडी हुई और सभी मुख्य कार्यकर्त्ता जेल म डाल दिये गये। अगस्त 1942 मे "भारत छोडो" आदोलन के समय यहा तीसरा बडा आदोलन हुआ। यहा के प्रमुख कार्यकर्त्ता गोकुलभाई भट्ट राजपूताना प्रान्तीय काग्रेस कमेटी के प्रथम सभापति थे। भारत के स्वतन्त्र होने पर सिरोही राज्य भारतीय सघ मे शामिल हो गया तथा वहा प्रजा मण्डल के प्रतिनिधि लेकर मन्त्रीमण्डल भी बन गया जिसके मुख्यमन्त्री गोकुलभाई भट्ट थे। कुछ कारणो से सरदार पटल ने

सिरोही का प्रशासन 8 नवम्बर 1948 को भारत सरकार के हाथो मे लेकर 5 जनवरी 1949 को बम्बई सरकार को सुपुर्द कर दिया। जिसके विरोध मे न केवल सिरोही बल्कि राजस्थान मे भी घोर आन्दोलन हुआ। 1956 की नवम्बर 1 से यह क्षेत्र पुन राजस्थान मे सम्मिलित कर दिया गया।[10]

प्रतापगढ राज्य के उदयपुर राज्य के निकट होने के कारण वहा की हलचलो का काफी प्रभाव पडा। यहा के कार्यकर्त्ताओ ने पिछडी जातियो व भीलो को जागृत करने का काफी प्रयास किया। सन् 1936 मे ठक्कर बाप्पा ने हरिजनोत्थान हेतु यहा हरिजन पाठशाला स्थापित की। बाद मे खादी प्रचार सभा, पाठशाला आदि द्वारा यहा जनजागरण हुआ। यहा अमृतलाल पायक ने 1946 मे प्रजा मण्डल की स्थापना की।[11]

डूगरपुर राज्य मे भीलो की आबादी ज्यादा होन तथा उनके अत्यन्त पिछडे होने के कारण सबसे बडी समस्या उनका सामाजिक व आर्थिक उत्थान करना था। अत भोगीलाल पड्या, शोभालाल गुप्ता, माणकलाल वर्मा आदि ने यहाँ भील सेवा सघ स्थापित किया। उसकी ओर से यहा अनेक पाठशालाये खोली गई। इस कारण यहा राजनैतिक जागृति हुई तथा राज्य से भी सघर्ष हुआ। यहा के मुख्य कार्यकर्त्ताओ मे भोगीलाल पड्या, हरदेव जोशी व गौरीशकर उपाध्याय थे। ई० सन् 1944 मे प्रजा मण्डल स्थापित हुआ। उत्तरदायी सरकार की माग करने के कारण प्रजा मण्डल को राज्य सरकार से सघर्ष करना पडा जिसके कारण भोगीलाल पड्या को काफी जुल्म सहने पडे। तब ही एक साथ 35 कार्यकर्त्ता गिरफ्तार किये गये। भारत के स्वतन्त्र होने के बाद यहा भी लोकप्रिय मन्त्री मण्डल बना। मन्त्री मण्डल मे गौरीशकर उपाध्याय व भीखाभाई प्रजा मण्डल के प्रतिनिधि के रूप मे थे। ई० सन् 1948 की 18 अप्रेल को सयुक्त राजस्थान सघ का निर्माण होने पर यह रियासत उसमे सम्मिलित हो गई।[12]

बासवाडा राज्य मे भी भीलो की अधिकता थी। गुजराज व उदयपुर की जन जागृति का यहा पर भी प्रभाव पडा। यहा 1943 मे प्रजा मण्डल की स्थापना हुई। यहा के कार्यकर्त्ताओ—पन्नालाल, भूपेन्द्रनाथ त्रिवेदी, धूलजी भाई भावसार, मणीशकर जानी, ध्यानीलाल चिमनलाल मालोत, नटवरलाल भट्ट, मोहनलाल त्रिवेदी आदि ने भीलो की स्थिति सुधारने के काफी प्रयास किये। भारत के स्वतन्त्र होने पर यहा लोकप्रिय मन्त्री मण्डल बना तब

भूपेन्द्रनाथ त्रिवेदी मुख्यमन्त्री बने। संयुक्त राजस्थान संघ का निर्माण होने पर यह रियासत उसमें मिल गई।[173]

कुशलगढ़ बांसवाड़ा राज्य का ही एक अंग माना जाता था लेकिन यह उपरियासत अंग्रेजी शासनकाल में बना दी गई थी। अप्रेल 1942 में भवरलाल निगम की अध्यक्षता में यहां प्रजा मण्डल की स्थापना हुई जिसने लाग बागों के विरुद्ध आन्दोलन चलाये। भीलों का भी संगठन किया गया। ई० सन् 1948 में यहां गांधी आश्रम की स्थापना की गई।

अजमेर में कांग्रेस संगठन ई० सन् 1938 के झगड़ों के कारण काफी कमजोर हो गया था। इसी वर्ष ब्यावर में एक राजनैतिक सम्मेलन भूलाभाई देसाई के सभापतित्व में हुआ तब यह प्रस्ताव पारित किया गया कि अजमेर मेरवाड़ा को यू०पी० (वर्तमान उत्तरप्रदेश) में मिला दिया जावे ताकि इस जिले को प्रान्तीय स्वशासन आदि के लाभों से वंचित न रहना पड़े। सरकार ने इस प्रस्ताव की कतई परवाह नहीं की। द्वितीय महायुद्ध के समय जब गांधीजी ने व्यक्तिगत सत्याग्रह चलाया तब वहां के प्रमुख कार्यकर्त्ताओं में से कुछ ने इसमें भाग लिया। अगस्त 1942 के 'भारत छोड़ो' आन्दोलन के समय यहां भी काफी सरगर्मियां रहीं। अगस्त 9 को अजमेर, ब्यावर, केकड़ी आदि स्थानों के 37 मुख्य कार्यकर्त्ता गिरफ्तार किये गये। सभी कांग्रेस कमेटियां को अवैध घोषित कर दिया गया। आन्दोलनकारी छात्रों को भी गिरफ्तार किया गया।[174] रमेश व्यास, लेखराज आर्य, शंकरलाल वर्मा, मूलचन्द असावा, गोकुललाल असावा, मुकुटविहारीलाल भार्गव, रामनारायण चौधरी, चन्द्रगुप्त वार्ष्णेय, बालकिशन कौल, ब्रजमोहन शर्मा आदि को गिरफ्तार कर उन्हें सजायें दी गई। ई० सन् 1944 में ज्वालाप्रसाद शर्मा व रघुराजसिंह जेल अधिकारियों की आंखों में धूल झोंक कर जेल से भाग गये। बाद में सन् 1945 तक सभी बन्दी नेता छोड़ दिये गये। भारत के स्वतन्त्र होने पर राजपूताना एजेन्सी समाप्त कर दी गई। अब अजमेर राजस्थान की राजनैतिक गतिविधियों का केन्द्र नहीं रहा। अजमेर में राजस्थान की रियासतों के नेताओं का आये दिन रहने वाला जमघट समाप्त हो गया। ई० सन् 1951 में 'सी' श्रेणी के राज्य बनाने सम्बन्धी अधिनियम के लागू होने पर अजमेर अलग से एक राज्य बन गया तथा यहां विधान सभा भी बना दी गई।

स्वतन्त्रता पश्चात् लोकतान्त्रिक सरकार राजस्थान में बन गई। वह तथा अखिल भारतीय देशी राज्य लोक परिषद की राजपूताना प्रान्तीय सभा

अजमेर को राजस्थान मे मिलाने की माग करने लगी कि 'भौगोलिक, सास्कृतिक व भाषायी दृष्टि से वह राजस्थान का ही एक भाग है। अग्रेजा ने अपनी सुविधा के लिये उसे एक अलग उपप्रात बना रखा था। यह एक अलग छोटा राज्य—केवल 2417 वर्ग मील व सात लाख आबादी वाला—है जो भारत सरकार की राज्य निर्माण नीति के अनुसार अलग स्वतन्त्र राज्य नही बना रह सकता है।' अत जब भारत के राज्यो का पुनगठन हुआ तब अजमेर राज्य को राजस्थान मे मिलाने की सिफारिश की गई।[1,6] ई० सन् 1956 की पहली नवम्बर को अजमेर राजस्थान का एक भाग बन गया और उसमे पूर्ववर्ती किशनगढ रियासत का क्षेत्र मिलाकर एक नया जिला अजमेर बना दिया गया।[1,6]

इस प्रकार राजस्थान निर्माण की जो प्रक्रिया 18 मार्च 1948 को आरम्भ हुई थी वह 1 नवम्बर 1956 को पूण हुई। राजस्थान म राजाशाही का अन्तिम चिह्न राजप्रमुख का पद भी समाप्त कर दिया गया। अब राजप्रमुख के स्थान पर राज्यपाल राज्य का प्रमुख होने लगा।

यह स्पष्ट है कि राजस्थान की जनता को स्वतन्त्रता प्राप्ति हेतु काफी सघप करने पडे। अग्रेजी प्रान्तो मे वहा की जनता को केवल अग्रेजी सरकार से सघप करना पडा लेकिन यहा अग्रेजी सरकार के अलावा, निरकुश राजाओ व प्रतिक्रियावादी सामन्तो से भी लोहा लेना पडा। इन सघर्षो मे पचासो वीरगति को प्राप्त हुए, सैकडो को जेल जाना पडा और हजारो को पुलिस की लाठियो के प्रहार झेलने पडे। जागीरी गावो मे हजारो किसानो को अपने मूल अधिकारो के लिए मार खानी पडी, सैकडो को खेतो से बेदखल होना पडा तथा उपज का 90 प्रतिशत तक अनाज लगान व लाग बागो मे देकर व बेगारें निकालकर दयनीय अवस्था मे रहते बराबर सघप करना पडा। अन्त मे वे सफल हुए व जागीरदारी प्रथा समाप्त होकर रही।

प्रत्येक रियासत मे ये सघर्ष अलग-अलग कारणो व अलग-अलग कालो मे हुए। प्रत्येक राज्य के अलग अलग नेता थे। अत यहा कोई एक केन्द्रीय सगठन नही बन सका ताकि इन पर नियत्रण रख सके तथा आवश्यकतानुसार सहायता व सलाह दे सके। इस कारण यहा व्यक्तिवाद ज्यादा ही पनपा और नेताओ मे भी पारस्परिक सघप हुए। जमनालाल बजाज, विजयसिह पथिक, रामनारायण चौधरी व अर्जुनलाल सेठी के बीच द्वितीय महायुद्ध के पहले तथा उत्तर-स्वतन्त्रता काल मे हीरालाल शास्त्री, जयनारायण व्यास,

माणकलाल वर्मा व गोकुलभाई भट्ट के बीच सघप इसके उदाहरण ह। इन नेताओ के सघर्षो के कारण प्रान्त का अहित ही हुआ।

राजस्थान के निर्माण के बाद स्वतन्त्रता आन्दोलन के नेता राज्य के अत्यन्त महत्वपूर्ण व्यक्ति बन गये। कई मत्री पद पा गये तो कई विधायक बन गये। कई बडे पूजीपति बन गये तो कई उद्योगपति। राजाशाही की समाप्ति के बाद सामन्तशाही का अन्त हो गया लेकिन कई नये बडे भूमिपति हो गये जो काश्त न करते भी बडे काश्तकार बन गये और वास्तविक काश्तकारो का शोषण करने लगे। जनता को काफी सीमा तक सामाजिक व आर्थिक मूल अधिकारो की प्राप्ति हुई है लेकिन फिर भी बहुसख्यक ग्रामीणो का अभी भी सामाजिक व आर्थिक शोषण हो रहा है। अत सामाजिक व आर्थिक सघप अभी तक समाप्त नही हुआ है।

टिप्पणिया—

1 ए बी कीथ, स्पीचज एण्ड डाक्यूमेन्टस आन इण्डियन कास्टीटयूसन (1921 47), भाग 1, पृ 320
2 (अ) पी मुखर्जी, इण्डियन कास्टीटयूम्नल डाक्यूमेन्ट्स, 123
(ब) आर सी मजूमदार, ब्रिटिश परामाउण्टेसी एण्ड इण्डियन रिनासा, भाग 1, 745
3 रमेश दत्त, द इकानोमिक हिस्ट्री आफ इण्डिया इन द विक्टोरियन ऐज, 232 35
4 (अ) फतहसिंह चापावत, ए ब्रीफ हिस्ट्री आफ जयपुर, 184
(ब) एचीसन, टिटीज, एगेजमेन्टस एण्ड सनद्स, भाग 3 103 4
5 थामसन एण्ड सरट राइज एण्ड फुलफिलमेण्ट आफ ब्रिटिश रूल इन इण्डिया 469-70
6 पैण्ड्रल मून, स्ट्रेंजर इन इण्डिया, 631
7 एलेक्जेण्डर केम्पबेल इट इज योर एम्पायर 173
8 डोडवल, केम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इण्डिया, जिल्द 6, 492
9 वाइट पपर आन इण्डियन स्टेटस 22
10 के आर शास्त्री, इण्डियन स्टटस, 81
11 ए सी बनर्जी, इण्डियन कास्टीटयूसनल डाक्यूमेन्ट्स, जिल्द 2, 37 (भूमिका)
12 सरिग, हिस्ट्री आफ मेयो कालेज, जिल्द 1 10 12
13 (अ) डिस्पेच स 89 दिनाक 3 जून, 1875
(ब) आर सी मजूमदार, वही पृ 966
14 ए सी बनर्जी, वही पृ 35 (भूमिका)
15 (अ) डोडवल वही 498
(ब) राजपूताना एजेसी रिपोट 1867-68, पृ 98

16 फारेन एण्ड पालीटीकल फाइल, दिसम्बर 1870, न 425 6
17 आर सी मजूमदार, वही, 964
18 वही, 964
19 जगदीशसिंह गहलोत, जोधपुर राज्य का इतिहास (हस्तलिखित), पृ 208
20 (अ) टी रेले, लार्ड कर्जन इन इण्डिया, 236
(ब) वी वी कुलकर्णी, द फ्यूचर आफ इण्डियन स्टट्स, 17
21 आर सी मजूमदार, वही, 970
22 विजयसिंह पथिक, डायरी (अप्रकाशित)
23 एचीसन, वही, पृ 74-78 तथा 147-151
24 वही, 4-7
25 वही, 108 110
26 वही, 7 4
27 जगदीशसिंह गहलोत, वही, 209
28 एचीसन, वही, 224
29 वही, 270-272
30 हरविलास शारदा, शकर एण्ड दयानन्द, 122
31 ताराचद, भारतीय स्वतत्रता आन्दोलन का इतिहास, भाग 2, पृ 455-57
32 बी पट्टाभि सीतारमय्या, काग्रेस का इतिहास, भाग 1, 8
33 वेडरबन बायोग्राफीकल स्केच आफ ह्यूम, 53
34 आर सी मजूमदार, वही, भाग 2, पृ 538
35 पी एन माथुर, प्रासीडिंग्स आफ राजस्थान हिस्ट्री काग्रेस, 1969, पृ 160
36 आर सी मजूमदार, वही, भाग 2 586
37 वही 407 8
38 बी पट्टाभि सीतारमय्या वही, 68 73
39 (अ) लाल बहादुर, मुस्लिम लीग, 43
(ब) राम गोपाल, इण्डियन मुस्लिम्स पालिटिकल हिस्ट्री, 83-84
40 मोहनदास करमचद गाधी, हिन्द स्वराज्य, 15-18
41 आर सी मजूमदार, स्ट्रगल फार फ्रीडम, 2
42 विजयसिंह पथिक की डायरी (अप्रकाशित)
43 पाटलीपुत्र दैनिक, दिनाक 4 जुलाई, 1914 पृ 6
44 एम के गाधी, एन ऑटोग्राफी, 547
45 इण्डियन एन्युल रजिस्टर 1919 भाग 2, पृ 14
46 बटलर कमेटी रिपोर्ट का साराश
47 बीकानेर स्टेट एडमिनिस्ट्रेटिव रिपोर्ट, 1913-14, पृ 34-39
48 पृथ्वीसिंह मेहता, हमारा राजस्थान, 323
49 वही, 332

50 माणक्लाल वर्मा मेवाड का वतमान शासन 28
51 (अ) नवीन राजस्थान, अजमेर 9 जुलाई 1922
(ब) पृथ्वीसिंह महता वही 360
52 पृथ्वीसिंह महता वही, 344
53 वही 341
54 राजपूताना मध्यभारत सभा का वार्षिक विवरण, 1924 पृ 1
55 पृथ्वीसिंह मेहता वही 347
56 पायानियर दनिक 30 दिसम्बर 1920
57 टाइम्स ग्राफ इण्डिया 30 दिसम्बर 1920
58 रामनारायण चाधरी, बीसवा सदी का राजस्थान 42, 67 तथा 86
59 ग्रार सी मजूमदार, स्टगल फार फ्रीडम 350 51
60 रिपोट ग्राफ द इण्डियन स्टटम पीपल्स कान्फ्रेंस, 1927, पृ 1
61 मित्रा, द इण्डियन क्वाटरली रजिस्टर, जुलाई स दिसम्बर, 1924, पृ 494 98
62 रिपाट ग्राफ द इण्डियन स्टट्स पीपल्स का फ्रेंस, 8
63 इण्डियन रिव्यू, जनवरी, 1921 पृ 59 तथा ग्रप्रेल 1921, पृ 267
64 वही
65 बाम्बे क्रानाक्ल 25 माच, 1931
66 जगदीशसिंह गहलात टाक राज्य का इतिहास (ग्रप्रकाशित) पृ 46
67 बी पट्टाभीसीतारमय्या, पृ 222
68 सारगधर दास बीकानर का राजनतिक इतिहास 113
69 पृथ्वीसिंह मेहता, वही 318
70 वही 320
71 महात्मा गाधी, द मन एण्ड हिज मिशन, 82 85
72 ए काथिल द लास्ट डामीनियन 271 व 276
73 ग्रार सी मजूमदार स्ट्रगल फार फ्रीडम, 413
74 रामनारायण चौधरी वही 86
75 वही 58
76 जयनारायण व्यास मारवाड म जागृति ग्रौर उस रोकन के उद्याग 5 8
77 मोतीलाल तेजावत की ग्रात्म कथा (ग्रप्रकाशित)
78 तरुण राजस्थान, 16 मई, 1926, पृ 4
79 जी ग्रार ग्रभ्यकर प्राबलम्स ग्राफ इण्डियन स्टटस, 9-11
80 रामनारायण चौधरी वही, 85
81 माभाग माथुर, स्ट्रगल फार रस्पोंसीबल गवर्मेंट इन मारवाड 23 24
82 रामनारायण चौधरी वही 95 96
83 पेमाराम, एग्रेरियन मूवमेंट इन राजस्थान पृ 150 51

84 (ग्र) किशनपुरी, मेमायर्स ग्राफ द मारवाड पुलिस, 125
(ब) द प्रिस्ली इण्डिया 19 ग्रक्टूबर, 1928
85 जगदीशसिंह गहलात कच्छवाहो का इतिहास 173
86 रामनारायण चौधरी वही 102
87 शकर सहाय सक्सेना, जा देश के लिए जिए, 53
88 (ग्र) यग राजस्थान, सितम्बर ग्रक्टूबर 1929
(ब) द हिन्दुस्तान टाइम्स 4 ग्रक्टूबर 1929
89 पृथ्वीसिंह मेहता, वही पृ 381
90 वही पृ 376 385
91 ग्रार सी मजूमदार स्ट्रगल फार फ्रीडम 804
92 वाइट पेपर ग्रान इण्डियन स्टेट्स, 20
93 जगदीशसिंह गहलात भारत के देशी राज्य 47
94 वही 48
95 एस एस ग्रय्यर, इण्डियन कास्टीटयूस्नल रिफोर्म्स 210
96 जी ग्रार ग्रभ्यकर वही, 273
97 ग्रार सी मजूमदार, स्ट्रगल फोर फ्रीडम 454
98 रिपोट ग्राफ द इण्डियन स्टेटस कमेटी 1928-29 परिशिष्ट ॥
99 वही
100 इण्डियन एंयुग्रल रजिस्टर 1921, भाग 2 98-102
101 ग्रार सी मजूमदार स्ट्रगल फोर फ्रीडम 472 4
102 वही, 477
103 वही 481
104 वही, 482 4
105 वही 488
106 वही, 492 3
107 बी ग्रार ग्रम्बडकर वाट काग्रेस एण्ट गाधी हव डन टू द ग्रनटचेबल्स, 126 30
108 ताराचद, वही, 177 8
109 वही, 197
110 ग्रार सी मजूमदार स्ट्रगल फार फ्रीडम 617
111 बी पट्टाभिसीतारामय्या वही पृ 364
112 हिन्दुस्तान टाइम्स, 14 नवम्बर 1931
113 पृथ्वीसिंह मेहता, वही 410
114 राजस्थान राज्य ग्रभिलेखागार बीकानेर, फाइल स 7/1934 तथा 105/1934
115 जहूरखाँ मेहर, राजस्थान म ग्राजादी री ग्रादोलन, पृ 32

116 महाराजा गगासिह का सर डानाल्ड फील्ड का पत्र, रा सा म 201, प्रा से 54/37 दि 21 फरवरी 1937
117 मोभाग माथुर वही 39 व 59
118 पूर्णिमा नवीन लाल, राजस्थान मनुशीलन, 218
119 वही 217
120 धमाराम वही 162
121 जहूरर्खां मेहर वही, 35-36
122 पूर्णिमा नवीनलाल, वही 216-217
123 वही, 226
124 वही
125 बी एन पानगडिया, राजस्थान म स्वतन्त्रता सग्राम, 47
126 जगदीशसिह भारत के देशी राज्य, 57
127 बी पट्टाभि सीतारामय्या, वही, भाग 2 147
128 (म्र) वी पी मेनन, ट्रासफर ग्रॉफ पावर, 126
(ब) ए के मजूमदार, एडवेन्ट ग्राफ फ्रीडम, 172
129 ए सी चटर्जी, इण्डियाज स्ट्रगल फोर फ्रीडम 38
130 बी पट्टाभि सीतारमैय्या वही, भाग 2 376
131 म्रार सी मजूमदार, स्ट्रगल फोर फ्रीडम 718
132 बी पट्टाभि सीतारमैय्या, वही भाग 1
133 वही, भाग 2, 80
134 वही, पृ 80
135 सुखवीरसिह गहलोत, राजस्थान का सक्षिप्त इतिहास, पृ 248
136, पूर्णिमा नवीनलाल, वही 147 48
137 जहूरखा मेहर, वही 43
138 वही, 44
139 वही
140 वही
141 (म्र) म्राकारसिंह, महाराजा, 29 30
(ब) पानगडिया, वही, 77 78
142 पूर्णिमा नवीनलाल, वही 225
143 वही
144 जगदीशसिह गहलोत, जोधपुर राज्य का इतिहास (म्रप्रकाशित) 301
145 वही, 307
146 वही, 309
147 वही 309
148 वही 309

149 पूर्णिमा नवीनलाल वही, 225
150 सुखवीरसिंह गहलात, वही, 248
151 पूर्णिमा नवीनलाल, वही, 226
152 बी एल पागडिया वही पृ 85
153 वही 65 66
154 वही, 63 66
155 वही 61 63
156 वही, 74
157 वही, 76
158 पूर्णिमा नवीनलाल वही, 220
159 वही
160 बी एल पागडिया, वही 95
161 डी डी गोड कस्टीटयुशन डवलपमण्ट ऑफ ईस्टन [illegible]
162 बी एल पानगडिया, वही, 55
163 वही, 40 41
164 वही 88
165 बी एल पानगडिया 67
166 बी एल पानगडिया वही, 39 व 55
167 वही, 56
168 जगदीशसिंह गहलोत, टाक राज्य [illegible]
169 बी एल पानगडिया, वही, 95
170 जहूरखा मेहर आजादी रा [illegible]
171 पूर्णिमा नवीनलाल, [illegible]
172 जहूरखां मेहर, वही, 67
173 वही 67 68
174 गाविन्द सहाय, 1942 [illegible]
175 रिपाट ऑफ द [illegible]
176 अजमेर गजेटियर [illegible]

किसान आन्दोलन

राजस्थान मे राजनैतिक चेतना एव स्वाधीनता सग्राम की पृष्ठभूमि का निर्माण रियासतो के किसान वर्ग के आन्दोलनो ने किया। सामन्तवादी व्यवस्था मे जागीरदार और किसानो के हितो मे अन्तर्विरोध पाया जाता है। इस अन्तर्विरोध की प्रथम सशक्त अभिव्यक्ति मेवाड के बिजोलिया किसान आन्दोलन मे हुई। अत बिजोलिया आन्दोलन के गर्भ से भावी राजस्थान की राजनैतिक चेतना ने जन्म लिया।[1]

किसान वर्ग के आन्दोलनो को इस बात का श्रेय है कि उन्होने सर्वप्रथम राजस्थान मे राजनैतिक-सामाजिक चेतना का सूत्रपात किया, राष्ट्रीय आन्दोलन के भावी नेतृत्व का निर्माण किया और रियासतो मे उत्तरदायी शासन की स्थापना के लिए सघर्ष करने वाले प्रजामण्डलो के सगठन मे मूल प्रेरक तत्व की भूमिका प्रस्तुत की।

सामन्तवादी व्यवस्था के प्रतिमान

स्वतन्त्रता से पूर्व राजस्थान मे निम्नलिखित बडी छोटी कुल 22 रियासते थी[2] अलवर, भरतपुर, धौलपुर, करौली, बासवाडा, बूदी, डूगरपुर, झालावाड, किशनगढ, कोटा, मेवाड, प्रतापगढ, शाहपुरा, टोक, जयपुर, जैसलमेर, बीकानेर, जोधपुर, सिरोही, और लावा, कुशलगढ नीमराना।

रियासतो एव उनके अधीनस्थ ठिकानो (जागीर क्षेत्र) मे सामन्तवादी व्यवस्था के प्रतिमान प्रचलित थे। इसके अन्तर्गत नरेश रियासत का सम्प्रभु शासक होता था।[3] उसके अधीन अनेक सामन्त जागीरदार होते थे। जागीरदार अपनी जागीर के अर्धस्वतन्त्र शासक होते थे। उन्हे अपने राज्य के स्वामी को रेख (जागीर के कुल राजस्व का वार्षिक कर), चाकरी (घुडसवार, ऊँट सवार और पैदल सैनिक नरेश की सेवा मे प्रस्तुत करना), हुक्मनामा अथवा तलवार बधाई (उत्तराधिकार कर), नजर नजराना और छटूद

(मेवाड मे प्रचलित चाकरी कर) देना पडता था, यद्यपि इनकी मात्रा और राशि प्रत्येक रियासत मे भिन्न भिन्न थी।[4]

प्रत्येक रियासत मे भूमि का बन्दोबस्त दो प्रकार का था। एक खालसा भूमि, जिस पर शासक का प्रत्यक्ष नियन्त्रण होता था और दूसरा जागीर क्षेत्र जिस पर जागीरदार का प्रत्यक्ष प्रशासन होता था। जागीरदार अपने ठिकाने मे सर्वोच्च शक्ति होने के कारण कार्यपालिका (प्रशासनिक एव पुलिस शक्तिया) एव न्यायपालिका की शक्तियो का उपभोग प्रयोग करते थे।

जागीर और रियासत की आय की वृद्धि के लिए भू-राजस्व (भूमि का लगान) के अलावा अनेक प्रकार की लाग बेगार (उपकर एव बलात् श्रम) किसानो से जबरन वसूल की जाती थी। 1941 मे जोधपुर राज्य द्वारा गैर कानूनी लाग-बाग की जाच के लिये गठित जाच समिति के सामने मारवाड किसान सभा ने जोधपुर के प्रधानमत्री को 136 अवैध लाग बागो की सूची दी थी। जयपुर रियासत मे जब शेखावटी के ठाकुर ने मोटरकार खरीदी तो प्रजा पर एक नई मोटर लाग थोप दी गई, जबकि वे पहले से ही 30 से ज्यादा लागें दे रहे थे। 1922 मे किसान पचायत बिजोलिया ने ए०जी०जी० हालैंड को 74 लाग बागो की सूची दी थी। बीकानेर राज्य के जागीरदारो ने 1940 मे 37 लागो मे से 29 को समाप्त करने का प्रस्ताव किया था। जोधपुर रियासत के बिलाडा परगना मे विभिन्न प्रकार की 142 लाग बागे किसानो से वसूल की जाती थी।[5]

सामतवादी व्यवस्था मे खालसा और जागीर दोनो मे ही बेगार प्रथा प्रचलित थी। विभिन्न जातियो को बेगार देनी पडती थी। जैसे—चमार-भावी (गाव के जागीर कर्मचारियो का अवैतनिक सेवक बन्धुआ मजदूर के समान), कुम्हार (मिट्टी के बरतन, खपरैल और पानी की आपूर्ति करना), नाई (मुफ्त मे हजामत बनाना, कपडे धोना, बतन माजना, झाडू देना, स्नान कराना तथा मालिश करना), माली (फल फूल सब्जी आदि मुफ्त मे देना), बढई (ठिकाने के फरनीचर की मरम्मत करना), सरगरा (सरकारी घोडो की सेवा और आसामियो को बुलाने की बेगार देना), ढोली (जागीरदार की सवारी के पीछे गाते हुए चलना), भील (पत्रवाहक का कार्य करना), महाजन (रियासत अथवा जागीर के कर्मचारियो की यात्रा के समय चारपाई, बिस्तर, बर्तन और भोजन सामग्री की व्यवस्था मुफ्त मे करना) और साधारण कृषको को तो सबसे अधिक बेगार देनी पडती थी।[6]

किसानो को रियासत और जागीर दोना के घोडो के लिए मुफ्त मे हरी घास और जौ की आपूर्ति करनी पडती थी। जागीर परिवार मे निवाह, मृत्यु-भोज के अवसर पर मुफ्त मे घी, दूध, दही देना पडता था। शासक या जागीरदार की यात्रा के समय मुफ्त मे बैलगाडी अथवा ऊँट की व्यवस्था करना और ठाकुर की भूमि पर मुफ्त मे खेती करनी पडती थी। जब ठिकाने के कर्मचारी गाव मे आते तो उनके लिए भोजन और आवास की व्यवस्था नि शुल्क करनी पडती थी।[7]

लाग-बागो के अतिरिक्त जागीरदार रेख, तलवार-बधाई, छटूद और नजराने की राशि भी किसानो से बलात् वसूल करते थे। किसान लाटा किए बिना फसल मे से अनाज की एक सिट्टी (बाली) भी नही तोड सकता था। इस सन्दर्भ मे किसानो के घरो और औरतो की तलाशी लेकर उन्हे अपमानित किया जाता था। अनेक ठिकानो मे किसानो की बहू बेटियो का जागीरदार अथवा उनके कर्मचारी शील भग करते थे।[8]

इस प्रकार सामन्तवादी व्यवस्था मे अवैध लाग-बागें किसाना के आर्थिक एव सामाजिक शोषण के साधन होते थे, जिनके परिणामस्वरूप किसान के पास दोनो समय पेट भर खाने को भी नही बचता था। किसानो के शोषण और उत्पीडन के चरमोत्कर्ष की अभिव्यक्ति 1942 मे राजपूत सभा जोधपुर मे पारित उस सकल्प से होती है जिसमे कहा गया कि किसी भी किसान को अन्य जागीर मे बसने की स्वीकृत नही दी जाएगी।[9]

सामन्तवादी व्यवस्था मे किसानो के आर्थिक-सामाजिक शोषण एव उत्पीडन की पृष्ठभूमि ने राजस्थान मे किसान आन्दोलन एव राजनीतिक चेतना का सूत्रपात किया और किसान आन्दोलन के जनक विजयसिंह पथिक इतिहास के अमर हस्ताक्षर बन गए।

मेवाड मे किसान आन्दोलन

भारत मे सर्वप्रथम अहिंसात्मक नीति पर आधारित सामन्तवाद के विरुद्ध किसानो का सगठित आन्दोलन मेवाड के बिजोलिया ठिकाने मे प्रारम्भ होता है। बिजोलिया को ऊपरमाल भी कहते है। यह मेवाड के प्रथम श्रेणी के 19 ठिकानो मे से एक था, जिसमे 96 गाव थे। अधिक भू लगान, लागत तथा बेगारो को जबरन लेना और जागीरदार के अत्याचार बिजोलिया ठिकाने मे किसान आन्दोलन प्रारम्भ होने के प्रमुख कारण थे। ठिकाना छटून्द कर के

वार्षिक 4500 रुपये और तलवार-बधाई लाग के प्रजा से 60 हजार रुपये तक वसूल करता था, जबकि महाराणा मेवाड को केवल 40 हजार रुपये देने पडते थे। बिजोलिया किसानो ने ए० जी० जी० सर रॉबर्ट हालैंड को जून 1922 मे 74 लाग बागो की सूची दी थी।[10]

आंदोलन का सूत्रपात प्रथम चरण (1897–1916)

सामन्तवादी शोषण के विरुद्ध बिजोलिया किसानो के प्रथम विरोध की अभिव्यक्ति 1897 मे धाकड जाति के एक किसान के मृत्युभोज के अवसर पर हुई।[11] राव कृष्णसिंह ने 1903 मे एक नई लाग चवरी कर (पुत्री के विवाह पर 13 रुपये ठिकाने को लागत देना) लगाया। इसके विरोध मे किसानो ने दो वर्षो तक अपनी पुत्रियो के विवाह नही किए। राव द्वारा चवरी लाग समाप्त नही करने पर 1905 मे किसानो ने ठिकाने की जमीन पडत रख दी और बिजोलिया छोडकर ग्वालियर राज्य की सीमा मे चले गए।[12]

राव पृथ्वीसिंह ने 1913 मे तलवार-बधाई की लागत प्रजा पर थोप दी। किसानो ने साधु सीतारामदास, फतहकरण चारण और ब्रह्मदेव के नेतृत्व मे राव की कार्यवाही का विरोध किया। परन्तु सुदृढ सगठन और योग्य नेतृत्व के अभाव मे बिजोलिया के किसानो का प्रतिरोध असफल रहा।[13]

आन्दोलन का द्वितीय-चरण (1916–1929) विजयसिंह पथिक युग

इस कालखण्ड मे भाग्यवश बिजोलिया के किसानो को विजयसिंह पथिक के रूप मे एक महान् क्रान्तिकारी, प्रतिभासम्पन्न, विलक्षण सगठनकर्ता, राजनीति मे निपुण नेता मिल गया, जिसकी वाणी और लेखनी मे ओजस्विता थी। उन्होने किसानो का एक शक्तिशाली सगठन ही खडा नही किया, बल्कि लोकनायक माणिक्यलाल वर्मा तथा साधु सीतारामदास जैसे सक्रिय कार्यकर्ता और प्रभावशाली सहायक तैयार किए, जो किसानो को स्थानीय नेतृत्व प्रदान कर सके। उनके द्वारा स्थापित किसानो के सगठन "उपरमाल पच बोर्ड" ने बिजोलिया किसान आन्दोलन का नेतृत्व किया और मार्ग-दर्शन पथिकजी ने दिया।

असहयोग आंदोलन का प्रारम्भ

पथिकजी के परामर्श से गावो के किसानो ने प्रथम महायुद्ध का चन्दा, ऋण तथा लाग-बेगार देने से इन्कार कर दिया। बिजोलिया किसान आन्दोलन की ओर देश का ध्यान आकर्षित करने के लिए 'प्रताप' (कानपुर) के यशस्वी सम्पादक गणेशशकर विद्यार्थी ने 'प्रताप' के पृष्ठ आन्दोलन के लिए खोल दिये।

लोकमान्य तिलक ने अपने पत्र 'मराठा' में आन्दोलन के समर्थन में सम्पादकीय लेख लिखे।[14]

ठिकाने ने अपना दमन-चक्र चलाते हुए लाग-बेगार जबरन लेना शुरु किया और पथिकजी साधु सीतारामदास, माणिक्यलाल वर्मा, प्रेमचन्द भील और गणपतिलाल माथुर पर राजद्रोह के अपराध में गिरफ्तारी वारंट निकाला। भूमिगत होने के कारण पथिकजी पकड़े न जा सके। लागतें तथा बेगार न देने के अपराध में ठिकाने ने 51 व्यक्तियों को गिरफ्तार कर लिया।[15] बिजोलिया किसान आन्दोलन की यह प्रथम सामूहिक गिरफ्तारी थी। वर्माजी और साधुजी को बन्दी बनाकर उनके पांवों में बेड़ियां डाल दी गई।

जांच आयोग

बिजोलिया आन्दोलन को राष्ट्रव्यापी सहानुभूति मिलने और आन्दोलन की व्यापकता के कारण महाराणा मेवाड़ ने दो जांच आयोग (प्रथम, अप्रेल 1919 में, और द्वितीय, फरवरी 1920) नियुक्त किए, परन्तु रियासत और ठिकाने के असहयोग के कारण किसानों के कष्टों का अन्त नहीं हुआ।[16]

पुनः आन्दोलन

द्वितीय जांच आयोग का भी कोई परिणाम नहीं निकलने से बिजोलिया पंच बोर्ड ने पुनः असहयोग आन्दोलन प्रारम्भ कर दिया और गांव गांव में ऊपरमाल पंच बोर्ड की समानान्तर सरकार स्थापित कर दी। उस समय पथिकजी वधाणा गांव (ग्वालियर राज्य) से आन्दोलन का मार्ग-दर्शन कर रहे थे। उनके निर्देश से किसान पंचायत ने ऊपरमाल की समस्त भूमि को पड़त रख दिया और किसान बिजोलिया ठिकाना छोड़कर सीमावर्ती राज्यों में खेती करने चले गये।[17] पथिकजी ने गांधी मार्ग हिजरत का प्रथम परीक्षण बिजोलिया में किया। वस्तुतः इस आन्दोलन ने ठिकाने की सत्ता और प्रतिष्ठान को गम्भीर नुकसान पहुंचाया।

दिसम्बर 1920 में पथिकजी ने राजस्थान सेवा संघ (वर्धा) के मंत्री रामनारायण चौधरी को किसान आन्दोलन का मार्गदर्शन करने के लिए बिजोलिया भेजा।[18] पथिकजी पर मेवाड़ राज्य में प्रवेश पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया था।[19]

ए०जी०जी० द्वारा मध्यस्थता, 1922

अब बिजोलिया आन्दोलन का प्रभाव मेवाड़ के अन्य ठिकानों पर भी पड़ने लगा था। भारत सरकार को इसमें अंग्रेज सत्ता विरोधी चिंगारी

दिखाई देने लगी। अत राजपूताने के ए०जी०जी० सर रॉबर्ट हालैंड के नेतृत्व मे एक उच्च सत्ता सम्पन्न शिष्ट-मंडल भेजा गया। इस बार किसानो का प्रतिनिधित्व राजस्थान सेवा सघ की ओर से रामनारायण चौधरी ने किया और किसान पचायत की ओर से वर्माजी आदि ने भाग लिया।[20]

ए०जी०जी० हालैंड के प्रयत्नो से ठिकाने और किसानो के बीच सम्मानपूर्वक समझौता हो गया। 35 लागते बेगार समाप्त कर दी गई। किसानो पर चलाए गए मुकदमे उठा लिये गये। तीन साल की अवधि मे जागीर का बन्दोबस्त (सैटलमैंट) करने का आश्वासन दे दिया गया।[21] बिजोलिया किसान आन्दोलन की यह गौरवशाली विजय थी।

मालभूमि का समर्पण

भूमि बन्दोबस्त मे ऊँची लगान दर रखने के विरोध मे पथिकजी के परामर्श से किसानो ने 20 मई, 1927 को ठिकाने को अपनी मालभूमि समर्पित (सरेंडर) कर दी। यह महान् भूल थी। किसानो द्वारा अपनी जमीनो से इस्तीफे देने के प्रश्न पर पथिकजी और वर्माजी मे मतभेद हो गये। अत पथिकजी ने 1929 मे किसान पचायत के नेतृत्व से त्यागपत्र दे दिया।[22]

आन्दोलन का तृतीय चरण (1929–1941)

हरिभाऊ उपाध्याय का नेतृत्व

माणिक्यलाल वर्मा के अनुरोध पर बिजोलिया किसान आन्दोलन का नेतृत्व सेठ जमनालाल बजाज और हरिभाऊ उपाध्याय ने किया। आन्दोलन का मुख्य लक्ष्य समर्पित मालभूमि को पुन प्राप्त करना था। काफी प्रयत्नो और 1931 के किसान सत्याग्रह के बाद, अन्त मे सेठ जमनालाल बजाज और मेवाड के नये प्रधानमन्त्री टी० विजयराघवाचार्य के सहयोग से पुराने खातेदारो को अपनी मालभूमि पुन प्राप्त हो सकी।[23] इस प्रकार एक दीर्घकालीन सघर्ष (1897–1940) के बाद 1941 मे बिजोलिया किसान आन्दोलन का पटाक्षेप हुआ।

मूल्याकन

बिजोलिया किसान आन्दोलन राजस्थान मे किसानो का प्रथम दीर्घकालीन अहिंसात्मक, अग्रणी असहयोग आन्दोलन था। इसके परिणाम बहुत दूरगामी हुए। इसने मेवाड के अन्य ठिकानो मे भी किसानो को सामन्तवादी व्यवस्था के शोषण के समक्षों के विरुद्ध सगठित प्रतिरोध एव असहयोग आन्दोलन करने

किसान वर्ग के आन्दोलनो के कारणो तथा घटनाओ का पृथक् पृथक् विवेचन नही करके केवल नेतृत्व वर्ग का उल्लेख किया गया है।

सिरोही राज्य मे किसान आन्दोलन

मेवाड से मोतीलाल तेजावत जनवरी, 1922 मे सिरोही आए। सिरोही राज्य मे किसान-आन्दोलन दो चरणो मे हुआ। प्रथम चरण में, मोतीलाल तेजावत ने भील और गरासियो मे एकी की व्यवस्था (बन्धुत्व एव सगठन की भावना) स्थापित की। उसने भीलो को राज्य को भू लगान लाग बेगार देने से मना कर दिया। 6 मई, 1922 को राज्य ने दमन चक्र चलाया। भीलो के 640 घर जला दिए गए, 29 भील मारे गए और 80 हजार की सम्पत्ति नष्ट कर दी गई।[26] भीलो गरासियो की अनेक मागे मान लेने के कारण यह आन्दोलन 1928 मे समाप्त हो गया। 1929 मे महात्मा गाधी की सलाह पर तेजावत ने अपने आपको ईडर पुलिस के सुपुर्द कर दिया।[27]

दूसरे चरण मे, गोकुल भाई भट्ट ने प्रजामडल के नेतृत्व मे किसान आन्दोलन का सचालन किया। राज्य ने किसान जाच समिति की स्थापना की। उसके सुभावो के अनुसार जुलाई 1941 मे बेगार प्रथा समाप्त कर दी गई। किसानो को कुछ रियायते दी गई परन्तु जागीर क्षेत्रो मे किसानो का शोषण न्यूनाधिक रूप से होता रहा।[28]

बूदी मे किसान आन्दोलन

बिजोलिया और बेगू के किसान आन्दोलन से प्रेरित होकर बूदी के किसानो ने निम्नलिखित कारणो से बूदी के सामन्तवादी प्रशासन के विरुद्ध आन्दोलन प्रारम्भ किया

(क) बूदी का प्रशासन भ्रष्ट एव अकुशल था, जिसके कारण चोर-डाकुओ से किसानो के जीवन एव सम्पत्ति को खतरा बना रहता था।

(ख) भू-राजस्व के अतिरिक्त लगभग 25 प्रकार की लागते (उपकर) एव अनेक प्रकार की बेगार किसानो को देनी पडती थी।

(ग) दबाव के कारण राजकीय अधिकारियो को कृषि उत्पादन नि शुल्क देना पडता था, और

(घ) युद्ध कोष के लिए किसानो से जबरन वसूली।[29]

राजस्थान सेवा सघ के मार्गदर्शन मे बरड के किसानो ने सर्वप्रथम अप्रेल, 1922 मे आन्दोलन प्रारम्भ किया। 1 मई 1922 को बूदी नरेश ने

की प्रेरणा और तकनीक प्रदान की। परिणामस्वरूप पहले बेगू, बस्सी, भसरोडगढ, धागडमऊ, नीमली, पारसोली, अमरगढ और भींडर मे तथा बाद मे सम्पूर्ण मेवाड मे किसान आन्दोलन प्रारम्भ हो गए। बेगू मे विजयसिंह पथिक को 10 सितम्बर 1923 को राजद्रोह के आरोप मे गिरफ्तार किया गया। उन्हे 27 अप्रेल, 1927 को रिहा किया गया।

बिजोलिया किसान आन्दोलन और महात्मा गाधी द्वारा सचालित असहयोग आन्दोलन (1920–22) के प्रभाव के कारण राजस्थान की समस्त रियासतो मे भी किसान वर्ग के आन्दोलन प्रारम्भ हो गए।

भील गरासियों मे आन्दोलन

डूगरपुर, वासबाडा, दक्षिण मेवाड, सिरोही, ईडर, गुजरात और मालवा के बीच के तमाम पहाडी प्रदेश मे मुख्यत आबादी भील, मीणो और गरासियो की है। भीलो का नेतृत्व गोविन्द गुरु (1858–1920) ने किया। उन्होने भीलो मे सगठन और समाज सुधार के लिए सम्पसभा की स्थापना की। गोविन्द गुरु के प्रयत्नो से भीलो ने राज्य को लाग बेगार देना बन्द कर दिया। अन्त मे मानगढ की पहाडी (गुजरात) के वार्षिक मेले पर 7 दिसम्बर 1908 को भीलो के विरुद्ध सैनिक कार्यवाही की गई। इस भीषण नरसहार मे 1500 भील मारे गए तथा गोविन्द गुरु को बन्दी बना लिया गया।[24]

गुरु गोविन्द के बाद भीलो को सगठित करने का काय मोतीलाल तेजावत (1886–1963) ने किया। इसी उद्देश्य से उन्होने 1921 मे झाडोल ठिकाने (मेवाड) की नौकरी छोडी। तेजावत ने वेठ बेगार और लाग बाग समाप्त करने सम्बन्धी मागो को लेकर आस पास की रियासतो के भीलो का एक विशाल सम्मेलन नीमडा गाव (विजयनगर राज्य) मे आयोजित किया। सम्मेलन के विरुद्ध सैनिक कार्यवाही की गई। इस नरसहार मे 1200 भील मारे गए। घायल भील नेता तेजावत भूमिगत हो गए और पुलिस उन्हे बन्दी नही बना सकी।[25]

अन्य रियासतो मे किसान आन्दोलन

राजस्थान की अन्य रियासतो मे किसान वर्ग के आन्दोलनों के (अ) सामान्य कारण, (ब) प्रकृति, (ग) सामन्तवाद के विरुद्ध असहयोग आन्दोलन की तकनीक और (घ) रियासतो तथा ठिकानो के दमन चक्र के प्रतिमान बिजोलिया किसान आन्दोलन के समान रहे हैं। अत रियासतो के

किसान वर्ग के आन्दोलनो के कारणो तथा घटनाओ का पृथक् पृथक् विवेचन नही करके केवल नेतृत्व वर्ग का उल्लेख किया गया है।

सिरोही राज्य मे किसान आन्दोलन

मेवाड से मोतीलाल तेजावत जनवरी, 1922 मे सिरोही आए। सिरोही राज्य मे किसान-आन्दोलन दो चरणो मे हुआ। प्रथम चरण मे, मोतीलाल तेजावत ने भील और गरासियो मे एकी की व्यवस्था (बन्धुत्व एव सगठन की भावना) स्थापित की। उसने भीलो को राज्य को भू लगान लाग बेगार देने से मना कर दिया। 6 मई, 1922 को राज्य ने दमन चक्र चलाया। भीलो के 640 घर जला दिए गए, 29 भील मारे गए और 80 हजार की सम्पत्ति नष्ट कर दी गई।[26] भीलो गरासियो की अनेक मागे मान लेने के कारण यह आन्दोलन 1928 मे समाप्त हो गया। 1929 मे महात्मा गाधी की सलाह पर तेजावत ने अपने आपको ईडर पुलिस के सुपुर्द कर दिया।[27]

दूसरे चरण मे, गोकुल भाई भट्ट ने प्रजामडल के नेतृत्व मे किसान आन्दोलन का सचालन किया। राज्य ने किसान जाच समिति की स्थापना की। उसके सुझावो के अनुसार जुलाई 1941 मे बेगार प्रथा समाप्त कर दी गई। किसानो को कुछ रियायते दी गई परन्तु जागीर क्षेत्रो मे किसानो का शोषण न्यूनाधिक रूप से होता रहा।[28]

बू दी मे किसान आन्दोलन

बिजोलिया और बेगू के किसान आन्दोलन से प्रेरित होकर बू दी के किसानो ने निम्नलिखित कारणो से बू दी के साम तवादी प्रशासन के विरुद्ध आन्दोलन प्रारम्भ किया

(क) बू दी का प्रशासन भ्रष्ट एव अकुशल था, जिसके कारण चोर-डाकुओ से किसानो के जीवन एव सम्पत्ति को खतरा बना रहता था।

(ख) भू-राजस्व के अतिरिक्त लगभग 25 प्रकार की लागतें (उपकर) एव अनेक प्रकार की बेगार किसानो को देनी पडती थी।

(ग) दबाव के कारण राजकीय अधिकारियो को कृषि उत्पादन नि शुल्क देना पडता था, और

(घ) युद्ध कोष के लिए किसानो से जबरन वसूली।[29]

राजस्थान सेवा सघ के मार्गदर्शन मे बरड के किसानो ने सर्वप्रथम अप्रेल, 1922 मे आन्दोलन प्रारम्भ किया। 1 मई, 1922 को बू दी नरेश ने

सावजनिक सभाओं पर प्रतिवध लगा दिया। परन्तु प्रतिवध-आदेश का उलघन करते हुए किसानो ने मोरारी, डावी, गुडा लावासोह और नीमाना मे सभाओं का आयोजन किया। नीमाना की सभा (30 मई) मे स्त्रियो सहित 4,000-5,000 व्यक्ति एकत्रित हुए। पुलिस अधीक्षक ने राजस्थान सेवा सघ के भवरलाल सुनार को वन्दी वना लिया, परन्तु 300 स्त्रियों की भीड ने उसे छुडा लिया।[30]

किसान आन्दोलन को दवाने के लिए प्रशासन ने दमनचक्र का सहारा लिया। जून, 1922 मे अनेक किसानो को वन्दी वनाया गया और उन्हे छुडाने के प्रयास मे पुलिस ने औरतो पर लाठिया तथा भालो से प्रहार किया। पुलिस अत्याचारो की जाच के लिए राजस्थान सेवा सघ ने रामनारायण चौधरी और सत्यभक्त को डावी गाव भेजा तथा 'वू दी राज्य मे स्त्रियो पर अत्याचार' शीर्षक से एक पैम्पलेट 30 जून, 1922 को प्रकाशित किया।[31]

राजस्थान सेवा सघ अजमेर और हाडौती तथा टोंक के पोलिटिकल एजेण्ट के हस्तक्षेप के कारण वू दी प्रशासन ने जुलाई 1922 मे अनेक बेगारो को समाप्त करने की घोषणा की, परन्तु किसान उनसे सतुष्ट नही हुए और उन्होने आन्दोलन जारी रखा। किसानो ने भूराजस्व देना वन्द कर दिया, आरक्षित चारागाहो पर अतिक्रमण शुरु किया तथा पारस्परिक विवादो को ग्राम पचायतो मे हल करने का निश्चय किया।[32]

आन्दोलन की गति को रोकने लिए प्रशासन ने सितम्बर, 1922 मे नवीन राजस्थान (अजमेर) और प्रताप (कानपुर) पर राज्य मे प्रतिवध लगा दिया। अक्टूवर, 1922 मे किसान आन्दोलन वरड जिले से खेराड जिले मे भी फैल गया। 2 अप्रेल, 1923 को डावी गाव मे एक सभा हुई जिसमे किसानो ने निश्चय किया कि वे खाद्य सामग्री राज्याधिकारियो को नही देंगे। इस सभा को भग करने के लिए पुलिस ने गोलिया चलाई जिससे नानक भील और देवीलाल गूजर स्थल पर ही मर गए और अनेक किसान घायल हुए। 14 नवम्वर को पुलिस ने किसान आन्दोलन के नेता नेनूराम शर्मा को वन्दी वना लिया और उन्हे चार वर्ष की सजा दे दी गई।[33]

जून 1923 मे बून्दी प्रशासन ने राजस्थान सेवा सघ के विजयसिंह पथिक, रामनारायण चौधरी, हरिजी ब्रह्मचारी, सत्यभक्त, अजना देवी आदि पर बून्दी प्रवेश पर प्रतिवन्ध लगा दिया। परन्तु इसके साथ-साथ किसानो को कुछ

रियायतें देने की घोषणा की और नेनूराम शर्मा को 24 सितम्बर, 1924 को रिहा कर दिया।[34]

1925 26 मे नेनूराम शर्मा ने किसानो की शिकायतो को दूर करने के लिए अनेक आवेदन पत्र बूदी नरेश को भेजे। अन्तत राजस्थान सेवा सघ मे फूट पडने से बूदी आन्दोलन 1927 मे मन्द पड गया।

दस वर्षों के अन्तराल के बाद बूदी मे गूजरो का आन्दोलन (1936–1945) प्रारम्भ हुआ। 5 अक्टूबर, 1936 को गूजर एव मीणाओ की एक सभा का आयोजन हिण्डोली नगर मे हुआ। इसमे 90 गावो के 500 व्यक्ति एकत्रित हुए। सभा म मुख्यत अधिक भू-राजस्व, गैर कानूनी लाग-बाग तथा अधिक चराई करके विरुद्ध आन्दोलन करने का निश्चय किया गया। बूदी मे गूजरो का आन्दोलन 1945 तक चलता रहा, परन्तु नेतृत्वविहीन होने के कारण इसे सफलता नही मिली।[35]

निस्सन्देह किसान आन्दोलन एव गूजर आन्दोलन दोनो ने ही बूदी मे राजनैतिक चेतना के प्रचार-प्रसार मे योगदान दिया।

अलवर राज्य

अलवर राज्य मे सामन्तवादी व्यवस्था के विरुद्ध प्रतिरोध की प्रथम सगठित अभिव्यक्ति जगली सूअरो के उत्पात के कारण हुई। सूअर किसानो की खडी फसलो को नष्ट कर देते थे, परन्तु प्रतिबन्ध के कारण वे सूअरो को मार नही सकते थे। अत 1921 मे किसानो ने आन्दोलन प्रारम्भ किया। अन्तत महाराजा ने जगली सूअरो को मारने की किसानो की माग स्वीकार कर ली।[36]

मई 1925 मे अलवर राज्य की दो तहसीलो बानसूर और थाना गाजी मे सरकार द्वारा लागू की गई भू राजस्व की ऊँची दरो के विरोध मे आन्दोलन प्रारम्भ हुआ। 14 मई 1925 को नीमूचाणा (तहसील बानसूर) गाव म एकत्रित किसानो की सभा पर गोलियो की बौछार की गई, जिसके परिणामस्वरूप 353 घर जला दिए गए, 95 व्यक्तियो की गोली काण्ड से मृत्यु हो गई, 250 व्यक्ति घायल हुए और महिलाओ का अपमान किया गया।[37] महात्मा गाधी ने इस दमन चक्र को "यग इण्डिया" मे "दोहरी डायरशाही" कहा था।[38]

जयपुर राज्य

जयपुर राज्य मे किसान आन्दोलन के केन्द्र शेखावाटी, तोरावाटी, साभर तथा सीकर एव खेतडी के ठिकाने थे। वस्तुत सीकर शेखावाटी का कृषक

आन्दोलन "जाट किसान और राजपूत जागीरदारों के संघर्ष की कहानी है। किसानों में बहुसंख्यक लोग जाट थे और जागीरदारों में बहुसंख्यक राजपूत थे।"[39]

जयपुर राज्य में सीकर ठिकाना एक अर्द्ध-स्वतन्त्र राज्य था, जिसमें 436 गांव थे। सीकर ठिकाने का आधा भू भाग खालसा तथा आधा भू-भाग जागीर क्षेत्र, जिसमें छोटे-छोटे जागीरदार यानी भोमिया का शासन था। कृषक आन्दोलन का सम्बन्ध खालसा तथा जागीर दोनों ही क्षेत्रों से था। किसान आन्दोलन के प्रमुख कारण थे– लगान में अत्यधिक वृद्धि, अनुचित ढंग से लागतें (उपकर) बढ़ाना, जबरन बेगार लेना और जागीरदारों द्वारा किसानों का सामाजिक-आर्थिक उत्पीड़न करना।

1921 में महात्मा गांधी भिवानी आये थे। उस समय शेखावाटी के अनेक नेता उनसे मिले। युवक हरलालसिंह ने महात्मा गांधी और असहयोग आन्दोलन (1920-22) की प्रेरणा से किसान पंचायतों की स्थापना का काय प्रारम्भ करके किसान संगठन और किसान-चेतना का कार्य प्रारम्भ किया।[40]

सीकर में किसान आन्दोलन 1922 में प्रारम्भ हुआ जबकि नये ठाकुर कल्याणसिंह ने 25 से 50 प्रतिशत तक भू राजस्व इस आधार पर बढ़ा दिया कि पूर्व ठाकुर के दाह संस्कार तथा उनके उत्तराधिकार उत्सव पर अधिक खर्च हो गया था। किसानों की शिकायत पर रावराजा कल्याणसिंह ने अगले वर्ष लगान में छूट देने का वचन दिया, परन्तु रावराजा ने अपने वचन का पालन नहीं किया।

1923 1925 तक सीकर के किसान जयपुर राज्य परिषद् को शिकायत करते रहे, परन्तु रावराजा ने किसानों की शिकायतें दूर करने के बजाय मार्च 1925 में 16 किसान नेताओं को बिना वारण्ट के गिरफ्तार कर लिया और राजस्थान सेवा संघ के सचिव रामनारायण चौधरी पर फरवरी 1926 में सीकर प्रवेश पर प्रतिबन्ध लगा दिया। इसके अलावा उनके पत्र 'तरुण राजस्थान' को भी सीकर तथा जयपुर में प्रतिबन्धित कर दिया गया।

सीकर आन्दोलन की गूंज भारत की केन्द्रीय असेम्बली एवं ब्रिटेन की लोकसभा तक पहुँचने के परिणामस्वरूप रावराजा ने भू-लगान की दर निर्धारित करने के लिए एक कमीशन नियुक्त किया। मई 1925 में ठिकाने एवं

किसानो मे यह समझौता हुआ कि लगान की मात्रा कृषि उत्पादन के अनुसार प्रतिवर्ष निर्धारित की जाए।

समझौते के बाद रावराजा द्वारा बन्दोबस्त से पूर्व छोटी जरीब के भूमि-सर्वेक्षण कराने पर पुन कृषक असन्तोष ने उग्र रूप धारण कर लिया। 1931 से भरतपुर के जाट नेता देशराज ने सीकर शेखावाटी के किसानो का मार्ग-दर्शन करना प्रारम्भ किया। उनके नेतृत्व मे जनवरी 1934 मे सीकर मे 'प्रजापति जाट महायज्ञ' का आयोजन किया गया। यह महायज्ञ जाट किसानो के सगठन एव जागीरदारो के विरुद्ध प्रतिरोध क्षमता का प्रतीक था।

18 फरवरी, 1934 को 200 जाट किसानो के शिष्ट-मण्डल ने जयपुर प्रशासन को अपनी शिकायतो का स्मरण पत्र दिया। परिणामस्वरूप सीकर के रावराजा ने दमन-चक्र का सहारा लिया। कई किसानो को बन्दी बनाया गया। उनके साथ अमानवीय व्यवहार किया गया। सिहोट-ठाकुर ने तो औरतो के बाल पकडकर घसीटने एव उन्हे बैंतो मे मारकर अपनी निर्दयता का परिचय दिया। इसके विरोध मे 25 अप्रेल 1934 को जाट महिलाओ का एक सम्मेलन हुआ। जिसमे लगभग दस हजार महिलाओ ने भाग लिया। अब किसानो ने ठिकाने को लगान नही देने का आन्दोलन प्रारम्भ कर दिया। अन्तत 23 अगस्त, 1934 को सीकर के वरिष्ठ अधिकारी वेब और किसानो के मध्य समझौता हो गया, जिसके अनुसार कतिपय लागते और बेगार बन्द कर दी गई। लगान मे रियायत दी गई। यह समझौता सीकरवाटी जाट पचायत की महान् सफलता थी।

रावराजा सीकर द्वारा समझौते का पालन नही करने पर तथा शेखावाटी के पच पाने ठिकानो द्वारा दिसम्बर 1934 मे वर्षा के अभाव मे 25 प्रतिशत लगान कम करने पर पुन जाटो ने सघर्ष प्रारम्भ कर दिया। उन्होने ठिकाने को लगान देना बन्द कर दिया। ठिकाने ने जाट नेताओ को बन्दी बनाया और स्त्रियों पर अत्याचार किए, फिर भी रावराजा लगान वसूल नही कर सका। अन्त मे रावराजा ने 4 लाख 16 हजार 300 रूपये की लगान की बकाया राशि माफ करने तथा बन्दोबस्त विभाग स्थापित करने की घोषणा जून 1935 मे की। परन्तु कुदान काण्ड (अप्रेल, 1935) मे बन्दी बनाए गए 23 जाटो को सजा देने के कारण आन्दोलन पुन भडक उठा।

अन्तत जयपुर प्रशासन के हस्तक्षेप के कारण रावराजा सीकर को झुकना पडा। खालसा क्षेत्र मे भूमि बन्दोबस्त कर दिया गया। अनेक लागतो

ग्रौर वलात वेगारो को समाप्त कर दिया गया। परन्तु जागीर क्षेत्र मे भू-वन्दोवस्त कराने तथा खातेदारी के अधिकार प्राप्त करने के लिए जनवरी 1939 मे पुन किसान ग्रान्दोलन प्रारम्भ हो गया। जागीर क्षेत्रो के किसानो ने लगान देना बन्द कर दिया। किसान ग्रान्दोलन के दवाव के कारण सीकर ठिकाने न दिसम्वर 1946 मे जागीरी गाँवो मे वन्दोवस्त करने की घोषणा की।[41]

ग्रन्त मे, सीकर के इस दीघकालीन किसान सघष का पटाक्षेप मार्च 1947 मे जयपुर मे हीरालाल शास्त्री के नेतृत्व मे लाकप्रिय मन्त्रीमण्डल की स्थापना के साथ हुग्रा। राजस्व मन्त्री टीकाराम पालीवाल ने गैर खालसा क्षेत्रो मे व दोवस्त करने के तुरन्त ग्रादेश जारी किए। इस ग्रान्दोलन मे ग्रनेक व्यक्तियो ने महत्वपूण भूमिका ग्रभिनीत की। उनमे से सरदार हरलाल सिंह, नेतरामसिह गोरीर, चौधरी घासीराम, लादूसिह, ताडकेश्वर शर्मा, नरोत्तमलाल जोशी, चौधरी ईश्वरसिंह, हरदेवसिंह पृथ्वीसिंह, गणेशराम, पन्नेसिंह ग्रौर मास्टर चन्द्रभानसिंह प्रमुख थे। भरतपुर के जाट नता देशराज ने सीकर के किसाना को सगठित करने मे 1931 से महत्वपूण भूमिका निभाई।

शेखावाटी क्षेत्र मे किसान ग्रान्दोलन

जयपुर राज्य के शेखावाटी क्षेत्र के ग्रन्तर्गत चार भू भाग शामिल है— उदयपुरवाटी, सिंघानीवाटी, नरहरवाटी ग्रौर झुझुनुवाटी। सम्पूण क्षेत्र म छोट-वडे जागीरदारो का ग्राधिपत्य था। इस क्षेत्र मे पाच ठिकाने प्रमुख थे— विसाऊ, डुडलोद, मलमीसर, मण्डावा ग्रार नवलगढ। इन्हे पचपाना सरदार ठिकाने भी कहा जाता था।

शेखावाटी भू भाग का कृषक ग्रान्दालन सीकर ग्रान्दोलन का ही विस्तार मात्र था। इस क्षेत्र के ग्रधिकाश कृषक जाट थे। 1924 मे उन्होने जागीरदारो के सामाजिक ग्रार्थिक उत्पीडन के विरुद्ध जयपुर प्रशासन से शिकायत की। पचपाने के जागीरदारो के ग्रत्याचारो का विरोध किसानो ने लगान न देने के ग्रभियान से प्रारम्भ किया। यहा के जागीरदार सीकर की तुलना मे ग्रधिक क्रूर तथा ग्रमानवीय थे। काफी सघष ग्रौर कुर्बानियो के बाद 1946 मे शेखावाटी क्षेत्र के किसानो को लगान मे कुछ रियायतें मिली, परन्तु उनके दु खा का ग्रन्त जयपुर मे माच 1947 मे हीरालाल शास्त्री के नेतृत्व मे लोकप्रिय सरकार बनन पर ही हुग्रा।

सीकर और शेखावाटी क्षेत्र के किसान आन्दोलन को जाट नेताओं के अतिरिक्त 1935 से जयपुर प्रजा मण्डल के नेताओं का भी सक्रिय मार्गदर्शन प्राप्त हुआ।

जोधपुर राज्य

सामन्तवादी व्यवस्था का विरोध करने वाले और किसानों के हितों की रक्षा के लिए जोधपुर में जून 1924 में 'मारवाड हितकारिणी सभा' की स्थापना हुई। इस सभा के प्रमुख सदस्य निम्नलिखित थे—

जयनारायण व्यास (जोधपुर), दुर्गाशंकर श्रीमाली (जोधपुर), मीठालाल पुष्करणा ब्राह्मण (जैसलमेर), जगदम्बा प्रसाद सेवक (सोजत) और जोधपुर के हरिराम जोशी।

सर्वप्रथम, मारवाड हितकारिणी सभा ने जयनारायण व्यास के नेतृत्व में राज्य से मादा पशुओं गाय, बकरी और भैंसों के अजमेर, नसीराबाद, अहमदाबाद और बम्बई के कसाईखानों में भेजे जाने के विरुद्ध आन्दोलन प्रारम्भ किया और उन्हें 1 सितम्बर 1924 में सफलता मिल गई, जब राज्य प्रशासन ने मादा पशुओं के निर्यात पर प्रतिबन्ध लगा दिया।[42]

जागीर क्षेत्रों में आन्दोलन

1929 में मारवाड हितकारिणी सभा ने जोधपुर राज्य की लगभग 1300 जागीरों में रहने वाले किसानों को जागीरदारों के सामन्तवादी शोषण से मुक्ति दिलाने के लिए आन्दोलन करने का निश्चय किया। जागीर क्षेत्रों में किसानों की सामाजिक आर्थिक स्थिति शोचनीय थी। कुल उपज का आधा भाग तो लगान के भुगतान में ही व्यय हो जाता था। इसके अलावा किसानों को 136 प्रकार की लागतें एवं बलात बेगार देनी पडती थी।[43]

12 मई 1929 को मारवाड हितकारिणी सभा की मीटिंग जयनारायण व्यास की अध्यक्षता में हुई। इसमें निश्चय किया गया कि लगान की उच्च दरें बलात् बेगार एवं अनेक लागतों (उपकर) तथा जमींदारों के सामाजिक-आर्थिक शोषण के विरुद्ध किसानों में चेतना उत्पन्न की जाए। इस सन्दर्भ में 9 व्यक्तियों की समिति बनाई गई। जयनारायण व्यास के अलावा प्रमुख व्यक्तियों के नाम इस प्रकार थे—आनन्दराज सुराणा, भंवरलाल सर्राफ, हेमचन्द्र छगानी। जयनारायण व्यास ने 'तरुण राजस्थान' के 25 मार्च तथा 16 सितम्बर, 1929 के अंक में किसानों की दयनीय दशा पर प्रकाश डाला। उन्होंने किसानों से

अपील की कि उन्हें जागीरदारों के सामन्तवादी अत्याचारों का विरोध करने के लिए अहिंसात्मक आन्दोलन प्रारम्भ करना चाहिये तथा जागीरदारों को भू राजस्व और लाग-बागों को नहीं देना चाहिए। उन्होंने किसानों की दुर्दशा का चित्रण दो पैम्फलेटों 'मारवाड की अवस्था और पोपाबाई की पोल" में किया, जिनका प्रकाशन मारवाड हितकारिणी सभा द्वारा किया गया था।

अहिंसात्मक किसान आन्दोलन के प्रमुख केन्द्र रायपुर, बगडी और चलूंदा के ठिकाने थे। जोधपुर-प्रशासन ने आन्दोलन का दमन करने के लिए 'तरुण राजस्थान' पर प्रतिबन्ध लगा दिया और 20 जनवरी, 1930 को जयनारायण व्यास आनन्दराज सुराणा तथा भवरलाल सर्राफ को बन्दी बना लिया। जयनारायण व्यास को 5 वर्ष के कठोर कारावास तथा आनन्दराज सुराणा, भवरलाल सर्राफ को 4 4 वर्ष के कठोर कारावास की सजा दी गई। इसके अलावा तीनों नेताओं पर 1000-1000 रुपये का जुर्माना भी किया गया, जिसका भुगतान नहीं करने की दशा में एक एक वर्ष की कठोर सजा का प्रावधान किया गया।[14]

अन्त में ब्रिटिश भारत में सविनय अवज्ञा आन्दोलन में भाग लेने वाले बंदियों की रिहाई के सन्दर्भ में जोधपुर सरकार ने भी तीनों नेताओं को बिना शर्त 9 मार्च, 1931 को मुक्त कर दिया।

खालसा क्षेत्र में आन्दोलन

1930-31 में मारवाड़ में अकाल पड़ने और विश्वव्यापी आर्थिक मंदी के कारण खालसा क्षेत्र के किसान राज्य की विगोड़ी (लगान) देने में असमर्थ हो गए। 5 जुलाई, 1931 को मण्डोर के पास एक गांव में माली जाति के किसानों की एक बैठक हुई जिसमें यह निर्णय किया गया कि 50 प्रतिशत विगोड़ी (लगान) कम करने के लिए राज्य प्रशासन को आवेदन पत्र प्रस्तुत किया जावे।[15] इस आवेदन पत्र की सुनवाई नहीं होने पर किसानों ने अगस्त 1931 में लगान नहीं देने का आन्दोलन प्रारम्भ कर दिया।

मारवाड हितकारिणी सभा और मारवाड युवा सघ को 5 मार्च, 1932 को गैर कानूनी घोषित कर दिया ।[46]

राज्य प्रशासन की इस दमनात्मक कार्यवाही का किसानो पर कोई प्रभाव नही पडा । अन्त मे, राज्य सरकार ने प्रति एक रुपये पर तीन आने की लगान मे कटौती करने की घोषणा 16 जून, 1934 मे की । इस घोषणा से किसानो का असन्तोष दूर हो गया ।[47]

मारवाड लोक परिषद् तथा मारवाड किसान परिषद्

1934 मे जयनारायण व्यास तथा उनके सहयोगियो ने जोधपुर प्रजा-मण्डल की स्थापना की थी । जोधपुर प्रशासन द्वारा 20 नवम्बर 1937 को प्रजामण्डल को अवैध घोषित किए जाने पर जयनारायण व्यास ने 26 मई 1938 को मारवाड लोक परिषद् की स्थापना की ।

7 सितम्बर, 1939 को लोक परिषद् के नेतृत्व मे किसानो ने लाग-बाग के उन्मूलन हेतु जागीरदारो के विरुद्ध आन्दोलन प्रारम्भ किया । इन लाग-बागो मे जोधपुर महाराजा द्वारा अवैध घोषित की गई 119 लाग-बागें भी थी जिनकी जबरन वसूली जागीरदार निरन्तर कर रहे थे ।[48]

लोक परिषद् की गतिविधियो को प्रभावहीन करने के लिए जोधपुर प्रशासन ने 28 मार्च, 1940 को उसे अवैध घोषित कर दिया । परन्तु इससे जागीर क्षेत्रो मे किसान आन्दोलन का दमन नही किया जा सका । जून 1940 में जोधपुर प्रशासन द्वारा लोक परिषद् को मान्यता देने पर आन्दोलन पूर्ण आत्मविश्वास और तीव्र गति से पुनर्जीवित हो उठा ।

मारवाड लोक परिषद् की कार्य समिति ने फरवरी 1941 मे जागीर क्षेत्र मे लाग बाग एव थोपे गये अत्यधिक लगान हेतु एक जाच समिति की नियुक्ति की । लोक परिषद् के अनुरोध पर किसानो ने जागीरदारो को अनुचित लाग-बाग देना बन्द कर दिया । परिणामस्वरूप जागीरदारो ने दमन-चक्र का सहारा लिया । किसानो को निर्दयतापूर्वक मार पीट कर गाव छोडने के लिए बाध्य किया गया, फसल की लटाई बन्द कर दी ताकि किसानो का अनाज खेत मे ही नष्ट हो जाए ।

मारवाड लोक परिषद् के प्रभाव को कम करने के लिए जोधपुर प्रशासन के आशीर्वाद से बलदेवराम मिर्धा के नेतृत्व मे जून 1941 मे मारवाड किसान सभा की स्थापना हुई ।

मारवाड लोक परिषद् के आन्दोलन का दमन करने के लिए जैतारण, बिनाटा एवं सोजत परगने के जागीरदारो ने अपनी बैठक मे निश्चय किया कि गाव मे आने पर लोक परिषद् के कार्यकर्ताओ को पीटा जाए, गाव से खदेडकर उनकी मीटिंग भग कर दी जाए।

मारवाड किसान सभा ने अत्यधिक लगान और लाग-बाग के कारण किसानो की दयनीय दशा पर अनेक बुलेटिन जारी किए। परिणामस्वरूप जोधपुर सरकार ने 16 अक्टूबर, 1941 को 'लगान और लाग-बाग विशेष समिति" की स्थापना की। उसका मुख्य काय किसान सभा के बुलेटिनो मे उल्लिखित शिकायतो की जाच करना था। परन्तु, लाग-बाग उन्मूलन के सदभ मे विशेष समिति कुछ नही कर सकी।

मारवाड किसान सभा और जाट सुधारक सभा ने जनवरी 1942 मे रामदेवरा तथा नागौर मेलो मे बैठक आयोजित करके किसानो से, जागीरदारो को लाग बाग नही देने की अपील की। मारवाड लोक परिषद् ने भी 7-9 फरवरी 1942 को लाडनू मे रणछोडदास गट्टानी की अध्यक्षता मे सम्मेलन आयोजित किया। सम्मेलन मे लाग-बाग उन्मूलन और 28 मार्च को 'उत्तरदायी शासन दिवस' मनाने पर बल दिया गया।

चण्डावल ठाकुर ने लोक परिषद् को 28 माच को उत्तरदायी शासन दिवस मनाने की अनुमति नही दी और ठिकाने की पुलिस तथा लठैतो ने 28 मार्च को लोक परिषद् के कायकर्ताओ पर लाठियो तथा भालो से प्राणघातक हमले किए। चण्डावल दु खान्तिका जोधपुर राज्य मे स्वतत्रता आदोलन का एक दु खद अध्याय है। इसी प्रकार 29 माच 1942 को निमाज ठाकुर के लगभग 200 व्यक्तियो ने लोक परिषद् के कायकर्ताओ को पीटा। जोधपुर राज्य सरकार इन घटनाओ के प्रति तटस्थ रही। इस स्थिति मे राजपूत सभा ने लोक परिषद् की सभाओ को भग करने के लिए प्रत्येक जागीरदार से कहा।

जागीर क्षेत्र के किसानो की समस्या को हल करने मे जोधपुर राज्य की उदासीन नीति के विरोध मे जयनारायण व्यास ने मई 1942 मे सत्याग्रह आदोलन प्रारम्भ किया। उन्होने जोधपुर राज्य की स्थिति पर प्रकाश डालने हेतु दो पत्रक प्रकाशित किये—(क) मारवाड मे उत्तरदायी शासन, और (ख) जोधपुर की स्थिति पर प्रकाश। मारवाड किसान सभा ने भी 9 जून, 1942 को एक बुलेटिन प्रकाशित किया, जिसमे किसानो की समस्याओ को दूर करने के लिए जोधपुर दरबार से कहा गया।

जोधपुर राज्य के किसानो पर जागीरदारो के अत्याचार और आतक की निन्दा महात्मा गाधी के 'हरिजन' पत्र के 9 अगस्त 1942 के अक मे छपी और अ भा जाट सभा, अलीगढ की बैठक मे 26 जुलाई, 1942 को राजपूत ठाकुरो के जाटो पर अत्याचारो की निन्दा की गई। अन्तत दिसम्बर 1943 मे मारवाड के जागीरदारो ने भूमि बन्दोबस्त का विरोध किया, परन्तु राज्य सरकार की कठोर कार्यवाही के कारण उन्हे झुकना पडा।

अब जागीरदार किसानो पर और अधिक अत्याचार करने लगे। परिणामस्वरूप किसानो ने जागीरदारी प्रथा के उन्मूलन के लिए बल देना प्रारम्भ किया। जागीरदारो के पाशविक अत्याचारो की पराकाष्ठा डाबरा गाव मे हुई। 13 मार्च, 1947 को डाबरा गाव मे लोक परिपद और किसान सभा के लगभग 800 900 कार्यकर्ताओ के जुलूस पर ठिकाने के लगभग 500 600 लठैतो ने तलवार, लाठियो और बन्दूकों से हमला कर दिया। इस जुलूस मे लोक परिषद के नेता—मथुरादास माथुर, द्वारकादास पुरोहित, सी आर चौपासनीवाला, राधाकिशन बोहरा, किशनलाल शाह, नरसिंह कच्छवाहा, वशीधर, हरीन्द्र कुमार चौधरी आदि उपस्थित थे। सभी नेताओ को ठाकुर के लठैतो ने बबरतापूर्वक पीटा। डाबरा काण्ड की कटु निन्दा वन्दे मातरम् (बम्बई), लोकवाणी (जयपुर), प्रजासेवक (जोधपुर) और हिन्दुस्तान टाइम्स (दिल्ली) ने की।

स्वतन्त्रता के पश्चात् मार्च, 1948 को जोधपुर महाराजा ने जयनारायण व्यास को राज्य का प्रधानमन्त्री नियुक्त किया परन्तु निरकुश राजतन्त्र और सामन्तवाद का अन्त 30 मार्च, 1949 को राजस्थान के निर्माण के बाद ही हुआ। 6 अप्रेल, 1949 को मारवाड काश्तकारी अधिनियम पास हो जाने से जागीरक्षेत्रो मे किसानो की स्थिति मे आधारभूत अन्तर हो गया। अब वे अपनी जमीन के मालिक बन गए, खातेदार काश्तकार बन गए और इसके साथ सामन्तवाद के विरुद्ध उनका दीर्घकालीन सघर्ष समाप्त हो गया। इस सन्दर्भ मे उल्लेखनीय है कि जागीरदारो के किसानो पर बर्बर एव अमानवीय अत्याचारो ने जागीरदारी प्रथा के उन्मूलन की काफी पृष्ठभूमि निर्मित की।

बीकानेर राज्य

गगानहर क्षेत्र मे सिक्ख किसानो की कतिपय असुविधाओ के कारण बीकानेर राज्य मे किसान असन्तोष की प्रथम अभिव्यक्ति 1929 मे हुई। सिक्ख

जमीदारो (नहर क्षेत्र मे भूमि के खरीददार) ने 20 अप्रेल, 1929 को जमींदार सभा की स्थापना की। जमीदार सभा ने 10 मई, 1929 को अपनी बैठक मे निम्न प्रस्ताव पास किए —

(1) नहर क्षेत्र मे सिचाई हुतु पर्याप्त पानी उपलब्ध न होन के कारए लगान की राशि मे कटौती होनी चाहिये।

(2) पूरा पानी उपलब्ध नही हो रहा ह, फिर भी पानी कर (आवियाना) पूरी दरो से लिया जा रहा है। अत पानी दर मे कमी हो।

(3) जमीन के मूल्य की किश्तो को चुकाने की अवधि बढायी जानी चाहिए तथा किश्तो पर व्याज की दर कम होनी चाहिए।

महाराजा गगासिह गगानहर क्षेत्र के विकास मे व्यक्तिगत रुचि रखते थे। अन्तत किसानो के शान्तिपूण सवैधानिक आन्दोलन की समाप्ति 30 सितम्बर, 1941 को हुई जब महाराजा गगासिह ने उनकी मागे स्वीकार कर ली।

जागीर क्षेत्रो मे आन्दोलन

बीकानेर राज्य मे कुल 2917 गाव थे, जिनमे से 1393 गाव खालसा क्षेत्र मे थे। सीमावर्ती क्षेत्र सीकर और शेखावाटी के जाट किसान आन्दोलनो का प्रभाव बीकानेर राज्य के वहुसख्यक जाट किसानो पर भी पडा। परिणाम-स्वरूप उनमे सामन्तवाद के विरुद्ध प्रतिरोध करने की राजनीतिक चेतना उत्पन्न हुई।

सवप्रथम 18 दिसम्बर, 1934 को जाट किसानो ने अपने कष्टो को दूर करने के लिए एक आवेदन पत्र महाराजा गगासिह को दिया। किसानो ने कहा कि उनकी शिकायतें दूर नही करने की स्थिति मे वे लगान तथा लाग बाग जागीरदारो को नही देगे। 11 अप्रेल, 1935 को बीकानेर प्रशासन ने घोषणा की कि लगान का भुगतान नही करने वालो के विरुद्ध कठोर कार्यवाही की जाएगी।

सर्वप्रथम 1937 मे उदरासर गाव मे जीवन चौधरी ने प्रजामण्डल नेताओ के सहयोग से अवैध लाग बाग के विरुद्ध आवाज उठाई, परन्तु ठिकाने एव राज्य अधिकारियो ने किसान नेताओ को निदयतापूर्वक मार पीटकर उनकी आवाज को कुचल दिया।

महाजन ठिकाने मे आन्दोलन

इसके बाद किसानो ने मई, 1938 मे महाजन ठिकाने के विरुद्ध राज्य के राजस्व आयुक्त को शिकायत की। उनकी मुख्य शिकायते थी कि जागीरदार 1927 से लगातार लगान, चराई कर और अन्य लागनो (उपकर) मे वृद्धि कर रहा है। किसानो के निरन्तर प्रयास के बाद उनमे तथा जागीरदार के बीच जून, 1939 मे समझौता हो गया। परन्तु बाद मे जागीरदार ने समझौते का पालन नही किया, फलस्वरूप किसानो ने जागीरदार को भू-राजस्व नही देने का आन्दोलन पुन प्रारम्भ कर दिया। अब ठिकाने के कामदार ने दमनचक्र का सहारा लिया। तीन वर्षो (1938 40) के बकाया लगान नही चुकाने पर कामदार जगन्नाथ जोशी ने किसान नेताओ की चल सम्पत्ति जब्त कर ली और राज्य पुलिस की सहायता से किसानो का दमन करने के असफल प्रयत्न किए। अन्तत माच, 1942 मे बीकानेर सरकार ने किसानो की पशु चराई कर तथा लगान मे कटौती की माग स्वीकार कर ली।

दूधवा खारा आन्दोलन

बीकानेर मे किसान आन्दोलनो की शृखला मे दूधवा खारा गाव का आन्दोलन किसानो पर पुलिस अत्याचारो की दृष्टि से उल्लेखनीय है।

1944 के अन्त मे ठाकुर सूरजमलसिंह ने बकाया लगान को वसूल करने के बहाने से किसानो के खेत जब्त कर लिए और उनके मकान लूट लिए। ठाकुर के अत्याचारो का विरोध किसान नेता हनुमानसिंह आय ने अटूट सकल्प और निर्भिकता के साथ किया। उन्हे राज्य प्रशासन ने जून अगस्त, 1945 तक, 20 माच—27 जुलाई 1946 तक और 7 अप्रेल, 1947 से 4 जनवरी 1948 तक जेल मे रखा तथा उन पर अमानुषिक अत्याचार किए गए, परन्तु वे टूटे नही। उन्होने अपने तृतीय कारावास के दौरान 65 दिन तक उपवास किया।[40]

हनुमानसिंह और उनके परिवार के कष्टो ने किसानो मे संगठन और राजनैतिक चेतना के प्रचार-प्रसार मे महत्वपूर्ण भूमिका प्रस्तुत की।

प्रजामण्डल के नेतृत्व मे आन्दोलन

1946 के प्रारम्भ मे अनेक जाट नेताओ ने बीकानेर राज्य प्रजा परिषद की सदस्यता ग्रहण कर ली। परिषद ने लाग-बाग के विरुद्ध आन्दोलन प्रारम्भ किया। 1 मई, 1946 को कु भाराम आय को बन्दी बना लिया गया। प्रजा परिषद ने 2 जून को ललाना गाँव मे मीटिंग की जिसमे 5000 किसानो ने भाग लिया।

रायसिहनगर मे एकत्रित किसानो की भीड पर 1 जुलाई, 1946 को गोलिया चलाई गई जिसमे अनेक घायल हो गए तथा किसान बीरबलसिंह की मृत्यु हो गई।

कांगड गाव काण्ड

1946 मे अकाल के कारण फसल नष्ट हो जाने की वजहसे किसानो ने लगान और लाग बाग देने मे असमथता व्यक्त की, परन्तु जागीरदार लगान और लागतें वसूल करने पर बल देता रहा। किसानों द्वारा विरोध करने पर ठाकुर ने किसानो, उनके बच्चो और औरतो के साथ मार-पीट की तथा औरतो का अपमान किया।

इस अत्याचार के बाद किसानो के अनुरोध पर प्रजा परिषद ने जाँच के लिए स्वामी सच्चिदानन्द केदारनाथ, हसराज आय, दीपचन्द, मौजीराम, गगादत्त रगा और रूपराम को गाव मे भेजा। ठाकुर ने उन्ह 1 नवम्बर, 1946 को गाव मे निदयतापूर्वक पीटा। उनमे से 6 व्यक्ति बेहोश हो गये। उनको अपमानित करने के लिए ठाकुर ने उन्हे निर्वस्त्र करके नग्न अवस्था मे ही गाव मे घुमाया। बीकानेर दरबार ने सभाओ पर तथा भरतपुर से प्रकाशित 'किसान' पत्र पर प्रतिबन्ध लगा दिया।[50]

इस प्रकार सामन्तवाद के अत्याचारो ने किसानो मे प्रतिरोध क्षमता और राजनैतिक चेतना उत्पन्न की। अन्तत 1948 मे बीकानेर मे लोकप्रिय मन्त्रिमडल के निर्माण से किसानो के कष्टो का अन्त हुआ।

भरतपुर राज्य

स्वतन्त्रता से पूव भरतपुर रियासत मे केवल 17 छोट-छोटी जागीरे थी, उनमे से 14 गाव वाली वल्लभगढ की जागीर सबसे बडी थी। जागीर क्षेत्र के किसानो की स्थिति खालसा क्षेत्र के किसानो के समान थी। जागीरदार को प्रशासनिक एव न्यायिक शक्तिया प्राप्त न होने के कारण यहाँ की सामतवादी व्यवस्था राजस्थान के अन्य राज्यो से सवथा भिन्न थी।[51]

नवम्बर, 1931 मे भरतपुर राज्य मे सन् 1900 के पुराने बन्दोबस्त को सशोधित करके नवीन बन्दोबस्त मे लगान की मात्रा कुल उपज की 66 प्रतिशत कर दी गई। पानी कर मलवा और पटवार कोष की वसूली अलग से होती थी।[52]

नये वन्दोवस्त मे लगान की उच्च दरो के विरुद्ध गाव के मुखियाओ ने लगान नही देने का आन्दोलन प्रारम्भ किया। 23 नवम्बर, 1931 को लगभग 500 किसानो ने भोजी नम्बरदार के नेतृत्व मे भरतपुर मे प्रदर्शन किया। राज्य प्रशासन ने 24 नवम्बर को भोजी नम्बरदार को वन्दी बना लिया। अन्तत किसानो मे बढते हुए असन्तोष से बाध्य होकर राज्य प्रशासन ने नए बन्दोवस्त को 5 वर्ष के लिए स्थगित कर दिया, फलस्वरूप आन्दोलन वन्द हो गया।[53]

भरतपुर राज्य की पहाडी और नगर तहसीलो मे मेव मुसलमान बहुसख्यक थे। उन्होने अलवर के मेव आन्दोलन की भाति भरतपुर मे भी आन्दोलन प्रारम्भ किया। अप्रेल 1933 मे भरतपुर के मेव गावो ने लगान देना बन्द कर दिया क्योकि रबी फसल का लगान अधिक था। मई 1933 मे उन्होने भारत सरकार को एक आवेदन पत्र राज्य सेवाओ मे मुसलमानो को जनसख्या के अनुपात मे नौकरियाँ देने के सम्बन्ध मे लिखा। कुछ दिनो बाद भरतपुर प्रशासन ने रबी फसल का लगान काफी कम कर दिया और एक मुसलमान को भी राज्य कौसिल मे नियुक्त कर दिया। वास्तव मे मेव आन्दोलन का मार्गदर्शन राज्य के बाहर से हो रहा था।

स्वाधीनता सग्राम मे योगदान

राजस्थान मे स्वाधीनता सग्राम का विकास चार चरणो मे हुआ। प्रथम चरण मे, रियासतो के किसान वर्ग द्वारा सामन्तवादी व्यवस्था के शोषण के सयत्रो का ग्राम पचायतो के नेतृत्व मे सामूहिक प्रतिरोध एव सगठित सघर्ष किया गया।

द्वितीय चरण मे, रियासतो मे उत्तरदायी शासन की स्थापना के लिए प्रजामण्डलो की स्थापना हुई। इस चरण मे किसान पचायतो एव प्रजामण्डलो ने सयुक्त रूप से सामन्तवादी व्यवस्था के विरुद्ध अहिंसात्मक सघर्ष किया, क्योकि दोनो का समान लक्ष्य शोषण एव अन्याय का विरोध करना था।

तृतीय चरण मे, रियासतो के भारत सघ मे विलय के लिए और चतुर्थ चरण मे, सामन्तवाद के अन्तिम अवशेष जागीरदारी प्रथा के उन्मूलन के लिए आन्दोलन किए गए।

इस प्रकार राजस्थान मे स्वाधीनता सग्राम के लिए राजनैतिक जन-जागरण का श्रेय सर्वप्रथम विजोलिया किसान आन्दोलन को है और जागीरदारी

प्रथा के उन्मूलन के साथ स्वाधीनता संघर्ष की गौरव गाथा का समापन होता है।

राजस्थान में किसान वर्ग के आन्दोलनों का स्वाधीनता संग्राम में योगदान निम्नलिखित है—

(1) सर्वप्रथम बिजोलिया किसान आन्दोलन ने राजस्थान में ब्रिटिश सत्ता विरोधी बीज बोए। उदयपुर के ब्रिटिश रेजीडेंट ने ए जी जी राजपूताना को 1923 में पत्र लिखा—'मेवाड़ अव्यवस्था और कानून विरोधी गतिविधियों का मुख्य स्थल बन गया है। आन्दोलन मुख्यतः महाराणा के विरुद्ध है, परन्तु यह शीघ्र ब्रिटिश क्षेत्रों में फैल सकता है।' बिजोलिया किसान आन्दोलन के परिणाम दूरगामी हुए। धीरे-धीरे इस किसान आन्दोलन की चिन्गारी भयंकर दावानल का स्वरूप ग्रहण करके समस्त राजस्थान में फैल गई।

(2) किसान आन्दोलन के जनक विजयसिंह पथिक थे। उन्होंने राजस्थान सेवा संघ (अजमेर), 'राजस्थान केसरी' (वर्धा) और 'नवीन राजस्थान' (अजमेर) के माध्यम से राजस्थान में राजनैतिक चेतना का अभियान छेड़ा।

(3) राजस्थान के किसान आन्दोलन के गर्भ से ही राजस्थान के भावी स्वतन्त्रता सेनानी उत्पन्न हुए। जैसे, माणिक्यलाल वर्मा, रामनारायण चौधरी, हरिभाऊ उपाध्याय, भील नेता मोतीलाल तेजावत, गोकुलभाई भट्ट, हसराज आर्य, कुंभाराम आर्य, जयनारायण व्यास, द्वारकादास पुरोहित, मथुरादास माथुर, हीरालाल शास्त्री, बलवन्तसिंह मेहता आदि।

(4) किसान आन्दोलन की प्रारम्भिक सफलताओं से प्रेरित होकर राजस्थान में प्रजामण्डलों की स्थापना की गई, जिनके नेतृत्व में उत्तरदायी शासन की स्थापना हेतु सामंतवादी व्यवस्था के विरुद्ध संघर्ष किया गया।

(5) किसान आन्दोलनों के कारण ही देशी राज्यों की समस्याओं की ओर अखिल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का ध्यान आकर्षित हुआ। सर्वप्रथम बिजोलिया आन्दोलन की जानकारी लेने हेतु महात्मा गांधी ने फरवरी 1918 में पथिकजी को बम्बई बुलाया और महादेव भाई देसाई को जांच हेतु बिजोलिया भेजा। कांग्रेस ने सर्वप्रथम 1938 में रियासतों में उत्तरदायी शासन की स्थापना की मांग की।

(6) किसान आन्दोलन ने पचायत राज की अवधारणा दी। पचायतो ने लोकतन्त्र की प्राथमिक पाठशालाओ की भूमिका प्रस्तुत की।

(7) बिजोलिया के किसान आन्दोलन ने गाधी मार्ग पर आधारित स्वाधीनता सग्राम के लिए समरनीति विकसित की।

(8) किसान वर्ग के आन्दोलनो ने राजनीतिक सुधारो के साथ साथ सामाजिक-आर्थिक सुधारो पर भी बल दिया।

सक्षेप मे, राजस्थान के स्वाधीनता सग्राम की कहानी रियासतो के किसान वर्ग के आन्दोलनो की कोख से उत्पन्न हुई है।

टिप्पणिया—

1 शकरसहाय सक्सेना बिजोलिया आन्दोलन का इतिहास, (बीकानेर, राजस्थान राज्य अभिलेखागार, 1972), पृ 202
2 बी डी माथुर, स्टेटस पीपुल्स कान्फरेंस, (जयपुर, पब्लिकेशन स्कीम, 1984), पृ 183
3 ब्रिटिश सरकार की परमोच्च शक्ति के अनुसार रियासतो के शासक सम्प्रभु शासक नही होते थे। वे आन्तरिक मामलो म भी सीमित सम्प्रभुता का प्रयोग करते थे।
4 पेमाराम, एग्रेरियन मूवमट इन राजस्थान, (जयपुर, पचशील प्रकाशन, 1986), पृ 2-3
5 उपयुक्त, पृ 10
6 शकरसहाय सक्सेना, पूर्ववर्णित, पृ 24 25
7 पेमाराम, पूर्ववर्णित, पृ 10
8 उपयुक्त पृ 12
9 मारवाड लोक परिषद बुलटिन, जुलाई 1942
10 शकरसहाय सक्सेना, पूर्ववर्णित, पृ 10 तथा 28 एव लाग बेगारो की सूची पृ 36 39 पर देखे।
11 उपयुक्त, पृ 41
12 उपयुक्त, पृ 46 47
13 बी एल पानगडिया राजस्थान म स्वतन्त्रता सग्राम (जयपुर, हिन्दी ग्रथ अकादमी 1985), पृ 8
14 शकरसहाय सक्सेना, पूर्ववर्णित, पृ 82 84
15 उपयुक्त, पृ 83-84 एव 93
16 उपयुक्त, पृ 103 107
17 उपयुक्त, पृ 109
18 रामनारायण चौधरी, बीसवी सदी का राजस्थान (अजमेर, कृष्णा ब्रदस, 1981), पृ 48
19 पेमाराम, पूर्ववर्णित, पृ 26
20 शकरसहाय सक्सेना, पूर्ववर्णित पृ 137-39

21 पमाराम, पूर्ववर्णित, पृ 28-32 पर समझौते का विस्तृत विवरण देखें।
22 उपयुक्त, पृ 36 एव 38
23 शकरसहाय सक्सेना, पूर्ववर्णित, पृ 269-70
24 सुमनेश जाशी, राजस्थान क स्वतन्त्रता सनानी
(जयपुर, गगानगर, 1973), पृ 1-7
25 बी एल पानगडिया, पूर्ववर्णित, पृ 30
26 नवीन राजस्थान, 11 जून, 1922
27 सुमनेश जोशी, पूर्ववर्णित, पृ 178
28 पेमाराम, पूर्ववर्णित, विस्तृत विवरण पृ 113 18 पर अंकित है।
29 उपयुक्त, पृ 120
30 उपयुक्त, पृ 121 122
31 उपयुक्त, पृ 123 124
32 उपयुक्त, पृ 124-129
33 उपयुक्त, पृ 129 132
34 उपयुक्त पृ 133
35 उपयुक्त, पृ 136 144
36 बाबूलाल पानगडिया पूर्ववर्णित, पृ 27
37 के एस सक्सेना, द पालिटिकल मूवमेंट एण्ड अवेकनिंग इन राजस्थान
(नई दिल्ली, एस चाँद एण्ड कम्पनी, 1971), पृ 188
38 रामनारायण चौधरी पूर्ववर्णित, पृ 96
39 रतनलाल मिश्र, शेखावाटी का इतिहास,
(मडावा झुझुनू 1984), पृ 240
40 राम पाण्ड, एग्रेरियन मूवमट इन राजस्थान
(दिल्ली यूनीवर्सिटी पब्लिशर्स, 1974,) पृ 67
41 सीकर ठिकाने के किसान आदोलन का विवरण मुख्यत पेमाराम क शोध ग्रथ
(पूर्ववर्णित) पर आधारित है।
42 दि मारवाड गजट 6 सितम्बर, 1924
43 मारवाड किसान सभा द्वारा दिनाक 18 फरवरी, 1943 को जोधपुर राज्य की
लाग बाग जाच समिति को प्रस्तुत की गई सूची मे 136 लाग बागें अंकित थी।
44 पमाराम, पूर्ववर्णित, पृ 210
45 उपयुक्त, पृ 211
46 उपयुक्त, पृ 212-213
47 उपयुक्त, पृ 216-17
48 उपयुक्त, पृ 217 18
49 उपयुक्त, पृ 298 302
50 उपयुक्त, पृ 304 306
51 उपयुक्त, पृ 259
52 उपयुक्त, पृ 260
53 उपयुक्त पृ 260 61

राजस्थान मे भील आन्दोलन

अनादि काल से भील जाति राजस्थान के दक्षिणी तथा उससे जुडे मालवा तथा गुजरात के क्षेत्र मे रह रही है। राजस्थान मे स्वतन्त्रता से पूर्व भील मुख्यत मेवाड, डूगरपुर, बासवाडा, प्रतापगढ और कुशलगढ की रियासतो मे रहते थे। वर्तमान मे वे भीलवाडा, चित्तोडगढ, उदयपुर, डूगरपुर और बासवाडा क्षेत्र मे बसे है। इससे पूर्व कि राजस्थान मे भील आन्दोलन की विवेचना की जाय, उनके बारे मे सक्षिप्त जानकारी इस प्रकार है।

भील—एक परिचय

भील[1] भारत की प्राचीनतम जातियो मे से एक है, अनुमान है कि भारत में उनकी जनसख्या सन् 1891 में 6,12,459 थी। 1981 की जनगणना के अनुसार 38,38,002 थी। भारत की जनजातियो मे भीलो का स्थान दूसरा है।

उत्पति

भीलो की उत्पति के बारे मे विभिन्न किवदतिया प्रचलित है। बाण भट्ट कृत 'कादम्बरी' के अनुसार भील शब्द का प्रयोग प्राचीन सस्कृत और अपभ्रश साहित्य मे भी मिलता है। 'कथा सरित सागर,' जिसकी रचना ई सन् 600 मे हुई थी, मे भील शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग मिलता है जिसमे भील मुखिया द्वारा एक दूसरी जाति के राजा की प्रगति का विंध्य पर्वत मे विरोध किया गया है।[2] मनु ने निशाद (भील का पर्यायवाची) को ब्राह्मण पिता व शूद्र माता की सतान माना है।[3] वेदो मे निशाद उन लोगो को कहा गया है, जो मध्य भारत के वनो मे रहते थे।[4]

नृवश शास्त्र के अनुसार भीलो की उत्पत्ति विवादग्रस्त है। कुछ विद्वान उन्हे भारत का प्राचीनतम निवासी मानते हैं।[5] जबकि कुछ उन्हें विदेशी स्वीकार करते है। कर्नल टॉड, जिसने उन्हे वनपुत्र लिखा है, का विश्वास है कि

21 पमाराम, पूववर्णित, पृ 28 32 पर समझौते का विस्तृत विवरण देखें।
22 उपयु क्त पृ 36 एव 38
23 शकरसहाय सक्सेना, पूववर्णित, पृ 269-70
24 सुमनश जाशी, राजस्थान मे स्वत त्रता सनानी
(जयपुर, गगानगर, 1973), पृ 1-7
25 बी एल पानगडिया, पूववर्णित, पृ 30
26 नवीन राजस्थान 11 जून, 1922
27 सुमनेश जोशी, पूववर्णित, पृ 178
28 पेमाराम, पूववर्णित, विस्तृत विवरण पृ 113 18 पर अकित है।
29 उपयु क्त, पृ 120
30 उपयु क्त, पृ 121 122
31 उपयु क्त, पृ 123 124
32 उपयु क्त, पृ 124-129
33 उपयु क्त, पृ 129 132
34 उपयु क्त पृ 133
35 उपयु क्त, पृ 136 144
36 बाबूलाल पानगडिया पूववर्णित, पृ 27
37 के एस सक्सना, द पालिटिकल मूवमेट एण्ड अवेकनिग इन राजस्थान,
(नई दिल्ली, एस चांद एण्ड कम्पनी, 1971), पृ 188
38 रामनारायण चौधरी, पूववर्णित, पृ 96
39 रतनलाल मिश्र, शेखावाटी का इतिहास
(मडावा, झु झुनू, 1984), पृ 240
40 राम पाण्डे, एग्रेरियन मूवमेट इन राजस्थान,
(दिल्ली यूनीवर्सिटी पब्लिशस, 1974,), पृ 67
41 सीकर ठिकाने के किसान आ दोलन का विवरण मुख्यत पेमाराम के शोध ग्रथ
(पूववर्णित) पर आधारित है।
42 दि मारवाड गजट 6 सितम्बर, 1924
43 मारवाड किसान सभा द्वारा दिनाक 18 फरवरी, 1943 को जाधपुर राज्य की
लाग बाग जाच समिति का प्रस्तुत की गई सूची म 136 लाग बागें अकित थी।
44 पमाराम पूववर्णित, पृ 210
45 उपयु क्त, पृ 211
46 उपयु क्त, पृ 212-213
47 उपयु क्त पृ 216-17
48 उपयु क्त पृ 217 18
49 उपयु क्त पृ 298 302
50 उपयु क्त, पृ 304 306
51 उपयु क्त पृ 259
52 उपयु क्त, पृ 260
53 उपयु क्त पृ 260 61

राजस्थान मे भील आन्दोलन

अनादि काल से भील जाति राजस्थान के दक्षिणी तथा उससे जुडे मालवा तथा गुजरात के क्षेत्र मे रह रही है। राजस्थान मे स्वतन्त्रता से पूर्व भील मुख्यत मेवाड, डूगरपुर, बासवाडा, प्रतापगढ और कुशलगढ की रियासतो मे रहते थे। वर्तमान मे वे भीलवाडा, चित्तौडगढ, उदयपुर, डूगरपुर और बासवाडा क्षेत्र मे बसे है। इससे पूर्व कि राजस्थान मे भील आदोलन की विवेचना की जाय, उनके बारे मे सक्षिप्त जानकारी इस प्रकार है।

भील—एक परिचय

भील[1] भारत की प्राचीनतम जातियो मे से एक है, अनुमान है कि भारत मे उनकी जनसख्या सन् 1891 मे 6,12,459 थी। 1981 की जनगणना के अनुसार 38,38,002 थी। भारत की जनजातियो मे भीलो का स्थान दूसरा है।

उत्पत्ति

भीलो की उत्पत्ति के बारे मे विभिन्न किवदतिया प्रचलित है। बाण भट्ट कृत 'कादम्बरी' के अनुसार भील शब्द का प्रयोग प्राचीन सस्कृत और अपभ्र श साहित्य मे भी मिलता है। 'कथा सरित सागर,' जिसकी रचना ई सन् 600 मे हुई थी, मे भील शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग मिलता है जिसमे भील मुखिया द्वारा एक दूसरी जाति के राजा की प्रगति का विंध्य पर्वत मे विरोध किया गया है।[2] मनु ने निशाद (भील का पर्यायवाची) को ब्राह्मण पिता व शूद्र माता की सतान माना है।[3] वेदो मे निशाद उन लोगो को कहा गया है, जो मध्य भारत के वनो मे रहते थे।[4]

नृवश शास्त्र के अनुसार भीलो की उत्पत्ति विवादग्रस्त है। कुछ विद्वान उन्हे भारत का प्राचीनतम निवासी मानते हैं।[5] जबकि कुछ उन्हे विदेशी स्वीकार करते हैं। कर्नल टॉड, जिसने उन्हे वनपुत्र लिखा है, का विश्वास है कि

भीलो का प्रारम्भिक विद्रोह

सन् 1818 मे दक्षिणी राजस्थान के पाचो राज्यो (मेवाड, डूगरपुर, वासवाडा, प्रतापगढ और कुशलगढ) ने ईस्ट इण्डिया कम्पनी के साथ सधि कर ली। सधि से इन राज्यो की विदेश नीति तो अग्रेजो के हाथ मे आ ही गई किन्तु कुछ मामलो मे अग्रेज इनके आतरिक मामलो मे भी हस्तक्षेप करने लगे थे। इस प्रकार अग्रेज ही इस क्षेत्र के वास्तविक स्वामी बन गये।

1818 मे सवप्रथम मेवाड मे भीलो ने विद्रोह किया। मेवाड मे भीलो के विद्रोह के कई कारण थे। प्रथम, 1818 की सधि के द्वारा स्थानीय सेना भग कर दी गई। राज्य की व जागीरदारो की सेना मे भील भी कार्यरत थे जो सेना के समाप्त होने से वेकार हो गये। दूसरा, सधि के तुरत बाद मेवाड का आतरिक प्रशासन ब्रिटिश रेजीडेंट कनल जेम्म टॉड ने सभाल लिया। उसने भीलो को नियत्रण मे रखने का प्रयास किया। तीसरा, कनल टॉड ने भीलो का बोलाई व रखवाली कर वसूलने का अधिकार समाप्त कर दिया[10] और यही विद्रोह का तत्कालिक कारण बना।

1823 का अभियान

भीलो को दबाने के लिये कनल लूँबे के नेतृत्व मे एक सेना भेजी गई जिसने भीलो को समर्पण के लिये विवश कर दिया। अग्रेजो की मध्यस्थता से भीलो व महाराणा के मध्य एक सधि हो गई, जिसके अनुसार—

(1) प्रत्येक पाल के गमेती (पाल का मुखिया) ने महाराणा की सर्वोच्चता स्वीकार की।

(2) महाराणा पहाडी क्षेत्र मे थाने स्थापित कर सकेगे।

(3) भील अपने समस्त हथियार महाराणा को सौंप देगे और भविष्य मे भी किसी प्रकार के हथियार अपने पास नही रखेंगे।

(4) भील अपनी कृषि उपज का एक चौथाई लगान के रूप मे देंगे।

(5) वे भील रखवाली कर वसूल नही करेंगे।

(6) भील राहजनी, चोरी, डकैती, आदि अपराध नही करेंगे और यदि कोई करेंगे तो गमेती को उन्ह राज्य को सौंपना होगा।

(7) सभी मामलो मे भील महाराणा और पोलिटिकल एजेण्ट का निणय स्वीकार करेंगे।

(8) वे कन्या वध तथा गौ बध नही करेंगे।

आर्यो ने उन्हे जगल मे रहने को विवश कर दिया। राजपूत भी उन्हे यही का निवासी मानते हैं। जहा तक राजस्थान का प्रश्न है, भीलो ने मेवाड के गुहिल शासको की अविस्मरणीय सेवाए की है। यही कारण था कि मेवाड के राजचिह्न मे राजपूत के साथ एक धनुर्धारी भील का चित्र भी अकित था। डूगरपुर, बासवाडा, देवलिया[7] आदि शहरो के नाम कुछ भील मुखियाओ के नाम पर रखे गए थे।

प्रकृति से भील एक स्वतत्र, नियमो मे न बधने वाली युद्धप्रिय जाति है। इनके मुख्य हथियार तीर व कमान है। आर्थिक दृष्टि से यह बहुत ही पिछडा वर्ग है और इनके आर्थिक साधन भी बहुत कम है। प्रारम्भ मे ये भोजन की खोज मे इधर उधर भटका करते थे, किन्तु बाद मे वे 'झिमतो' विधि से (जगल जला कर खेती करना) खेती करने लगे। खेती के अतिरिक्त वे लकडी काटना, घासफूस, फल, जडी बूटी, शहद, गोद एकत्रित करना, मछली पकडना, जगली जानवरो का शिकार करना भी उनका पेशा है। वे 'बोलाई' कर यात्रियो की सुरक्षित यात्रा के बदले मे तथा रखवाली कर गाव वालो से गाव की रखवाली के बदले मे लेते थे। उन्नीसवी शताब्दी मे इस क्षेत्र मे कई अकाल पडे अत भूख से बचने के लिये उनमे से कई ने चोरी व डकैती का पेशा भी अपना लिया।

भील बहुत अधविश्वासी होते है और भूतप्रेत से बचने के लिये अपने हाथो पर गोदने गुदवाते है तथा गडे तावीज बाधते है। धार्मिक रूप से वे चुडैल या डाकन के जादू टोने मे विश्वास करते है और भोपो के माध्यम से दूर करते है। यदि किसी स्त्री पर चुडैल होने का सदेह हो तो उसे अनेक प्रकार की सत्य परीक्षा मे गुजरना पडता है।[8] यदि बिना किसी नुकसान के वह इस परीक्षा मे उत्तीर्ण होती है तो उसे छोड दिया जाता है, अन्यथा उसे अपराध स्वीकार करने के लिये पेड की शाखा से लटका दिया जाता है। यदि वह अपराध स्वीकार कर लेती है तो उसे या तो मार दिया जाता है या पाल से बाहर निकाल दिया जाता है। कप्तान ब्राह्य का भीलो के बारे मे कथन है—

'The Bhils are the most uncivilized of all the wild tribes, with intellect barely sufficient to understand and totally unequal to comprehend anything beyond the most simple communication and with forms stunned by hardships, the bad climate and the bitter poverty in which they are steeped.'

भीलो का प्रारम्भिक विद्रोह

सन् 1818 मे दक्षिणी राजस्थान के पाचो राज्यो (मेवाड, डूगरपुर, बासवाडा, प्रतापगढ और कुशलगढ) ने ईस्ट इण्डिया कम्पनी के साथ सधि कर ली। सधि से इन राज्यो की विदेश नीति तो अग्रेजो के हाथ मे आ ही गई किन्तु कुछ मामलो मे अग्रेज इनके आतरिक मामलो मे भी हस्तक्षेप करने लगे थे। इस प्रकार अग्रेज ही इस क्षेत्र के वास्तविक स्वामी बन गये।

1818 मे सर्वप्रथम मेवाड मे भीलो ने विद्रोह किया। मेवाड मे भीलो के विद्रोह के कई कारण थे। प्रथम, 1818 की सधि के द्वारा स्थानीय सेना भग कर दी गई। राज्य की व जागीरदारो की सेना मे भील भी कार्यरत थे जो सेना के समाप्त होने से बेकार हो गये। दूसरा, सधि के तुरन्त बाद मेवाड का आतरिक प्रशासन ब्रिटिश रेजीडेट कर्नल जेम्स टॉड ने सभाल लिया। उसने भीलो को नियन्त्रण मे रखने का प्रयास किया। तीसरा, कर्नल टॉड ने भीलो का बोलाई व रखवाली कर वसूलने का अधिकार समाप्त कर दिया[10] और यही विद्रोह का तत्कालिक कारण बना।

1823 का अभियान

भीलो को दबाने के लिये कर्नल लूबे के नेतृत्व मे एक सेना भेजी गई जिसने भीलो को समर्पण के लिये विवश कर दिया। अग्रेजो की मध्यस्थता से भीलो व महाराणा के मध्य एक सधि हो गई, जिसके अनुसार—

(1) प्रत्येक पाल के गमेती (पाल का मुखिया) ने महाराणा की सर्वोच्चता स्वीकार की।

(2) महाराणा पहाडी क्षेत्र मे थाने स्थापित कर सकेगे।

(3) भील अपने समस्त हथियार महाराणा को सौप देगे और भविष्य मे भी किसी प्रकार के हथियार अपने पास नही रखेंगे।

(4) भील अपनी कृषि उपज का एक चौथाई लगान के रूप मे देंगे।

(5) वे भील रखवाली कर वसूल नही करेंगे।

(6) भील राहजनी, चोरी, डकैती, आदि अपराध नही करेंगे और यदि कोई करेंगे तो गमेती को उन्हे राज्य को सौंपना होगा।

(7) सभी मामलो मे भील महाराणा और पोलिटिकल एजेण्ट का निर्णय स्वीकार करेंगे।

(8) वे कन्या वध तथा गौ वध नही करेंगे।

(9) यदि कोई भील उपरोक्त शर्तों का उल्लघन करेगा तो वह अपराधी माना जायेगा और राज्य के कानून के अनुसार उसके विरुद्ध कार्यवाही की जा सकेगी।

उपरोक्त शर्तें सभी पाल के गमेतियो द्वारा स्वीकार कर ली गई, किन्तु जैसे ही अग्रेजी सेना नायक कप्तान कौब ने ऋषभदेव की ओर प्रस्थान किया, आसपास के भील पुन पशुओ की चोरी और डकैती के कार्यो मे लिप्त हो गए। वस्तुत भीलो ने उनके क्षेत्रो मे थाने की स्थापना, अस्त्र समपण, भूराजस्व कर, कन्या वध निषेध आदि नियन्त्रणो को स्वीकार नही किया। ये सभी प्रतिबन्ध उनकी परम्परा, सामाजिक रीति-रिवाजो और सभी अर्थ व्यवस्था पर आघात करने वाले थे। कप्तान कौब ने भी उनकी परम्परा व रीति-रिवाजो पर कोई ध्यान नही दिया और न ही उनकी अर्थ-व्यवस्था को सुधारने का कोई सुझाव दिया था। अत एक सैनिक टुकडी पुन उस क्षेत्र मे शाति स्थापित करने के लिए भेजी गई। महाराणा के एक प्रतिनिधि की नियुक्ति भीलो से कर एकत्रित करने और उससे निपटने के लिए कर दी।[13]

डूगरपुर और बासवाडा के भीलो के विरुद्ध कारवाही

1823 के अभियान के पश्चात् भी स्थिति मे सुधार नही हुआ। ज्योही सेना हटाई जाती, भील और गरासिये पुन उस क्षेत्र मे उपद्रव प्रारम्भ कर देते। भीलो के नेता दौलतसिंह और गोविन्दा ने भीलो और कुछ भाडे के सिपाहियो की एक फौज एकत्रित कर ली। उन्हे डूगरपुर और ईडर की स्थानीय जनता का समर्थन भी प्राप्त था। इधर महाराणा अपनी आन्तरिक उलझनो मे फसे रहने के कारण इस क्षेत्र मे शाति स्थापित करने के लिए कोई ठोस कार्यवाही नही कर सके।[14]

स्थिति बिगडने पर महारावल की प्रार्थना पर मैक्डोनल्ड के नेतृत्व मे राज्य के खर्चे पर भीलो के विरुद्ध सेना भेजी गई। 1825 मे डूगरपुर और बासवाडा के गावो के अनेक गमेतियो ने हथियारो का समर्पण कर दिया। उन्होने चोरी व डकैती से जो क्षति पहुची थी, उसकी भरपाई करने का भी वायदा किया। उन्होने समस्त राजकीय कर चुकाने व ब्रिटिश जनता को उस क्षेत्र मे सुरक्षित गुजरने, शासको व कुलीनो को आतकित नही करने का भी वायदा किया। कप्तान ने भील प्रमुखो को उस क्षेत्र मे शाति बनाए रखने तथा महाराणा की सर्वोच्चता स्वीकार करने की सलाह दी। भीलो ने उसके परामर्श

को स्वीकार किया और महाराणा का एक एजेन्ट विभिन्न भील प्रमुखों के क्षेत्र मे रखा गया।[16]

दौलतसिंह द्वारा प्रतिरोध

सन् 1826 मे दौलतसिंह व गोविन्दा ने जवास और जूडा (Joora) के थानो को नष्ट कर दिया। जूडा मे उन्होने 100 सैनिक मार डाले। अगले ही महीने उन्होने विभिन्न स्थानो पर लगभग 250 व्यक्तियो को मार दिया। उन्होने खेरवाडा को घेर लिया। महाराणा ने विद्रोह दवाने में असमथता जाहिर की और कप्तान कौव से विद्रोह दवाने की प्रार्थना की। कौव व ब्रायट ने सेना के साथ खेरवाडा प्रस्थान किया।[17] साथ ही उसने भीलो के असन्तोष के कारणो की जाच कराने का प्रस्ताव किया।[18] उसने भीलो को शात रखने के भी अनेक उपाय सुझाए।[19] उसके विचार मे उपद्रव का कारण स्थानीय अधिकारियो का दुर्व्यवहार, थाने मे सिपाहियो की अनियमित नियुक्तिया आदि था। ब्रिटिश अधिकारी भी भील आन्दोलन को पूणतया दवाने मे असमथ रहे, क्योकि एक तो दौलतसिंह व गोविन्दा को स्थानीय जनता का समर्थन प्राप्त था, दूसरे ब्रिटिश सेना को उस क्षेत्र की पूर्ण जानकारी नही थी तथा महाराणा की जो सेना ब्रिटिश अधिकारियो के साथ थी वह भी जानकारी नही रखती थी।

बहुमुखी अव्यवस्था

उपरोक्त अभियान की असफलता के पश्चात् अग्रेज अधिकारियो ने एक पैदल सेना व कुछ घुडसवार सैनिक कप्तान ब्लैक के नेतृत्व मे मेवाड की सहायता के लिए भेजी। ब्लैक को उस क्षेत्र मे पूण सैनिक व नागरिक अधिकार दिए गए। उसे विद्रोह और गडवडी के मूल कारणो को भी ज्ञात करने के लिए कहा गया और उस क्षेत्र मे स्थायी शाति स्थापित करने के लिए भी सुझाव मागे गए।[20] फरवरी 1827 मे कप्तान ब्लैक खेरवाडा पहुचा और वहा से जवास। यहा दौलतसिंह ने हरनाथ सिंह मोघिया की सहायता से उसे काफी परेशान किया। इसके पश्चात् मेवाड, डूगरपुर और बासवाडा के क्षेत्र मे चारो ओर अव्यवस्था फैल गई। अब एक सशक्त सेना कर्नल बर्ग के नेतृत्व मे नीमच से खेरवाडा भेजी गई। कप्तान ब्लैक भी बर्ग की सहायता हेतु गया, किन्तु मार्ग मे ही उसकी मृत्यु हो गई। मृत्यु के पूर्व ब्लैक ने भीलो की बोलाई एकत्रित करने का अधिकार दे दिया था, जिससे इस क्षेत्र में कुछ शाति स्थापित हुई।

स्पीयस की व्यवस्था

दौलतसिंह ब्रिटिश सेना का मुकाबला न कर सका और उसे वार्ता के लिए वाध्य होना पडा। लम्वी वार्ता के पश्चात् दौलतसिंह ने समर्पण कर

दिया, उसे बबूलवाडा नामक गाव अपने गुजारे के लिए दिया गया। स्पीयस ने जवास का गाव उसके मुखिया को वापस देने की भी सिफारिश की, साथ ही उसके द्वारा दिया जाने वाला कर भी निर्धारित किया गया।"[22] तत्पश्चात स्पीयर्स ने पुनुर्रा और जूडा के प्रमुखो को भी समझौते पर हस्ताक्षर के लिए मना लिया। इस समझौते के द्वारा उन्होंने उस क्षेत्र मे शाति बनाए रखने, अवाछित कर एकत्रित न करने, राहजनी और डकैती की क्षतिपूर्ति करने तथा अग्रेजो की आज्ञा मानना स्वीकार किया। उस क्षेत्र के अन्य अनेक मुखियाओ ने भी इस प्रकार के इकरारनामे पर हस्ताक्षर किए। तत्पश्चात् इस क्षेत्र मे अनेक थाने स्थापित किए गए और 1828 मे अत तक कनल बग की सेना इस क्षेत्र से हटा ली गई।[23]

"नैव द्वारा 'बोलाई' एकत्रित करने का अधिकार,"[24] मेवाड के महाराणा जवानसिंह के शासन मे भीलो के प्रति मानवीय व्यवहार[25] ने कुछ अश तक भीलो को प्रभावित किया। ब्रिटिश सेना के हटने के पश्चात् भी महाराणा ने उन्हे 'बोलाई' एकत्रित करने का अधिकार दिया, जिससे उन्हे दुर्भिक्ष मे बिना चोरी, डकैती किए जीवन निर्वाह मे सहायता मिली।[26] कुछ छुटपुट घटनाओ के अलावा दक्षिणी राजस्थान के पहाडी क्षेत्रो मे शाति बनी रही।

मेवाड भील कोर की स्थापना

दक्षिणी राजस्थान मे निरन्तर भील विद्रोह तथा यहा के भीलो द्वारा निरन्तर महीकाठा क्षेत्र मे उत्पात मचाने के कारण आउट्रम ने एक अग्रेज अधिकारी की अधीनता मे मेवाड भील कोर की स्थापना का परामर्श दिया।[27] उसका सुझाव था कि बिना नियन्त्रण के कोई स्थानीय समाधान नही निकलेगा। उसका यह भी मानना था कि ये व्यवस्था मेवाड राज्य के लिए भी लाभदायक रहेगी। उसने ए जी जी (राजपुताना मे गवर्नर जनरल के एजेन्ट) से प्राथना की कि वह मेवाड महाराणा को मेवाड भील कोर का व्यय वहन करने के लिए मना ले।[28] उसके सुझाव की कनल आल्वर्स ए जी जी ने भी विशेष सिफारिश की। उसने महाराणा से इसका खर्च वहन करने की भी सलाह दी। सन् 1838 मे मेवाड महाराणा ने मेवाड भील कोर की स्थापना की प्रयोग की दृष्टि से 10 वर्ष के लिए मजूरी प्रदान की। अत मे 1841 मे गवनर जनरल की कायकारिणी ने मेवाड भील कोर की स्थापना की अनुमति दे दी और विलियम हटर को उसका कमाण्डेंट बनाया गया।"[29] गवनर जनरल की कायकारिणी ने कप्तान हटर को खेरवाडा से अच्छे चरित्र वाले भीलो की भर्ती के आदेश दिए। मेवाड

भील कोर मे खेरवाडा से 7 गमेतियो और जवास से 12 गमेतियो को लिया गया। इन गमेतियो को अपने कर्तव्य पालन के लिए रेजीमेन्ट मे नही आना था, बल्कि उनका वेतन उन्हे घर बैठे ही दिया जाना था। उनसे उनके गावो मे शाति बनाए रखने की अपेक्षा की जाती थी। इस व्यवस्था को 1861 मे बन्द कर दिया गया।[30]

ब्रिटिश अधिकारियो की राय मे भील कोर की स्थापना दक्षिणी राजस्थान मे शाति और व्यवस्था बनाए रखने मे बहुत लाभदायक थी। उनके अनुसार 1841 के अन्त तक खेरवाडा के आसपास के क्षेत्र मे काफी अनुशासन आ गया था।[31] 1843 से सदरलैंड[32] ने अपनी रिपोर्ट मे कहा कि हटर की व्यवस्था ने उस क्षेत्र के भीलो के व्यवहार मे काफी परिवर्तन ला दिया। उसके विचार मे यह व्यवस्था उदयपुर के शासक के लिए भी लाभदायक थी,[33] किन्तु इससे भीलो के चरित्र मे आए परिवर्तन अधिक समय तक नही बने रहे।

नवीन सुधार और भील प्रतिरोध

1881 से 1883 के बीच मेवाड के भीलो ने पुन ब्रिटिश व महाराणा की प्रभुसत्ता को चुनौती दी। उनके विद्रोह के कारण निम्न थे—

1857 के स्वतन्त्रता सग्राम के पश्चात् ब्रिटिश सरकार ने ईस्ट इण्डिया कम्पनी से सत्ता सभाल ली। उन्होने भारतीय राज्यो मे ब्रिटिश पद्धति के अनुसार अनेक सुधार लागू किए। नवीन सुधारो ने भीलो के अनेक अधिकारो पर रोक लगा दी। वे बिना कर दिए कृषि उपज तथा जगल से लाई वस्तुओ को नही ले जा सकते थे। नागरिक अधिकारी भीलो से क्रूरतापूर्ण व अमानवीय व्यवहार करने लगे थे और जबरन उनसे धन वसूल करते थे। उनके भ्रष्ट होने की शिकायत भी निरन्तर मिल रही थी।[34] मेजर मेक्सन[35] ने 1868 मे महाराणा मेवाड को लिखा कि उस क्षेत्र मे शाति और व्यवस्था स्थापित करने के लिए प्रशासन मे सुधार की आवश्यकता है।[36] हकीम रघुनाथ सिंह व उसके मातहत मोतीसिह भीलो से क्रूरतापूर्ण व अन्यायपूर्ण व्यवहार कर रहे हैं। ये अधिकारी भीलो से दुगना कर व भारी जुर्माना जबरदस्ती वसूल रहे हैं।[37] अभी तक भील क्षेत्र मे बनिए व महाजन नही थे, किन्तु नई व्यवस्था द्वारा वे लोग भी आ गए और अशिक्षित व भोले-भाले भीलो का शोषण करने लगे।[38]

नवीन प्रशासनिक सुधारो ने भीलो पर नए नए कर लगा दिए। भील क्षेत्र मे चुगी चौकीया स्थापित कर दी गई जिससे उपभोक्ता वस्तुओ के मूल्य

बढ गए। तम्बाकू, नमक व अफीम पर नए कर लगा दिए गए। भीलो द्वारा शराब बनाने पर भी प्रतिबन्ध लगा दिया गया।[39]

अग्रेजो द्वारा भीलो के सामाजिक कायकलापो मे हस्तक्षेप ने उन्हे उत्तेजित कर दिया। सन् 1840 से 1880 तक भील क्षेत्र मे अनेक चुडैल वध की घटनाए घटित हुई थी। जिस कारण अनेक भीलो को राज्य ने दडित किया तथा चुडैल वध पर प्रतिबन्ध लगा दिया। चुडैल वध पर प्रतिबन्ध को उन्होने अपने धार्मिक विश्वास पर अतिक्रमण माना। इन सुधारो को लागू करने का अर्थ युग-युगान्तर से चली आ रही भील परम्पराओ का उल्लघन करना था। मेवाड मे 1881 की जनगणना ने भी भीलो मे उत्तेजना फैला दी। जनगणना के कारण भील समाज मे अनेक प्रकार की अफवाहे फैल गई। कुछ लोगो का विचार था कि जनगणना के माध्यम से अग्रेजी सरकार अफगान युद्ध के लिए धन एकत्रित करना चाहती थी, जबकि कुछ भीलो का विचार था कि स्वस्थ व्यक्तियो को लडने के लिए काबुल भेजा जाएगा।[40] कुछ लोगो का अनुमान था कि जनगणना के द्वार मोटी स्त्रिया मोटे युवको तथा पतली स्त्रिया पतले युवको को दे दी जायेगी। यह भी सोचा गया कि जनगणना भील जाति को समाप्त करने का एक प्रयास है।[41]

भीलो पर पुलिस अत्याचार ने भी भील विद्रोह को उभाड दिया। 1881 मे माच के प्रथम सप्ताह मे पदोना गाव (उदयपुर-खेरवाडा मार्ग पर स्थित) की एक घटना भील विद्रोह का तत्कालीन कारण बन गई।

श्यामलदास के अनुसार वडे पाल के थानेदार ने इस गाव के गमेंती (भीलो का मुखिया) को किसी भूमि विवाद सम्बन्धी मामले मे गवाही देने के लिए बुलाया। थानेदार ने गमेंती को बुलाने के लिए सवार भेजा, किन्तु गमेंती ने जाने से इन्कार कर दिया। जब सवार ने उसे जबरदस्ती ले जाना चाहा तो भीलो ने उसे मार दिया। इस पर थानेदार अपने सिपाहियो के साथ गाव पहुचा और गमेंती को गिरफ्तार कर थाने ले गया। थाने मे उसे अमानवीय यातना दी गई, जिससे गमेंती की मृत्यु हो गई।[42] एक अन्य कथन के अनुसार गमेंती को शराब बनाने से रोकने के लिए बुलाया गया था, क्योकि इससे शराब के ठेकेदार को नुकसान होता था, जो कि वडे पाल के थानेदार का मित्र था।[43]

इस घटना से भील उत्तेजित हो उठे। लगभग तीन हजार भीलो ने वडे पाल के थाने को घेर लिया और थानेदार सहित सोलह व्यक्तियो को मार डाला। उन्होने वडे पाल के थाने और समस्त वनियो की दुकानो को जला दिया।[44]

उन्होने उदयपुर-खेरवाडा मार्ग को भी काट दिया। कोटडा व टिड्डी के भील भी इस विद्रोह में सम्मिलित हो गए। कुछ ही समय मे यह विद्रोह मेवाड भर में फैल गया।

सूचना मिलने पर मेवाड राज्य की ओर अंग्रेजी सेना को विद्रोह दबाने के लिए भेजा गया, किन्तु उन्हे सफलता नही मिली, क्योकि भील वनो मे भाग गए, जिससे सेना उनका कुछ भी बिगाड नही सकी।

समझौते के लिए वार्ता

अब महाराणा ने भीलो से वार्ता करने का निर्णय लिया। उन्होने भीलो के प्रतिनिधियो को सुरक्षा का आश्वासन दिया तथा उन्हे वार्ता के लिए उदयपुर बुलाया, किन्तु भीलो ने ऋषभदेव को वार्ता का स्थल चुना। महाराणा ने श्यामलदास को अपना प्रतिनिधि नियुक्त किया और उसे भीलो के साथ उदार तथा नरम शर्तें लागू करने को कहा। समझौते की वार्ता ऋषभदेव मन्दिर के पुजारी खेमराज भण्डारी की मध्यस्थता में 18 अप्रेल 1882 को प्रारम्भ हुई। करीब 6-7 हजार भील ऋषभदेव मे एकत्रित हो गए। ब्रिटिश अधिकारी श्यामलदास का प्रभाव भीलो पर नही बढने देना चाहते थे, इसलिए उनके प्रतिनिधि कर्नल ब्लेयर एव विंगेट भी श्यामलदास को परामर्श देने के लिए वहा पहुच गए। मेवाड पोलिटिकल एजेण्ट ने महाराणा से आवश्यकता पडने पर श्यामलदास की जगह कर्नल ब्लेयर को अपना प्रतिनिधित्व करने को कहा।[45]

वार्ता सौहार्दपूर्ण वातावरण मे प्रारम्भ हुई किन्तु ज्योही श्यामलदास ने हाथ उठा कर भीलो की भीड को पीछे हटने को कहा, भीलो ने इसका गलत अर्थ निकाला। एक भील ने अपनी बदूक दाग दी और भीलो ने इसे युद्ध प्रारम्भ होने का सकेत समझ लिया।[46] किन्तु कर्नल ब्लेयर के वर्णन के अनुसार सब कुछ ठीक ठाक चल रहा था कि श्यामलदास ने अचानक भीलो से पूछा—"तुम लोग समझौता क्यो नही कर लेते ?" और इसके तुरन्त बाद राज्य के सिपाही अपनी बदूके भरने लगे। यह देखकर भील भाग छूटे और भागते हुए भीलो पर राज्य के सिपाहियो द्वारा गोलाबारी की गई।[47] श्यामलदास भीलो को पुन वार्ता के लिये मुश्किल से ही तैयार कर पाया। इस बार वार्ता के लिये अकेला ही भीलो के पास गया। अतत मेवाड राज्य व भीलो मे एक समझौता हो गया। समझौते मे 21 धाराए थी और उसकी मुख्य शर्ते इस प्रकार थी —[48]

1 भीलो के गावो मे जनगणना का कार्य नही किया जायेगा।

2 भील पुरुषो व स्त्रियो का वजन नही लिया जायेगा।

3 वडे पाल व वधुना हत्याकाड के लिये उन्हे क्षमादान दिया जायेगा।

4 भील क्षेत्र मे थानो की वढोतरी नही की जायेगी।

5 भीलो की भूमि की माप नही किया जायेगा।

6 बिना मूल्य दिए उनसे घास और लकडी नही ली जायेगी।

7 अफीम, नमक व तम्बाकू का ठेका नही दिया जायेगा।

8 उन तीर्थयात्रियो से जो ऋषभदेव व श्रीनाथजी के दर्शन के लिये जा रहे हैं, पुरानी प्रथा के अनुसार भीलो को बोलाई कर लेने का अधिकार होगा।

9 राज्य के पहाडी क्षेत्रो मे घास व लकडी ठेके पर नही दी जायेगी।

10 उन भीलो को जो पिछले तीन वर्षों से जेलो मे वद है, जुर्माना देने पर छोड दिया जायेगा।

11 भीलो के गावो से जोगियो और धोबियों से फूटा नही लिया जायेगा किन्तु वे राज्य के कार्य पुरानी प्रथा के अनुसार करते रहेगे।

12 भीलो से आम व महुआ की पत्तियाँ एकत्रित करने पर किसी भी प्रकार का कर नही लिया जायेगा।

13 उन सडको की चौकियो पर सवार नही रखे जायेगे जिसकी सुरक्षा की जिम्मेदारी भीलो पर है।

इस प्रकार भीलो के प्रारम्भिक विद्रोह नवीन पद्धति की प्रतिक्रिया स्वरूप थे। ब्रिटिश सरकार ने भविष्य मे भील विद्रोहो को रोकने के लिये अनेक उपाय किए। एक तरफ उन्होने भीलो को कुछ रियायते प्रदान की तथा दूसरी तरफ उन पर प्रभावशाली सैनिक व नागरिक नियन्त्रण स्थापित किया। इन उपायो के द्वारा भील क्षेत्र मे काफी समय तक शाति बनी रही।

गोविन्द गुरु द्वारा भीलो मे समाज सुधार का प्रयास व भील आदोलन

भीलो मे समाज सुधार का कार्य श्री गोविन्द गुरु ने प्रारम्भ किया था। उन्होने भीलो के नैतिक और भौतिक जीवन को सामाजिक और धार्मिक शिक्षाओ के आधार पर सुधारने का प्रयास किया। गोविन्द गुरु की शिक्षाओ ने भीलो मे नवीन जागृति उत्पन्न की और उनका धम व समाज सुधार आदोलन राजनीतिक व आर्थिक विद्रोह मे परिणित हो गया।

गोविन्द गुरु का जन्म 1858 मे डूगरपुर राज्य के बेदसा ग्राम मे एक बनजारे के घर मे हुआ था उन्होंने गाव के पुजारी की सहायता से अक्षर ज्ञान प्राप्त किया। वह स्वामी दयानन्द सरस्वती की प्रेरणा से युवावस्था मे ही जनजातियो की सेवा मे जुट गए। उन्होने धूनी और निशान वासिया ग्राम मे स्थापित किया और आसपास के भीलो को आध्यात्मिक शिक्षा देनी प्रारम्भ की[49] उनकी मुख्य शिक्षा उनके स्वय के शब्दो मे इस प्रकार थी[50]—

'मैंने जब भीलो के मध्य रहना प्रारम्भ किया तब उन्हे सृष्टिकर्ता का कोई ज्ञान नही था। जो भी भील मेरे पास आए, मैंने उन्हे धर्म और सत्य के मार्ग पर चलने तथा ईश्वर की आराधना करने को कहा। 'मैंने उनसे कहा कि वे नफरत की भावना न रखे किन्तु सभी को एक ही परमात्मा की सतान समझें और दूसरो के साथ शाति से रहने का प्रयास करें। वे भूत, प्रेत चुडैल आदि पर विश्वास न करे बल्कि उनको भगाने के लिये धूनी और निशान की पूजा करें' उन्होने भीलो से मास व मदिरा सेवन न करने का भी आह्वान किया।[51]

अपनी शिक्षा व कल्याणकारी कार्यों से वे भीलो मे लोकप्रिय हो गए। धीरे धीरे उनका प्रभाव भीलो मे बढता गया। भीलो को एकत्रित करने के लिये 1905 मे उन्होंने सम्प सभा की स्थापना की[52] इस सभा के माध्यम से उन्होने मेवाड, डूगरपुर, ईडर, गुजरात, विजयनगर और मालवा के भीलो को सगठित किया। उन्होने एक ओर तो उनमे व्याप्त सामाजिक बुराईयो और कुरीतियो को दूर करने का प्रयत्न किया तो दूसरी ओर उनको अपने मूलभूत अधिकारो का अहसास कराया।

भीलो मे बढती जागृति से आसपास की रियासतो के शासक सशक्ति हो उठे। राज्य अधिकारियो ने अपने क्षेत्र से गोविन्द गुरु व उनके पथ को उखाडने का प्रयास किया। भीलो से बहुत बुरा व्यवहार किया जाने लगा व उन्हे पथ छोडने को विवश किया जाने लगा। कुछ मामलो मे उन्हें जबरन मद्यपान के लिये विवश किया गया।[53] जागीरदार और राज्य ने गोविन्द गुरु को डूगरपुर छोडने के लिये विवश किया गया। राज्याधिकारियो के कार्यो ने भीलो के मन मे घृणा उत्पन्न कर दी तथा उन्हे राज्याधिकारियो के विरुद्ध राजनैतिक आदोलन छेडने को विवश कर दिया। इस समय भीलो के विद्रोह के कारण जानना अनुचित न होगा। ये कारण थे—

प्राचीन काल मे पुराने समय मे भील जगल से एकत्रित वस्तुओ पर निर्वाह करते थे, किन्तु अब उन्हे कृषि कर्म के लिये विवश कर दिया गया।

प्रकार वे सीधे अंग्रेजो, देशी राज्यो और जागीरदारो के नियन्त्रण मे आ गये, क्योंकि वे अब तक स्वच्छन्द थे। उन्होंने नियन्त्रण मे रहना पसन्द नही किया।

राज्य और जागीरदार उनसे भारी कर लेते थे। बटाई प्रथा के अन्तर्गत वे उनसे भारी लगान वसूलते थे। यदि वे न दे पाते थे तो राज्याधिकारी उनसे क्रूर व निमम व्यवहार करते थे। कृषि भूमि पर उनका कोई अधिकार नही था। वे सिर्फ खेती करने वाले दास थे,[54] वे अब जगली वस्तुए बिना कर दिए नही ले जा सकते थे।[55] भील क्षेत्र मे बैठ बेगार प्रथा भी सामान्य थी। भील राज्य और जागीरदारो के लिये बेगार करने को विवश थे। वे बिना वेतन के जागीरदार की जमीन मे खेती करने, उसके मकान बनाने आदि काय करने को विवश थे। राज्याधिकारी उनसे माल ढुलवाने, रखवाली आदि की बेगार कराया करते थे। ये जागीरदार और राज्याधिकारी के घरो मे भी काय करते थे। राजपूताना के ए जी जी ने एक पत्र मे लिखा, "वतमान परिस्थितियो मे भीलो पर करो का बोझ बहुत ज्यादा है, उनमे बेगार का आतक इतना अधिक है कि गाव के गाव खाली हो गए है और भूमि पडत पडी है।"[56] भील लम्बे समय से बेगार कर रहे थे, किन्तु गोविन्द गुरु की शिक्षा ने उनमे जागृति उत्पन्न कर दी। अब भील यह महसूस करने लगे कि उनके निम्न सामाजिक स्तर के कारण उनका शोषण किया जा रहा है। गोविन्द गुरु के सामाजिक, धार्मिक सुधार आन्दोलन ने उनमे सामाजिक अन्याय के विरुद्ध लडने की जागृति उत्पन्न की।

राज्य की दोषपूण आबकारी नीति ने भी भीलो को उद्वेलित कर दिया। वे छोटी छोटी रियासते (सूथ, ईडर, बासवाडा, डूगरपुर, कुशलगढ) जिसमे भील जनसख्या अधिक थी, के राजस्व का मुख्य स्रोत शराब की बिक्री थी। राज्य मे अवैध शराब बनाने पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया। भीलो को देशी शराब बनाने का अधिकार लम्बे समय से प्राप्त था। वे महुआ के फूलो से शराब बनाते थे, जिसे अब राज्य ने प्रतिबधित कर दिया। भीलो मे इसमे बहुत रोष पैदा हुआ, किन्तु सुधार आन्दोलन के प्रभाव से उन्होने शराब पीना बन्द कर दिया। इससे राज्य और ठेकेदारो को भारी नुकसान होने लगा। उदाहरण स्वरूप बासवाडा मे अक्टूबर 1913 मे शराब की बिक्री 18470 गैलन से 5154 गैलन रह गई। आसपास के राज्यो की स्थिति भी इसी प्रकार की हो गई।[57] बासवाडा और कुशलगढ का कुल राजस्व क्रमश दो लाख पचास हजार रुपये तथा 86,000 रु था, जिसमे से 56,000 बासवाडा को शराब से 31,000 कुशलगढ को शराब से प्राप्त होता था,[58] राज्य के ठेकेदारो ने उन्हे जबरदस्ती

शराव पिलाने का प्रयास किया। अत शराव का प्रश्न भीलो के लिये वडा मुद्दा वन गया।

1913 के भील आन्दोलन का तात्कालिक कारण गुरु गोविन्द गुर के नेतृत्व मे धार्मिक आन्दोलन था। उनके प्रयासो से राजपूताना के दक्षिणी भाग के पहाडी इलाको के भील पूरी तरह से सगठित हो गए थे। उनमे जागरण की नई लहर आ गई थी। वे राज्य के दमन, शोषण और अत्याचार का मुकावला करने को हर प्रकार से तैयार हो रहे थे। सिरोही, वासवाडा, डूगरपुर, मेवाड के राजा इससे चिंतित हो उठे। उन्होने भीलो को कुचलने और उनकी शक्ति को छिन्न-भिन्न करने के हर सभव प्रयास किये, किन्तु वे सफल नही हो सके।[59] अप्रेल 1913 मे डूगरपुर राज्य की पुलिस ने उन्हे गिरफ्तार कर लिया और उनके परिवार को भी पुलिस निगरानी मे रखा गया। उन्हे तीन दिन वाद छोड दिया गया, लेकिन डूगरपुर राज्य से वाहर चले जाने को कहा गया। वह गुजरात के ईडर राज्य मे चले आए,[60] किन्तु वहा के शासक ने भी उन्हे वहा से भगाने का प्रयास किया।

गोविन्द गुरु और उनके शिष्यो को जिस प्रकार राज्य द्वारा आतकित किया गया, उससे उन्हे भील राज्य वनाने तथा सामतवाद के पजो से मुक्त होने को विवश कर दिया। ईडर से वह अपने साथियो सहित मानगढ की पहाडी (वासवाडा और सूथ राज्य की सीमा पर स्थित) पर चल दिये।[61] पहाडी घने वन से घिरी हुई थी और इस प्रकार प्राकृतिक रूप से सुरक्षित थी। गोविन्द गुरु ने अक्टूबर 1913 को भीलो को मानगढ मे एकत्रित होने के लिये चारो ओर सन्देश भेज दिए।[62] भील अपने साथ रसद व हथियार काफी मात्रा मे ले आये। यह भी अफवाह फैली कि भील दिवाली से चार दिन पूर्व सूथ राज्य पर आक्रमण करेंगे। वस्तुत गोविन्द गुरु के कट्टर अनुयायियो से केवल मानगढ पहुचने को कहा गया था, ये समर्थक चलते वक्त भील पालों को अधिकारियो के विरुद्ध सैनिक कार्यवाही के लिये तैयार रहने को कह गए।

30 अक्टूवर 1913 को पुलिस थानेदार ने दो सिपाहियो को यह देखने के लिये कि वहा क्या हो रहा है, मानगढ भेजा। इन सिपाहियो को भीलो ने पकड लिया। इनमे से एक सिपाही को मार डाला गया व दूसरे को बुरी तरह पीटा गया और वदी वना लिया गया।[63] 1 नवम्बर को कुछ भीलों ने प्रतापगढ के सूथ किले पर भी आक्रमण किया, किन्तु असफल होकर लौट आए।[64] भीलों की इस कार्यवाही ने सूथ, वासवाडा, डूगरपुर और ईडर राज्य को चौकन्ना

कर दिया। उन्होने ए जी जी से प्रार्थना की कि गोविन्द गुरु को गिरफ्तार किया जाय और भीलो के इस हिंसक सगठन को समाप्त किया जाय।

6 से 10 नवम्बर 1913 के बीच दो कम्पनी मेवाड भील कोर, एक कम्पनी 104 वैलेजली राइफल्स, एक कम्पनी राजपूत रेजीमेंट और एक कम्पनी जाट रेजीमेंट मानगढ पहाडी पर भीलो को तितर बितर करने के लिये पहुंच गई।[65] 8 नवम्बर को फौजी पलटनो ने मानगढ की पहाडियो पर अन्धाधुन्ध गोलियो की बौछार शुरु कर दी। सैनिको ने मानगढ की पहाडी को चारो ओर से घेर लिया और चारो ओर से गोलिया बरसाई जाने लगी। करीब 1500 भील मारे गए[66] और उनके नेता गोविन्द गुरु को गिरफ्तार कर लिया गया। उन्हे अहमदाबाद की जेल मे भेज दिया गया और इस प्रकार भीलो के आन्दोलन को निर्दयतापूर्वक कुचल दिया गया।[67]

गोविन्द गुरु पर मुकदमा चलाया गया और उन्हे फासी की सजा सुनाई गई, जिसे बाद मे 20 वर्ष की सजा मे परिवर्तित कर दिया गया। गोविन्द गुरु की लोकप्रियता को देखते हुए इसे 10 वर्ष के कठोर कारावास मे परिवर्तित कर दिया गया।[68] सन् 1930 मे उन्हे इस शर्त पर रिहा कर दिया गया कि वे सूथ, डूगरपुर, बासवाडा, कुशलगढ एव ईडर राज्य की सीमाओ मे प्रवेश नही करेंगे।

भीलो का गोविन्द गुरु के नेतृत्व मे आन्दोलन असफल रहा, किन्तु इसके महत्व को कम करके नही आका जा सकता। इसके परिणाम दूरगामी सिद्ध हुए। इस आन्दोलन ने भीलो मे चेतना जागृत कर दी और उन्हे अपने अधिकारो के प्रति सजग कर दिया। इस आन्दोलन ने न केवल भीलों मे वरन् दक्षिण राजस्थान के दूसरे समाज के लोगो मे भी चेतना उत्पन्न कर दी। इससे कृषक आन्दोलन व राजस्थान मे स्वतनता आन्दोलन को काफी प्रोत्साहन मिला।

आन्दोलन के तुरन्त पश्चात् अग्रेज अधिकारियो ने राजस्थान, मध्य प्रदेश व गुजरात के भीलो की दशा के बारे मे काफी पूछताछ की। उन्होने कुछ हद तक उनके जगल के अधिकारो को स्वीकार कर लिया। उनके लिये जाने वाले भू-राजस्व, लाग-बाग तथा बेगार मे भी कमी की गई। इस प्रकार यह आदोलन भीलो की मुक्ति का प्रतीक बन गया।

परवर्ती भील आन्दोलन

1917 मे मेवाड के विजोलिया आन्दोलन से प्रेरित होकर भीलो ने पुन आन्दोलन प्रारम्भ कर दिया। इस समय गरासियो ने भी भीलो का साथ दिया। गरासिया एक वनवासी जाति है, जो उदयपुर, डूगरपुर, सिरोही राज्यो मे वसी है। ये मुख्यत अरावली की पहाडियो मे रहते हैं। सामाजिक दृष्टि से यह जाति भीलो के समान है। इनकी ज्यादा सख्या सिरोही जिला के आबू रोड व पिण्डवाड तहसीलो मे है। प्राचीनकाल मे यह एक शासकीय जाति थी, जिसे विजेताओ ने उनसे राज्य लेकर उन्हे जीविका के लिये ग्रास के लिये कुछ भूमि दे दी। इसी से ये गिरासिने कहलाने लगे। ये पहले मुख्यत मेवाड मे वसे थे। उससे परे सिरोही मे, जव सिरोही का यह भाग मेवाड मे ही था। इनके गौत्र भी राजपूतो की भाति परमार, चौहान, राठौड आदि हैं, जिससे यह अनुमान किया जाता है कि ये राजपूतो की भील स्त्रियो से उत्पन्न है। इनका मुख्य पेशा कृपि है, लेकिन आर्थिक दृप्टि से हीन है। अत जगली उत्पादनो—गोद, शहद, घास आदि को इकट्ठा कर काम चलाते है। ये लकडी का कोयला भी बनाते हैं।

इस जाति ने भी भीलो का साथ दिया और दोनो ने जागीरदार द्वारा दमनकारी साधन अपनाने का विरोध किया। उन्होने जागीरदार द्वारा बेगार अत्यधिक लगान और अवैध लाग वाग लगाने का बी विरोध किया। कृपको ने 1917 मे महाराणा से भारी कर व वेगार के विरुद्ध अपील की। महाराणा ने स्थिति की जाच करके और यह जान कर कि कर वास्तव में ही बहुत अधिक है, 16 नवम्वर 1918 को निम्न निर्णय लिये —[70]

1 कुल उत्पादन का 1/5 भाग कूता के रूप मे लिया जायेगा।
2 गृहकर हर दूसरे वर्प आसामी को देना होगा। कुल राशि गाव के मुखिया की सलाह से तय की जायेगी। यह जिन्स या नक्द दोनो मे दी जा सकेगी।
3 पेटिया कर भी नकद (रुपया) कूता के समय ही देना होगा।
4 कूता मुखिया की सलाह से तय किया जाएगा और मूकडी लाग के समय ही वसूल किया जाएगा।
5 वेगार के विरुद्ध शिकायत पेश होने पर जाच की जाएगी।

कुछ कारणो से भील और गरासियो, दोनो ने ही महाराणा के निर्णय को अस्वीकार कर दिया। खेरवाडा के पोलिटिकल अधीक्षक एव मेवाड के अग्रेजी रेजीडेंट के प्रयास भी भीलो को समझाने मे असफल रहे और पहाडी

जागीर के क्षेत्रो मे गडबडी और अव्यवस्था बनी ही रही ।[71] बाद मे ये आन्दोलन मेवाड के समस्त भील क्षेत्र मे फैल गए। मई 1921 मे भील भी मेवाड राज्य के अन्य कृषको के साथ मिल गए और उसे दु ख-दर्द लेकर महाराणा के साथ उपस्थित हुए। उनके दु ख के कारण बेगार, अनेक लागो, भारी कर, करो मे भेदभाव और जागीरदारो का तानाशाह का रवैय्या था। महाराणा से सतोषजनक उत्तर प्राप्त न होने पर खालसा भूमि पर रहने वाले भीलो ने भाडोल, कोलियारी, मगरा और मेवाड के अन्य भील गावो मे सन्देश भेजे कि वे तब तक भू राजस्व, लागें व बेगार न दें, जब तक कि उनके कष्टो का निवारण नही किया जाता। यह भी चेतावनी दी गई कि जो इन आदेशो की अवहेलना करेगा, उसे 12 वष के लिए जाति बाहर कर दिया जाएगा ।[72]

मोतीलाल तेजावत के नेतृत्व मे भील आन्दोलन

8 जुलाई 1921 को मेवाड की खालसा क्षेत्र के भीलो की प्रेरणा से मादडी पट्टा के भीलो ने कर व लाग-बाग देने से इन्कार कर दिया।[3] इसी समय भीलो को मोतीलाल तेजावत का नेतृत्व प्राप्त हुआ,[74] जिसने भीलो को किसी भी प्रकार का जागीरदारो को कर न देने का आह्वान किया। उनका यह आन्दोलन एकी आन्दोलन के नाम से विख्यात है, क्योकि उन्होने सभी भील व अन्य जातियो को सगठित (एकी) करने का प्रयास किया था। यह प्रथम अवसर था कि समस्त भील मोतीलाल तेजावत के नेतृत्व मे राज्य और ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध उठ खडे हुए। भील उसे अपना मसीहा समझने लगे थे, जो उनकी मुक्ति के लिये अवतरित हुआ था।

मोतीलाल तेजावत का जन्म ईस्वी सन् 1887 (विक्रम सवत् 1944 को ज्येष्ठ शुक्ला 1) को कोलियारी नामक गाव, जिला उदयपुर मे ओसवाल परिवार मे हुआ। विवाह पूर्व वह भाडोल ठिकाने मे स्थानीय जागीरदार के यहा कामदार का काय करने लगे।

इस नौकरी के दौरान ही उन्हे मेवाड महाराणा श्री फतहसिंह जी के दौरे मे जहाजपुर, नाहर मगरा, जयसमन्द आदि स्थानो पर जाने का मौका मिला। इस दौरे मे उन्होने देखा कि जहा महाराणा का मुकाम होता था, वहा कई कोस चलकर उनका सामान घोडो, ऊटो, बैलो पर लाद कर लोग ले जाते थे, किन्तु मजदूरी मे उन्हे चार पैसे भी नही चुकाए जाते थे।

इसी प्रकार भील, गरासिए एव अन्य काश्तकार लोगो को कई दिन पहले पकडा जाता उनसे बेगार मे काम लिया जाता था, किन्तु मजदूरी के नाम पर

एक पाई भी नही चुकाई जाती थी। यदि काय मे कुछ कमी रह जाती तो उन्हे बुरी तरह पीटा जाता। इस प्रकार का जुल्म उनसे देखा नही गया, अत झाडोल आकर उन्होने ठिकाने की नोकरी छोड दी और चित्तौड जिले मे सर्वप्रथम मेवाड राज्य के जुल्मो के खिलाफ एकी आन्दोलन का श्री गणेश किया।

मोतीलाल की सलाह से भीलो ने कर देने से इन्कार कर दिया। 13 जुलाई 1921 को जवास के कामदार ने गाव के गमेती से कर उगाने के लिये सिपाही भेजे, किन्तु उन्होने तब तक कर देने से इन्कार कर दिया जब तक कि खालसा भूमि के भीलो के कष्ट महाराणा सुन नही लेते।[74]

डूगरपुर के महारावल ने यह सोच कर कि कही आन्दोलन उनके राज्य मे भी न फैल जाए, जुलाई 1921 को सभी प्रकार की बेगार हटा दी। जुलाई 1921 के प्रथम सप्ताह मे ही मेवाड के महाराणा ने भी भीलो तथा खालसा भूमि के अन्य कृपको के लिये कुछ रियायते घोपित की। अत मेवाड के खालसा गावो मे तो आन्दोलन नही फैला, किन्तु जागीरदारो ने किसी भी प्रकार की रियायत कृपको को नही दी थी, इसलिये यह आन्दोलन कोलियारी, झाडोल मादडी आदि जागीरो मे फैल गया।[75]

19 अगस्त 1921 के झाडोल के ठाकुर ने मोतीलाल को भीलो को भडकाने तथा उन्हे कर व बेगार न करने देने के आरोप मे गिरफ्तार कर लिया। किन्तु शीघ्र ही पट्टा, जवास, पहाडा मादडी आदि 65 गावो से करीब 7 हजार भील एकत्रित हो गए और उन्होने मोतीलाल को छुडवा लिया।[76] इससे प्रोत्साहित होकर मोतीलाल ने भीलो को सगठित किया और उन्हे जागीरदार को अब और अधिक राजस्व व लाग न देने के लिये समझाया।[77] इस प्रकार सितम्बर 1921 तक उनका प्रभाव समस्त भूमट क्षेत्र मे फैल गया।

मोतीलाल तेजावत ने भील प्रतिनिधियो के साथ उदयपुर महकमा खास को उनके मुख्य कष्ट बताए। ये राजकीय कर्मचारियो के भ्रष्टाचार, वर्तमान राजस्व नीति, बेगार, सुअरो के खेत चर जाने आदि के बारे मे थे। महकमा खास ने राजस्व के बारे मे शीघ्र समझौता कराने तथा सुअरो को नष्ट करने के बारे मे आश्वासन दिया।[78] नवम्बर 1921 मे जूडा जागीर के किसानो ने भी राजस्व कर देने से इन्कार कर दिया। भील किसानो ने बिना आज्ञा के सुअरो को मार दिया तथा आरक्षित वन मे अपने पशु चराने लगे।[79] मादडी जागीर के भील किसानो ने अपने कष्टो का विवरण लिखकर मादडी के रावत को 1921 मे दिया, किन्तु अधिकारियो ने उनके कष्टो पर कोई ध्यान नही दिया,

अत आन्दोलन चलता रहा। दिसम्बर 1921 तक भील आन्दोलन मेवाड की सीमाओ से ईडर राज्य तक फैल गया।[80] मेवाड राज्य के भीलो ने जागीरदार को किसी भी प्रकार की बेगार, बरार तथा भू-राजस्व नही दिया। दिसम्बर 1921 मे पुनर्वा के राणा, जूडा तथा ओघना के राव ने मेवाड के रेजीडेंट से मोतीलाल को तुरन्त ही गिरफ्तार करने की प्रार्थना की।[81] मोतीलाल का भील क्षेत्र मे प्रभाव उल्लेखनीय था। भीलो का यह विश्वास था कि मोतीलाल गांधी बाबा का पवित्र दूत है। दिसम्बर 1921 मे मोतीलाल की सलाह से भील मुखियो ने कोटडा के सहायक पोलिटिकल अधीक्षक को निम्न अर्जी दी।[82]

"हम पचो ने सर्व सम्मति से निर्णय लिया है कि रबी फसल पर कर एक रुपये मे चार आने और खरीफ पर 15 सेर मक्का देंगे और किसी भी प्रकार की बेगार नही करेंगे।" जब झाडोल जागीर के अधिकारी लगान एकत्रित कर रहे थे, मोतीलाल 200 भीलो के साथ वहा पहुच गए। उन्होने तीन अधिकारियो को पीटा और जो राजस्व उन्होने एकत्रित किया था, उसे छीन लिया।

मोतीलाल तेजावत के बढते प्रभाव को देख कर मेवाड महाराणा ने कोटडा तथा खेरवाडा भूमट मे 50 से अधिक भीलो के एकत्रित होने पर प्रतिबंध लगा दिया, साथ ही मोतीलाल की गिरफ्तारी पर 500/- का इनाम घोषित कर दिया।[83]

जनवरी 1922 को मोतीलाल तेजावत सिरोही राज्य चले गए। उनकी अनुपस्थिति मे नए बेगार व सरबराह नियम जवास, थाना पहाडा, मादडी आदि जागीर मे लागू किए गए। कुछ लागो मे भी कमी की गई और साथ ही बेगार मे भी ढील दी गई। मेवाड मे खालसा भूमि पर 20 से 25 प्रतिशत रियायत की घोषणा की गई और वहा भी बेगार मे ढील दी गई।[84]

धीरे धीरे सिरोही के भीलो व गरासियों मे भी असन्तोष फैल गया। मोतीलाल तेजावत 1 जनवरी 1922 मे सिरोही जिले मे आए। वे 12 से 20 जनवरी तक वहा ठहरे और उन्होने भीलो और गरासियो की अनेक सभाओ को सबोधित किया। उन्होने भीलो और गरासियो को कोई भी कर या बेगार राज्य को तब तक न देने को कहा जब तक कि उन पर से करो व बेगार का भारी बोझ कम न किया जाय। मोतीलाल ने उनसे देवी भवानी की शपथ लेकर एकी बनाए रखने को कहा। भीलो ने यह भी शपथ ली कि यदि राज्य उनकी मागे स्वीकार नही करता तो वे सघर्ष जारी रखेंगे। 24 जनवरी 1922 को भीलो और गरासियो ने तिल की सारी फसल बिना लगान दिए हटा ली।

उन्होने आबू से अबाजी जाने वाली सडक की रखवाली करना भी बद कर दिया जिसकी पूर्व मे वे यात्रियो की सुरक्षा के लिये करते थे। गरासियो ने मु गथला के थाने को तोड दिया और राजस्व अधिकारी के घर को भी लूट लिया। उन्होने उन मालियो की फसल को भी नुकसान पहुँचाया जिन्होंने राज्य को लगान दिया था। उन्होने उन लोगो को भी डराया व धमकाया जो राज्य की सेना के लिये ईंधन लाते थे तथा वेगार करते थे।[85]

परिस्थितियो को देखते हुए सिरोही राज्य के मुख्यमत्री ने राज्य के अन्दर सार्वजनिक सभाए करना निषिद्ध कर दिया[86] किन्तु भील और गरासियो ने इसकी उपेक्षा की। और दूसरे राज्य (मारवाड) के भील और गरासियो को भी सगठित करने की शपथ ली। उन्होने हासील न देने तथा वेगार न करने का भी निणय लिया।[87]

फरवरी माह के प्रारम्भ मे मोतीलाल पुन सिरोही आये। इस समय तक वे काफी प्रसिद्धि पा चुके थे और मेवाड के गाधी नाम से लोकप्रिय हो गए। वे करीब चार हजार भीलो के साथ सिरोही आये और राज्य के अनेक भील मुखियाओ से मिले उन्होने भीलो व गरासियो से पुन एक रुपये मे चार आना तथा 5 मन अनाज प्रति बुवाई से अधिक राज्य को देने से मना किया।[88]

स्थिति को बिगडते देख सिरोही के मुख्यमत्री ने विजयसिंह पथिक, अध्यक्ष, राजस्थान सेवा सघ, अजमेर की सहायता मागी। 12 फरवरी 1922 को करीब 15 हजार कृषक, गोपेश्वर मे एकत्रित हुए। विजयसिंह पथिक व मुख्यमत्री ने उन्हे समझाने का प्रयास किया। साथ ही उनके कष्टो का निवारण करने का भी आश्वासन दिया किन्तु समस्या सुलझी नही और भील व गरासिये निरन्तर राज्य के आदेशो का उल्लघन करते रहे। 23 माच 1922 को रोहीडा के तहसीलदार ने सूचना भेजी कि भील अपने खेतो से बिना राज्य को हासील दिए सारी फसल ले गए हैं।[89] अगले ही दिन आबूरोड के मजिस्ट्रेट ने सूचना दी कि चदेला, गिरवर और आसपास के गाव के गरासिये सरसो और चने की फसल बिना हासील दिए ले गये हैं[90] ऐसी स्थिति मे सिरोही के मुख्यमत्री ने राज्य की सेना को भीलो के गाव भेजने का निर्णय किया किन्तु इससे पूर्व सिरोही राज्य की सरकार ने सियावा के मुखिया व अन्य गरासियो के गाव के मुखिया से बातचीत करने का प्रयास किया किन्तु उनका प्रयास विफल रहा। 12 अप्रेल 1922 को सियावा पर सिरोही राज्य की सेना व मेवाड भील कोर ने

आक्रमण किया जिसमे तीन गरासिये मारे गए व एक बुरी तरह घायल हुआ। 40 गरासियो के घर व बडी मात्रा मे एकत्रित किए गए चने जला दिए गए।

इस कार्यवाही के पश्चात् सातपुर तहसील मे कुछ शाति स्थापित हो गई किन्तु पिण्डवाडा, भाकर, रोहिडा के परगने मे स्थिति बिल्कुल नही सुधरी। यह प्रतीत होने लगा कि रोहिडा तहसील के वालोरिया, भूला, नया वास आदि गाव भी विद्रोह की मुद्रा अपना चुके हैं। उन्होने रबी और खरीफ फसल मे से राज्य का भाग देने से इन्कार कर दिया। सिरोही के मुख्यमत्री ने तहसीलदार से भीला व गरासिया को समझाने का कहा किन्तु वह असफल रहा। तब सिरोही राज्य की सेना व मेवाड भील कोर ने वालोरिया गाव मे सैनिक कार्यवाही की। गाव का अधिकाश भाग जला दिया गया व 11 भील और गरासिए मार डाले गए[91] राज्य मे भूला और नयावास के मुखिया तथा गाववासियो को यह चेतावनी दी कि यदि वे एकी खत्म नही करते है तथा राजस्व सदा की तरह नही देते हैं तो उनके गाव को जला दिया जायेगा किन्तु गाव के लोगो ने उत्तर दिया कि न तो वे एकी तोडेंगे और नही जितना राजस्व उन्होने तय किया है, उससे एक पाई भी अधिक राजस्व देंगे। उनके इस जवाब पर राज्य ने उनके विरुद्ध 13 मई 1922 को सैनिक कार्यवाही की तथा गाव के अधिकाश झोपडे जला दिए गए।[92]

राजस्थान सेवा सघ ने इसे गम्भीर घटना माना और उसन रामनारायण चौधरी तथा सत्यभक्त को घटना की जाच पडताल करने तथा रिपोट देने को कहा। उन्होने अपनी रिपोट 'सिरोही राज्य मे दूसरी भील दुघटना' के नाम से प्रकाशित की जिसमे उन्होने भूला और वालोरिया गाव के नुकसान का आकलन किया। राजस्थान सेवा सघ की रिपोर्ट के अनुसार 640 भीलो के घर राख कर दिए गए। 29 भील मारे गए व अनेक घायल हुए। लगभग 90 हजार की सम्पत्ति या तो लूट ली गई या जला दी गई। रामनारायण चौधरी ने लिखा कि भील और गरासियो का कसूर सिर्फ इतना था कि उन्होने सरकारी लगान तब तक न देने को कहा जब तक उन पर से गैर कानूनी बेगार व अन्य कर न हटा लिए जाय।

सघ की सूचना को सही माना जाय तो 325 परिवार के 1800 स्त्री पुरुष मारे गये थे, 640 घर या तो जला दिए गए थे या भूमिसात कर दिए गए थे, सैंकडो मन अनाज नष्ट कर दिया गया था, 600 गाडिया नष्ट कर दी गई 100 पशु या तो मार दिए गए थे अथवा साथ मे ले जाये गए थे और करीब

96 हजार रुपये की सम्पति नष्ट कर दी गई थी[93] भील-दुर्घटना ने लोगो को जागरुक बना दिया और उन्हे अनेक राजनीतिक, अधिकारों के बारे मे जगा दिया।

राज्य की इस कार्यवाही से डर कर भूला, नयावास, वालोरिया और आस-पास के गाँवो के मुखिया राज्य के मुख्यमन्त्री से मिले और उनकी उपस्थिति मे एकी तोडने की प्रार्थना की। एकी सरकार को आश्वस्त करने के लिये तोडी गई कि वे भविष्य मे राज्य के विरुद्ध कोई कार्यवाही नही करेंगे। सिरोही के महाराव स्वय रोहिडा गए और भूला, वालोरिया, नयावास के कृषको मे स्वय मिले, उनके कष्ट सुने तथा उन्हे कुछ रियायतें प्रदान की जिसमे मुख्य इस प्रकार है।[94]

1 सभी विद्रोहियो को आम माफी प्रदान की गई।
2 उन कृषको को लगान चुकाने से मुक्त कर दिया गया जिनके घर जल गये थे।
3 खरीफ फसल का लगान उन नाबालिग पुत्रो से नही वसूल किया जायेगा जिनके पिता मारे गए थे।
4 खरीफ फसल पर अलग से सूकडी लाग वसूल नही की जायेगी।
5 स्वय की झौपडिया बनाने के लिये भीलो और गरासियो को जगल से लकडी व घास लाने की अनुमति दी गई।
6 चार व्यक्तियो की एक समिति बनाई गई जिसमे एक भील, एक गरासिया एक महाजन व एक ब्राह्मण नियुक्त किया गया जो कि चोरी गए पशुओ के बारे मे विचार करते थे।

इस प्रकार भीलो और गरासियो द्वारा प्रारभ किया गया आदोलन कुछ समय के लिये दब गया। मोतीलाल तेजावत ने यह जानकर कि भील और गरासियो की एकता कमजोर पड गई है, 1923 मे पोसीना और सिरोही के भीलो व गरासियो मे नया एकी आदोलन प्रारभ किया। उन्होने आदोलन का नेतृत्व देलवाडा के निकट छोछर से किया[95] ऐसा प्रतीत होता है कि पोसीना के मुखिया ने ईडर राज्य के प्रजामडल से सम्पर्क किया। ईडर प्रजामडल भी भील आदोलन मे रुचि रखने लगा और इसने भीलो को प्रजामडल का सदस्य बनने के लिये समझाया। इस विषय मे वे मोतीलाल की सेवाए भी लेना चाहते थे।[96] उनकी इस कार्यवाही ने देशी रियासतो व ब्रिटिश सरकार को नाराज कर दिया। महीकाठा के पोलिटिकल एजेंट, मेवाड महाराणा तथा बबई राज्य की पुलिस

उन्हे गिरफ्तार करने का प्रयास करने लगी, जबकि मोतीलाल का यह कहना था कि उसने कोई अपराध नही किया है। वह तो केवल भीलो के सामाजिक और धार्मिक उत्थान के लिये काय कर रहा है। राज्य कमचारी स्वय भ्रष्ट है, इसलिये वे उन्हे गिरफ्तार करना चाहते हैं। उन्होने ए जी जी से प्राथना की कि उन्हे सत्याग्रह आश्रम जाने दिया जाय। किंतु बबई और ईडर सरकार ने इस बात का कडा विरोध किया कि तेजावत को स्वतनता पूर्वक घूमने दिया जाय[97]। अत उनकी गिरफ्तारी के वारट जारी कर दिए गए और ईडर के खेडब्रह्मा ब्रह्माजी के मदिर से उन्हे गिरफ्तार कर लिया जहा वह भीलो की एक सभा को सबोधित कर रहे थे[98]। उसे मेवाड राज्य के सुपर्द कर दिया गया। (जुलाई 1929) मेवाड राज्य ने उसे केन्द्रीय कारागार मे 9 वष तक बिना किसी न्यायिक जाच व बिना किसी अभियोग के गिरफ्तार रखा[99]। उन्हे छुडाने के कई प्रयास किए गए किंतु कोई फल नही निकला।

3 नवम्बर 1935 को मोतीलाल तेजावत को छुडाने के पुन प्रयास शुरू किए गए। मणीलाल कोठारी, महाराणा मेवाड व रेजीडेंट कनल बैंथम से मिले व मोतीलाल को छुडाने की प्राथना की[100] किंतु मेवाड राज्य उन्हे बिना शर्त रिहा करने को तैयार नही था। राज्य चाहता था कि मोतीलाल वचन दे कि वे किसी भी राज्य विरोधी गतिविधियो मे भाग नही लेंगे, महाराणा की अनुमति के बिना मेवाड राज्य नही छोडेंगे।

4 यदि राज्य उन्ह कोई नौकरी प्रदान करता है तो वे उसे स्वीकार करेंगे।

5 उन्हे उन लोगो के विरुद्ध मुकदमा चलाने की अनुमति दी जाय जिन्होंने उन पर झूठे आरोप लगाए हैं।

25 अप्रेल 1936 को मोतीलाल तेजावत को केन्द्रीय कारागार से रिहा कर दिया गया। जेल अधीक्षक ने उन्ह ये प्रमाण पत्र प्रदान किया कि वे 6 अगस्त 1929 से 23 अप्रेल 1936 तक राजनीतिक बदी थे तथा जेल मे उनका व्यवहार एव चरित्र सतोषजनक था।[103]

1942 मे भारत छोडो आदोलन के दौरान उन्ह पुन गिरफ्तार कर लिया गया। करीब डेढ वर्ष तक उन्हे जेल मे बद रखा गया। 1946 मे मोतीलाल ने महानिरीक्षक को सूचित किया कि भीलो मे गौवध और चोरी की घटनाए बहुत बढ गई ह इसलिये वे उनके मध्य रहना चाहते है और उनका हृदय परिवर्तन करना चाहते हैं किन्तु मेवाड पुलिस ने उन्ह उदयपुर छोडने की अनुमति नही दी तथा बाद मे उन्हे गिरफ्तार कर लिया[104]। 3 फरवरी 1947 को उन्ह पुन रिहा किया गया। उदयपुर की जनता ने उनका भावभीना स्वागत किया।[105]

वनवासी सेवा सघ

भारत मे ब्रिटिश राज्य की स्थापना के साथ ही ईसाई सगठन के पादरी भी आ गए थे। उन्होने बासवाडा, डूगरपुर, सिरोही आदि राज्यो मे जहा भीलो की सख्या अधिक थी, गिर्जाघर स्थापित किए तथा उन लोगो के मध्य काय करना प्रारम्भ किया जो बहुत गरीब व पिछडे हुए थे। उन्होने भीलो की अकाल व प्राकृतिक दुर्घटनाओ के समय नकद व जिन्स मे सहायता करनी प्रारम्भ की और सरलता से उनका धर्म परिवर्तन करना प्रारम्भ किया। धम प्रसार के लिये जगह-जगह गिरजाघर व स्कूल खोले गए। उनकी इन कायवाहियो से जनता मे असतोष पैदा होने लगा। परिणाम स्वरूप एजीजी ने धर्म परिवर्तन की पादरियो की कार्यवाही को बद कर दिया।[106]

दूसरा मुख्य सगठन वनवासी सेवा सघ था। इसकी स्थापना मुख्यत भीलो के कल्याण के लिये की गई थी ताकि उनमे सामाजिक और राजनीतिक चेतना जागृत हो। सघ अपने उद्देश्य और कार्यकलापो मे सफल रहा। बडी सख्या मे भीलो ने मदिरापान और अफीम न खाने की सौगध खाई[107]। 1940 मे ...पुर के वनवासी सेवा सघ ने एक प्रदशनी आयोजित की जिसमे अनेक भील

उन्हे गिरफ्तार करने का प्रयास करने लगी, जबकि मोतीलाल का यह कहना था कि उसने कोई अपराध नही किया है। वह तो केवल भीलो के सामाजिक और धार्मिक उत्थान के लिये काय कर रहा है। राज्य कर्मचारी स्वय भ्रष्ट है, इसलिये वे उन्ह गिरफ्तार करना चाहते हैं। उन्होने ए जी जी से प्राथना की कि उन्हे सत्याग्रह आश्रम जाने दिया जाय। किंतु बबई और ईडर सरकार ने इस बात का कडा विरोध किया कि तेजावत को स्वतत्रता पूर्वक घूमने दिया जाय[97]। अत उनकी गिरफ्तारी के वारट जारी कर दिए गए और ईडर के खेडब्रह्मा ब्रह्माजी के मदिर से उन्हे गिरफ्तार कर लिया जहा वह भीलो की एक सभा को सबोधित कर रहे थे[98]। उसे मेवाड राज्य के सुपर्द कर दिया गया। (जुलाई 1929) मेवाड राज्य ने उसे केन्द्रीय कारागार मे 9 वष तक बिना किसी न्यायिक जाच व बिना किसी अभियोग के गिरफ्तार रखा[99]। उन्हे छुडाने के कई प्रयास किए गए किंतु कोई फल नही निकला।

3 नवम्बर 1935 को मोतीलाल तेजावत को छुडाने के पुन प्रयास शुरु किए गए। मणीलाल कोठारी, महाराणा मेवाड व रेजीडेंट कनल बैंथम से मिले व मोतीलाल को छुडाने की प्राथना की[100] किंतु मेवाड राज्य उन्ह बिना शर्त रिहा करने को तैयार नही था। राज्य चाहता था कि मोतीलाल वचन दे कि वे किसी भी राज्य विरोधी गतिविधियो मे भाग नही लेगे, महाराणा की अनुमति के बिना मेवाड राज्य नही छोडेंगे।

मणिलाल कोठारी मोतीलाल से मिले व उन्हे महाराणा की शर्तों के बारे मे बताया। मोतीलाल ने सशत रिहा होने से इकार कर दिया। मेवाड राज्य सरकार ने पुन उन्हे सशर्त रिहा करने की ही शत रखी, तब मोतीलाल ने भी अपनी दो शर्ते राज्य के सामने रखी —

1 यह प्रमाणित किया जाय कि वो किसी अपराध के लिये दोषी नही है।
2 उन्हे उन लोगो के विरुद्ध मुकदमा चलाने का अधिकार होगा जिन्होने उनके विरुद्ध षडयत्र रचा और उन्हे बदनाम करने की साजिश की[101]। राज्य सरकार ने उनकी यह मार्गे स्वीकार कर ली और मोतीलाल ने भी यह लिख कर दिया कि[102]—

1 वो राज्य की अनुमति के बिना मेवाड नही छोडेंगे।
2 उन्होने राज्य के विरुद्ध कुछ नही किया है और नही वे आगे ऐसा करेंगे।
3 उन्ह यह प्रमाण पत्र दिया जाय कि वे निर्दोष थे और जेल मे उनका चरित्र अच्छा रहा।

4 यदि राज्य उन्हे कोई नौकरी प्रदान करता है तो वे उसे स्वीकार करेंगे ।

5 उन्हे उन लोगो के विरुद्ध मुकदमा चलाने की अनुमति दी जाय जिन्होने उन पर झूठे आरोप लगाए हैं ।

25 अप्रेल 1936 को मोतीलाल तेजावत को केन्द्रीय कारागार से रिहा कर दिया गया । जेल अधीक्षक ने उन्हे ये प्रमाण पत्र प्रदान किया कि वे 6 अगस्त 1929 से 23 अप्रेल 1936 तक राजनीतिक बदी थे तथा जेल मे उनका व्यवहार एव चरित्र सतोपजनक था ।[103]

1942 मे भारत छोडो आदोलन के दौरान उन्हे पुन गिरफ्तार कर लिया गया । करीब डेढ वर्ष तक उन्हे जेल मे वद रखा गया । 1946 मे मोतीलाल ने महानिरीक्षक को सूचित किया कि भीलो मे गौवध और चोरी की घटनाए वहुत वढ गई है इसलिये वे उनके मध्य रहना चाहते हैं और उनका हृदय परिवतन करना चाहते है किन्तु मेवाड पुलिस ने उन्हे उदयपुर छोडने की अनुमति नही दी तथा वाद मे उन्हे गिरफ्तार कर लिया[104] । 3 फरवरी 1947 को उन्हे पुन रिहा किया गया । उदयपुर की जनता ने उनका भावभीना स्वागत किया ।[105]

वनवासी सेवा सघ

भारत मे ब्रिटिश राज्य की स्थापना के साथ ही ईसाई सगठन के पादरी भी आ गए थे । उन्होंने वासवाडा, डूगरपुर, सिरोही आदि राज्यो मे जहा भीलो की सख्या अधिक थी, गिर्जाघर स्थापित किए तथा उन लोगो के मध्य कार्य करना प्रारम्भ किया जो वहुत गरीव व पिछडे हुए थे । उन्होने भीलो को अकाल व प्राकृतिक दुर्घटनाओ के समय नकद व जिन्स मे सहायता करनी प्रारम्भ की और सरलता से उनका धम परिवतन करना प्रारम्भ किया । धर्म प्रसार के लिये जगह-जगह गिरजाघर व स्कूल खोले गए । उनकी इन कायवाहियो से जनता मे असतोप पैदा होने लगा । परिणाम स्वरूप ए जी जी ने धम परिवतन की पादरियो की कायवाही को वद कर दिया ।[106]

दूसरा मुख्य सगठन वनवासी सेवा सघ था । इसकी स्थापना मुख्यत भीलों के कल्याण के लिये की गई थी ताकि उनमे सामाजिक और राजनीति चेतना जागृत हो । सघ अपने उद्देश्य और कायकलापो मे सफल रहा । वडी सख्या मे भीलो ने मदिरापान और अफीम न खाने की सौगध खाई[107] । 1940 मे डूगरपुर के वनवासी सेवा सघ ने एक प्रदर्शनी आयोजित की जिसमे अनेक भील

लडके और लडकियो ने देश की सामाजिक और आर्थिक प्रगति की झांकिया प्रस्तुत की।

भील आदोलन—एक नजर

भीलो मे जो चेतना गुरु गोविन्द व मोतीलाल तेजावत ने जगाई, उससे वे अपने अधिकारो के लिए बराबर सघर्ष करते रहे। भीलो की सम्पति लूटी व नष्ट की गई। उनकी, निमम हत्यायें की गई व उन्हे अनेको कष्ट दिये गये। फिर भी वे घबराए नही। भारत के स्वतत्र होने तक उनमे नाममात्र की शिक्षा का प्रचार हुआ व उनको नाम मात्र के भूमि अधिकार मिले। इसी के फलस्वरूप उन्हे अभी तक वनवासी अनुसूचित जनजाति का माना जा रहा है। पिछले चालीस वर्षों मे भी उनका कोई विशेष विकास नही हुआ है। यह देश का दुर्भाग्य ही है।

टिप्पणिया—

1 कुछ इतिहासकारो के अनुसार भीलो की उत्पति द्रविड शब्द बील विल्लु या भील से हुई है जिसका अर्थ धनुष है और धनुष भीलो का प्रमुख हथियार है। कुछ विद्वानो का अनुमान है कि यह सस्कृत शब्द है जिसका अर्थ है बेधना या मारना। इसकिन राजपूताना गजेटियर, मेवाड रेजीडेंसी 1908 जिल्द द्वितीय ए पृ 227

2 एथावन ट्राइब्स एड कास्ट ऑफ बोम्ब, वोल्यूम I

3 मनु-सस्कृत टक्स्ट, वोल्यूम प्रथम, पृ 481।

4 वदिक इडक्स II निषाद

5 राजपूताना गजेटियर, पेज 227

6 इस सदर्भ मे कर्नल टाड लिखते हैं कि किस प्रकार गुहा (सिसोदिया राजपूतो का आदि पुरूष) ने गुजरात स्थित ईडर का राज्य भीलो से ले लिया था। टाड एनाल्स एण्ड एटीक्वीटीज आफ राजस्थान जिल्द I पेज 184।

7 प्रतापगढ की पुरानी राजधानी।

8 मेवाड के कालियाबास भील पाल मे चुडल वध की घटना राजनतिक एव वदेशिक विभाग, जनवरी 1883 पृ 51-58 अ भारतीय राष्ट्रीय अभिलेखागार।

9 चार्ल्स एचीशन-ट्रीटीज एगेजमेंट्स एण्ड सनद भाग III पृष्ठ 2।

10 वही, भाग II पृष्ठ 6।

11 चार्ल्स एचीशन, ट्रीट्रीज, एगेजमेट एण्ड सनद भाग II, पृष्ठ 9।

12 वही भाग III, पृष्ठ 2।

13 चार्ल्स मैटकाफ का पोलिटिकल एजेंट मेवाड के नाम पत्र 13 मई 1827।

14 फौरन पोलिटिकल 8 जून 1827, 40

15 वही।

16 डूंगरपुर राज्य का संक्षिप्त इतिहास, पृ 108 ।
17 फौरेन, 5 मई, 1826, पृ 1-4 ।
18 वही ।
19 वही ।
20 फौरेन, 19 फरवरी 1827, पेज 17-18 ।
21 ब्लैक का उत्तराधिकारी ।
22 जे कोलब्रुक का पत्र, 5 जून 1828 ।
23 सचिव, भारत सरकार का जे कोलब्रुक को पत्र 8 अगस्त 1828 ।
24 मेवाड़ रजीडेंसी उदयपुर फाइल 1, 1827, जे ब्रुक सहायक पोलिटिकल एजेंट मेवाड का एस पी लोरेंस, पोलिटिकल एजेंट मेवाड को पत्र, 6 दिसम्बर 1856, 56 ।
25 ब्रुक्स मेवाड का इतिहास, पृष्ठ 78 ।
26 मेवाड प्रेसीज प्रथम भाग 10 परा 10 ।
27 फौरेन कन्सलटेशन, 7 अगस्त 1837, 70 71 ।
28 वही, 8 अगस्त 1838, 63
29 वही, 28 मई 1841, 44 45 ।
30 फौरेन इंटरनल ए, फरवरी 1904, 51-56 ।
31 वही, 23 नवम्बर 1842, 17-19 ।
32 राजपूताना म गवनर जनरल के एजेंट ।
33 सदरलैंड का सचिव विदेश विभाग, भारत सरकार को पत्र, 12 नवम्बर 1843 (मुख्य आयुक्त, अजमेर मेवाड रिकाड)
34 श्यामलदास, वीर विनोद, पृष्ठ 2192 ।
35 मेवाड भीलकार के अधीक्षक एव कायवाहक पोलिटिकल अधीक्षक ।
36 मेजर मैक्सन का मेवाड महाराणा शभूसिंह को 20 अप्रेल 1868 का पत्र बख्शीखाना, उदयपुर ।
37 वही ।
38 श्यामलदास, वीर विनोद, पृष्ठ 2192 ।
39 भारतीय राष्ट्रीय अभिलेखागार, विदेश विभाग, पालिटिकल अ प्रोसीडिंग्स, 1881, क्रमांक 25-37 ।
40 फौरेन एण्ड पोलिटिकल ए अप्रेल 1881, नम्बर 25 39, एन ए आई ।
41 वही, 1881, 313-34 ।
42 श्यामलदास वीर विनोद, पृष्ठ 2220 27 ।
43 फौरेन एण्ड पोलिटिकल ए, अगस्त 1881, पृष्ठ 313 34 ।
44 वही ।
45 फौरेन पोलिटिकल अ अप्रेल 1881, 137 79 ।
46 श्यामलदास, वीर विनोद, पृष्ठ स 2220 27 ।

47 कर्नल [illegible] का 18 अप्रैल 1881 का ए जी जी को पत्र, फोरेन पॉलिटिकल ए अप्रैल 1881, क्रमांक 137 79, राष्ट्रीय अभिलेखागार, नई दिल्ली।
48 फोरेन, पॉलिटिकल ए, अगस्त 1881, 313 34
49 भारतीय राष्ट्रीय अभिलेखागार वैदेशिक राजनैतिक विभाग, प्रोसीडिंग्स अप्रैल 1916, क्रमांक 38 47, पृष्ठ 11।
50 वही।
51 (अ) वही, प्रोसीडिंग्स, अगस्त 1914 क्रमांक 18 22।
(आ) जहूरखां मेहर, राजस्थान में आजादी रो आंदोलन, पृ 81।
52 (अ) शोध पत्रिका, भाग 9, अंक 2, मार्च 2014 (1957) पृष्ठ 67।
(आ) जहूरखां मेहर, मजुन आठी आन, पृ 120।
53 भारतीय राष्ट्रीय अभिलेखागार, नई दिल्ली वैदेशिक एवं राजनैतिक विभाग, प्रोसीडिंग्स मार्च 1914, क्रमांक 8, पृष्ठ 29 67।
54 वही, इंटरनल ए प्रोसीडिंग्स अप्रैल 1916, क्रमांक 38 47।
55 वही।
56 वही पत्र नम्बर 3342, आबू, दिनांक 17 सितम्बर 1914।
57 भारतीय राष्ट्रीय अभिलेखागार वैदेशिक एवं राजनैतिक विभाग, इंटरनल प्रोसीडिंग्स मार्च 1914 क्रमांक 8 67।
58 वही पृष्ठ 33 34।
59 सुमनेश जोशी, राजस्थान में स्वतन्त्रता संग्राम के सेनानी पृष्ठ 6।
60 भार रा अभि ए रा वि इंटरनल ए प्रोसीडिंग्स अगस्त 1914, क्रमांक 18 22, पृष्ठ 3 4।
61 वही प्रोसीडिंग्स, मार्च 1914, क्रमांक 8 67, पृष्ठ 29।
62 वही, अगस्त 1914, क्रमांक 18 522, पृष्ठ 4।
63 इंटरनल प्रोसीडिंग्स, वैदेशिक एवं राजनैतिक विभाग, मार्च 1914, क्रमांक 8 67।
64 वही, अगस्त 1914, क्रमांक 18-82।
65 भा रा अभि इंटरनल प्रोसीडिंग्स मार्च 1914 क्रमांक 8 67।
66 सुमनेश जोशी, राजस्थान के स्वतन्त्रता सेनानी पृष्ठ 7।
67 (अ) नवीनतम शोध से यह प्रकट होता है कि करीब 3000 भील मारे गए थे और यह हत्याकांड जलियांवाला बाग से किसी भी प्रकार कम नहीं था।
(आ) जहूरखां मेहर, राजस्थान में आजादी रो आंदोलन, पृ 83।
68 (अ) भा रा अभि अ प्रोसीडिंग्स अगस्त 1914 क्रमांक 8 22।
(आ) जहूरखां मेहर, मजुन आळी आत, पृ 124।
69 उदयपुर रेजीडेंसी जागीर रिकार्ड फाइल नं 19 ब नं 60 1917, ए डी आर एस ए बी,।
70 वही।
71 वही, वैदेशिक एवं राजनैतिक विभाग फाइल नं 1276 प्रथम।
72 26 जून 1921 को खेरवाड़ा के पोलिटिकल सुप्रीटेंडेंट का मेवाड़ रेजीडेंट को पत्र, उदयपुर रेजीडेंट जागीर रिकार्ड फाइल नम्बर 91 बस्ता नम्बर 65, 192।
73 मादड़ी के रावत की दिनांक 6 जुलाई 1921 की पोलिटिकल सुप्रीटेंडेंट खेरवाड़ा की रिपोर्ट, उदयपुर रेजीडेंसी जागीर रिकार्ड फाइल नम्बर 91 बस्ता नं 65, 1921।

74 (अ) कामदार जवास की दिनाक 13 जुलाई 1921 की पोलिटिकल सुप्रिन्टडन्ट खेरवाडा को रिपाट उदयपुर रेजीडेन्सी जागीर रिकाड, फाइल नम्बर 91 बस्ता न 65, 1921 एच डी आर एस ए बी ।

(आ) जहूरखा मेहर, राजस्थानी म आजादी री आदालन, पृ 84 ।

75 राजनतिक एव वैदेशिक विभाग, फाइल नम्बर 428 पी (गोपीनाथ) 1923 भा रा अभि ।

76 मेवाड वकील की दिनाक 25 अगस्त एव 27 अगस्त 1921 की पोलिटिकल सुप्रीडेन्ट, खेरवाडा को रिपाट, उदयपुर जागीर रिकाड, फाइल न 91, बस्ता न 65, 1921 ।

77 मादडी मे रावत रणजीत सिंह का दिनाक 8 सितम्बर 1921 का पोलिटिकल सुप्रीटेंडेन्ट खेरवाडा का पत्र, उदयपुर रेजीडन्सी जागीर रिकाड फाइल नम्बर 91 बस्ता नम्बर 65, 1921 ।

78 31 अक्टूबर 1921 तक का पाक्षिक स्मरण पत्र क्रमाक 55, व रा विभाग फाइल न 428, (गोपनीय) 1921, भा रा अभि ।

79 15 नवम्बर 1921 तक का पाक्षिक स्मरण पत्र न 56, व रा विभाग, फाइल न 428, (गापनीय) 191, भा रा अभि ।

80 ईडर राज्य मे महाराज कुमार का पोलिटिकल एजेन्ट, महाकाठा का गोपनीय पत्र न 263 दिनाक 20 दिसम्बर 1921, उदयपुर रेजीडन्सी रिकाड, फाइल न 87, 1921-22 आर एस ए बी ।

81 22 दिसम्बर 1921 का पानडवा के राणा जूडा तथा ओधना के राव का मेवाड रेजीडेन्ट का पत्र उदयपुर रेजीडेन्सी जागीर रिकाड फाइल न 87, बस्ता न 65 1921-22 ।

82 सहायक पोलिटिकल अधीक्षक कोटडा का दिनाक 23 दिसम्बर 1921 का पोलिटिकल अधीक्षक खेरवाडा का पत्र, उदयपुर रेजीडन्सी जागीर रिकाड फाइल न 87, बस्ता न 65 1921 ।

83 दिनाक 31 दिसम्बर 1921 अ मेवाड रजीडेंट का पोलिटिकल सुप्रीटेंडट खेरवाडा को पत्र, उदयपुर रेजीडेंसी जागीर रिकाड, फाइल न 87, बस्ता न 65, 1921 22 ।

84 एजेंट गवनर जनरल राजपूताना का दिनाक 7 माच 1922 का मणिलाल काठारी को 1922 का पत्र गोपनीय रिकाड, फाइल नम्बर 125, क्रमाक 13, 1922 ।

85 दिनाक 31 जनवरी 1922 का पाक्षिक ममोरडम प 61, युद्ध होम पौल्टिक डिपाटमेट, फाइल न 18, 1922 भा रा अभि सिरोही सदर आफिस रिकाड, फाइल न 367 1921-22 ।

86 इश्तिहार न 250 दिनाक 28 जनवरी 1922 सिरोही सदर कार्यालय रिकाड, फाइल न 367, 1921-22 ।

87 सिराही सदर कार्यालय रिकाड, फाइल न 367, 1921 22 ।

88 पुलिस महानिरीक्षक श्री एम आर कोटावाला का दिनाक 5 फरवरी 1922 को पोलिटिकल मेम्बर जोधपुर राज्य परिषद का गोपनीय पत्र, गोपनीय रिकाड फाइल न 106, 1922 ।

89 23 माच 1922 का रोहीडा के तहसीलदार का मुख्यमत्री सिरोही को दिया गया तार, सिरोही सदर कार्यालय रिकाड फाइल न 367, 1921-22।
90 मजिस्ट्रेट आबूरोड का दिनाक 24 माच, 1922 का मुख्यमत्री सिरोही को पत्र सिरोही सदर कार्यालय रिकाड फाइल न 367 ए 1921-22।
91 प्रेस विज्ञप्ति शिमला, दिनाक 7 मई 1922 भारत सरकार, वैदेशिक एव राजनतिक विभाग, फाइल न 428 (गोपनीय) 1923 भा रा अभि ।
92 भारत सरकार की 7 मई 1922 की प्रेस विज्ञप्ति, वैदेशिक एव राजनैतिक विभाग, फाइल न 428, (गोपनीय) 1923, भा रा अभि ।
93 लोगो की मृत्यु के बारे मे भिन्न-भिन्न विचार हैं। प्रिचड के अनुसार 50 व्यक्ति मारे गए तथा 50 घायल हुए। दुर्भाग्यवश राजस्थान सेवा सघ की रिपोर्ट खो गई।
94 सिरोही के मुख्यमत्री का 25 मई 1922 का पत्र (पत्र न 9840) का गवनर जनरल एजेंट राजपूताना का पत्र वदेशिक एव राजनतिक विभाग फाइल न 428 पी (गोपनीय) 1923, भा रा अभि ।
95 खान बहादुर फ़ीरोज एस मास्टर अध्यक्ष ईडर राज्य परिषद का 10 जून 1929 (पत्र न 821 का 1928 29 गोपनीय पत्र) महीकाठा के पोलिटिकल एजेट को, भा रा अभि ।
96 मोतीलाल तेजावत के पास से गिरफ्तारी के समय मिला पत्र जिसमे दिनाक नही है फाइल न 276, 1929, वदेशिक एव राजनतिक विभाग, भा रा अभि ।
97 बम्बई सरकार का भारत सरकार को 7 जून 1925 का पत्र (पत्र न 29 बी) वदेशिक एव राजनतिक विभाग, फाइन न 185 पी 1925।
98 ईडर राज्य परिषद के अध्यक्ष का 1928 29 का पत्र न 821 (गोपनीय) महीकाठा के पोलिटिकल एजेंट को पत्र भा रा अभि ।
99 राजस्थान दिनाक 18 नवम्बर 1955।
100 राजस्थान दिनाक 18 नवम्बर 1955।
101 राजस्थान दिनाक 4 मई 1936।
102 वही दिनाक 12 मई 1936।
103 राजस्थान दिनाक 4 मई 1936 मोतीलाल की रिहाई मे डा सगनानी ने मध्यस्थ की भूमिका निभाई।
104 नव जीवन, दिनाक 18 फरवरी 1946।
105 वही, 3 फरवरी 1948।
106 वदेशिक एव राजनतिक, एजेंट ग ज के नोट फाइल नम्बर 233 पी (5) 19:6 भा रा अभि ।
107 केला, भगवानदास देशी राज्यो म शासन, अध्याय 47, पृष्ठ 382 83।

जहूरखा मेहर

जन्म 20 जनवरी 1941, सिवान्चो गेट, जोधपुर

प्रकाशित पुस्तकें

राजस्थानी संस्कृति का चितराम (1981)
घर मजला घर कोसां (1984)
राजस्थान में आजादी रो आन्दोलन (1986)
टाळवा निबन्ध (1986)
ऊजळ पख (1990)
अर्जुन माळी भाख (1990)
राजस्थान में स्वतन्त्रता संघर्ष (1991)

राजस्थान के इतिहास, साहित्य एवं संस्कृति से सम्बन्धित दो सौ से अधिक निबन्ध प्रकाशित। एक दर्जन से अधिक शोध जर्नलों, स्मारिकाओं तथा अभिनन्दन ग्रन्थों का सम्पादन। एक सौ से अधिक वार्ताएँ विभिन्न आकाशवाणी केन्द्रों से प्रसारित।

सम्मान-पुरस्कार

* महेन्द्र जाजोदिया पुरस्कार, 1981
  राजस्थान रत्नाकर, नई दिल्ली
* अकादमी पुरस्कार, 1981-82
  राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर
* राजस्थानी ग्रेजुएट्स नेशनल सर्विस एसोसियेसन, बम्बई के रजत जयन्ती समारोह (30 नवम्बर, 1982) के अवसर पर भाव, भाषा व कथ्य की दृष्टि से सर्वश्रेष्ठ लेखन पुरस्कार
* पृथ्वीराज राठौड़ पुरस्कार 1982-83
  राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर
* रामेश्वर टाँटिया पुरस्कार, 1986
  भारतीय भाषा परिषद, कलकत्ता
* जिला प्रशासन, लायन्स क्लब, राटरी क्लब, युवा साहित्यकार परिषद आदि द्वारा सम्मानित-पुरस्कृत

साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, राजस्थानी भाषा, साहित्य एवं संस्कृति अकादमी, बीकानेर (दो सत्र तक सदस्य), जगदीशसिंह गहलोत शोध संस्थान, अमृतम भारतीय विद्या शोध संस्थान व अनेक ऐतिहासिक साहित्यिक संस्थाओं की सदस्यता।

सम्प्रति रीडर, इतिहास विभाग
जोधपुर विश्वविद्यालय, जोधपुर